॥ श्रीगणेशायनमः ॥

# श्रीगणेश पुराण

का—

## भाषानुवाद [ प्रथम भाग ]

अनुवादकर्ता—

**पूर्णचंद्र कासलीवाल,**

जयपुर ।



प्रथमवार १००० ] सन् १९३७ ई० [ मूल्य ॥) आना

* श्रीमन् महागणाधिपतये नमः *

# श्रीगणेशपुराण

का

## भाषानुवाद [ प्रथम भाग ]

जिसको:—

सुन्शी धन्नालाल फौजदार के पुत्र पूर्णचन्द्र कासलीवाल रिटायर्ड नाज़िम जयपुर

निवासी ने

प्रेमी भक्तों के पठन पाठनार्थ सरल भाषा में अनुवाद करके

सुन्शी कन्हैयालाल 'माथुर' बसवा निवासी के प्रबन्ध से छपवाया ।

[ सितम्बर सन् १९३७ ई०

प्रथमवार १००० प्रति ]

श्रीगणेशायनमः
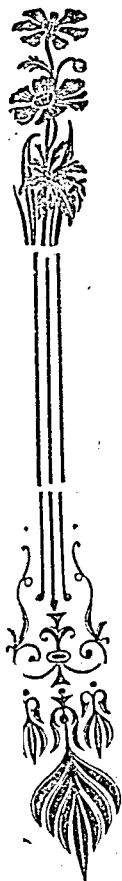
# श्री गणेशपुराण का भाषानुवाद—

## भूमिका

यह ग्रन्थ संस्कृत भाषा में श्री वेदव्यासजी का बनाया हुआ उपपुराण है। प्रायः पुराणादि की परिपाटी यह रही है, कि कोई प्रश्न करता है। उसके उत्तर में ग्रन्थकार अथवा कोई अन्य विख्यात कथावाचक उस कथा को कहता है, ध्येय यह होता है, कि जिस देवता के विषय पुराण बनाया गया। उसकी उपासना और उसके कार्य्यों का वर्णन किया जावे। जो जो आध्यात्मिक अथवा ऐहिक लाभ उपासकों को पहुंचे हों उनका वर्णन करते हुए देवता विशेष का ईश्वर से सादृश बताते हुए उसकी महिमा का वर्णन करके भक्त के हृदय में भक्ति का संचार करना, इनका मुख्य उद्देश्य होता है। राक्षसादि द्वारा जो लोगों को दुःख पहुंचा, उसके कारण उनका नाश कराना पाप कर्म्मादि के बुरे परिणाम प्रगट में ऐसे दिखाना जैसे कोई अपनी आँखों से देख रहा है, इससे जनता पर कथा का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़े, यह ही प्राचीन शैली थी।

आज कल की नई रोशनी के समय में चाहे यह बातें भद्दी जँचें, परन्तु अभी तक हिन्दुओं में भक्तों का अभाव नहीं और जहाँ भक्ति है वहाँ ही सिद्धि है। कलियुग में चंडी और विनायक में सिद्धि विशेष है। प्रायः समस्त भारतवर्ष के हिन्दू मात्र वे चाहे जिस देवता के उपासक हों, श्री गणेशजी का पूजन अवश्य करते हैं और उनका पूजन सब धर्म्म कार्य्यों में प्रथम किया जाता है। मेरे देखने में अभी इस श्रीगणेशपुराण का भाषानुवाद नहीं आया। अतएव हिन्दी भाषा के जानने वालों के निमित्त यह अनुवाद उपस्थित करता हूं। इस में कहीं कहीं उर्दू शब्दों का उपयोग किया गया है। आशा है, कि पाठक क्षमा करेंगे। मूलपुराण में दो खंड हैं। एक उपासना खंड दूसरा क्रीड़ा खंड, प्रथम के ९२ अध्याय और द्वितीय के १५५ अध्याय हैं, पाठकों के सुभीते के निमित्त इस सम्पूर्ण खंड को आठ भागों में विभक्त किया है। प्रथम भाग में ४६ अध्याय रक्खे हैं। जहाँ जहाँ श्री गणेशजी की स्तुति अथवा ध्यान मुझे रोचक जँचे, उन्हें मूल संस्कृत में देकर उनका अनुवाद नीचे दे दिया है। उपासना खंड के ४५ अध्यायों का संशोधन स्वर्गवासी पंडित ग्यासीलाल जी, पुजारी श्री गणेशजी मोती-डूंगरी ने और बाकी का पण्डित जगदीशजी आचार्य, अध्यक्ष-संस्कृत पाठशाला

फतेहपुर शेखावाटी ने किया है। मेरा परिचय पण्डित जगदीशजी से नहीं था, मेरे परमपूज्य गुरुवर श्री वीरेश्वर जी शास्त्री द्रविड, भूत पूर्व संस्कृत प्रोफेसर महाराजा कालेज जयपुर की कृपा से उनकी आज्ञा पालन करते हुये किया है। मैं इन दोनों ही महानुभावों का बड़ा कृतज्ञ हूँ। यद्यपि मैंने इस ग्रन्थ का अनुवाद और संशोधन तो करा रखा था, छपाने में विशेष प्रेरणा मेरे मित्र मु० कन्हैयालालजी कायस्थ, बसवा निवासी भूतपूर्व थानेदार ने की और जल्दी से जल्दी पं०पुरुषोत्तमदास मुरलीधर शर्मा, मालिक-हरीहर प्रेस, मथुरा से पत्र व्यवहार कराके इसका छपाना आरम्भ कर दिया। इन सब महाशयों के अतिरिक्त में विशेष कर ठाकुर साहब श्री सवाईसिंहजी ईश्वरदा और ठाकुर साहब श्री गोवर्द्धनसिंहजी भिलाय का भी कृतज्ञ हूं, कि उनकी सेवा करते हुए उनके यहाँ से वेतन पाकर इस कार्य्य के संपादन में खर्च कर सका।

भगवान् श्री गणेशजी इन महानुभावों का तथा श्रीमन् महाराजाधिराज,सरामदे राजहाय हिन्दुस्तान राज राजेश्वर **श्री सवाई मानसिंहजी** जी. सी. आई. ई, जयपुर नरेश, जिनका अन्न मेरे पिता पितामहने खाया और मैं खारहा हूँ। कल्याण करें, और उनके तथा पाठकों के हृदयों में भक्ति का संचार करें। हे सज्जन पाठको! मेरी त्रुटियों पर ध्यान न देकर जगदात्मा श्री गणेशजी का गुणानुवाद समझ कर इसको अपनावेंगे और मुझे कृतार्थ करेंगे।

विनीत—

**मुन्शी धन्नालालात्मज, पूर्णचन्द्र कासलीवाल,**

रिटायर्ड नाज़िम कोट क़ासिम।

* श्री गणेशायनमः *

शुभ मिती भाद्रपद शुक्ला चतुर्थी सं० १६६४ विक्रमीय

को

## श्रीमन्महागणपति के चरण कमलों

में

# सादर समर्पित !

[ त्वदीयं वस्तु गणेश तुभ्यमेव समर्पये ]

—पूर्णचंद्र।

# श्रीगणेशपुराण अनुवाद के प्रथम भाग की—

# ❁ विषय सूची ❁

| अध्याय नं० | कथा | विशेष विवरण | पृष्ठ नम्बर |
|---|---|---|---|

आश्रम तथा अन्य सबको पुत्र की तरह पाला था और बड़े-बड़े भयङ्कर शत्रुओं को भी बाणों से मारा था और सम्पूर्ण-पृथ्वी को अपने वशीभूत की, परमात्मा शिवजी की भली भाँति आराधना की थी। पहले मैंने इस शरीर से दुष्टों का साथ न कर चित्त को वश में रखकर अच्छी-अच्छी सुगन्धियों का सेवन किया था, वह मैं आज अत्यन्त मलिन दुर्गन्धवान होरहा हूँ, इस वास्ते मेरा जन्म वृथा है। मैं आप सब लोगों की आज्ञा से वन को जाऊँगा, मेरा जो हेमकण्ठ नामा पुत्र है वह बुद्धिमान और पराक्रमी है, उसका सारे राज्य के वास्ते अभिषेक करो और अपने पराक्रम से इसका पालन करे, अब मैं लोगों को कभी भी मुंह नहीं दिखाऊँगा। हे मुसाहिबो! अब मुझको राज्य से, स्त्रियों से, जीव से और लक्ष्मी से किसी से कुछ भी प्रयोजन नहीं है, वन में जाकर अपनाहित अर्थात् अपनी आत्मा का कल्याण करूँगा।

इतना कहकर राजा पृथ्वी पर गिर पड़ा जैसे कोई वृक्ष हवा से टूट कर गिर पड़ता है। राध, लोहू और ददोड़े आदि से उसका शरीर भरा हुआ था, इस पर मुसाहिबों ने और स्त्रियों ने अर्थात् रानियों ने बड़ा कोलाहल मचाया और थोड़ी देर के लिये लोगों में बड़ा भयङ्कर हाहाकार हुआ, कपड़ों से पोंछ कर हवा करके और आराम पहुंचाने वाली दवायें लगा कर और मंत्रादिक से उसको चेतना कराने लगे। जब राजा को होश आया [illegible] मुसाहिबों ने [illegible] विष[illegible] यह कहा:—

हे राजन्! आपकी कृपा से हम लोगों ने इन्द्र के समान बन कर ऐसा सुख भोगा है, जो सब लोगों को मिल नहीं सकता। अब आपके बिना कैसे रहें और शिकारी की भाँति कैसे जीवें? आपका एक मात्र पुत्र राज्य करे। खज़ाने में धन बहुत है। वह स्वयं बड़ा बलवान है और शत्रुओं को मारने वाला है। हम तो सब सुख छोड़कर आज आपके साथ ही वन को चलेंगे,

[illegible]धर्मा रानी जिसके एक मात्र वीर पति था, वन में राजा की सेवा करने [illegible] इच्छा से ऐसे बोली कि हे अमात्यो! मैं राजा के साथ जाती हूं और तुम [illegible]ग मेरे पुत्र के साथ राज्य का शासन करो। प्राणी के पहले किये हुये दुःख [illegible] सुख का भोगने वाला दूसरा नहीं है जैसा-जैसा कर्म किया जावे, उसका [illegible] वैसा फल अपने आपको भोगना होता है। नाना प्रकार के सुखों को भोगती

हुई मैंने भी इस राज्य को सुख से भोगा है। इस लोक या परलोक में पति के
साथ जाना ही स्त्रियों का मुख्य कर्तव्य है, ऐसा मुनियों ने कहा है। फिर हेम-
कण्ठ नामा पुत्र जो बड़ा नम्र था और उस समय बड़े शोक में था, राजा से इस
प्रकार कहने लगा—हे राजाओं में श्रेष्ठ और धर्म का पालन करने वाले महाराज!
आपके विना मेरे लिये कुछ भी नहीं है और राज्य से, स्त्रियों से, प्राणों से, धन से
मुझे कुछ भी प्रयोजन नहीं है, जैसे विना तेल के दीपक और प्राणों के विना
शरीर यह सब वृथा है, वैसे ही आपके विना यह राज्य मेरे लिये वृथा है।

मुसाहिवों के सुधर्मा रानी के और पुत्र के अमृतरूपी वचनों को सुनकर
प्रसन्न चित्त से राजा ने धर्मपूर्वक पुत्र को ऐसा कहाः—

हे पुत्र! पुत्र वही कहलाता है जो सदा पिता के वाक्य पर चले, श्रद्धापूर्वक
श्राद्ध करे और गया में पिंड दान करे। इस वास्ते मेरी आज्ञा से नीतिपूर्वक
राज्य करो, मुसाहिवों के साथ पुत्र की तरह सारी प्रजा का शासन करो। धर्म-
शास्त्र के अर्थ और तत्व को जानता हुआ और नीति को जानता हुआ सबको
खुश रखता हुआ जो पितादिक का उद्धार करे और पुत्रवान् हो, वह ही पुत्र
कहलाता है। मैं गलते हुये अत्यंत घृणा के योग्य कोढ़ से दुःखी होकर वन को
जाऊँगा और रानी सुधर्मा मेरे साथ जावेगी, हे पुत्र! हमको जाने दो।

———

## तीसरा अध्याय।

### आचार आदि बताना

तब राजा ने पुत्र को दाहिने हाथ से पकड़ कर उठाया और महल के
बरामदे में ले गया, जहाँ सदा सलाह हुआ करती थीं। जहाँ पर बड़ा सुन्दर
सिंहासन था, जिसमें बहुत से रत्न जड़े हुए थे और मोतियों की झालरें लगी
हुई थीं, मानो इन्द्र का ही आसन हो। उस पर दोनों पिता पुत्र बैठे
दोनों ही रत्नों में प्रतिबिम्बित जन-समूह से युक्त अनेक प्रकार से शोभित
होरहे थे। पहले राजा ने दयापूर्वक अपने कुल के यश के वास्ते पुत्र को
आचार और कई प्रकार की नीति कही।

मनुष्य को चाहिये कि जब एक पहर रात बाक़ी रहे, उस समय निद्रा को छोड़े, फिर पलङ्ग को छोड़कर पवित्र स्थान में बैठ कर अपने गुरूजी का स्मरण करे, फिर अपने इष्ट-देव का ध्यान करे और स्तुति समेत नमस्कार करे, फिर पृथ्वी से प्रार्थना करे कि हे जगन्मये। मेरे चरणों से तेरा स्पर्श होगा। अतएव क्षमा कर, फिर इस प्रकार देवताओं का स्मरण करे।

*प्रातर्नमामि गणनाथ मशेष हेतुं ब्रह्मादि देव वरदं सकलाग माढ्यम्।*
*धर्मार्थ काम फलदं जन मोक्ष हेतुं वाचामगोचर मनादि मनन्त रूपम्॥ १॥*

## अर्थात

प्रातःकाल ही में उन गणों के स्वामी श्री गणेशजी को नमस्कार करता हूँ, जो सबके कारण हैं और ब्रह्माजी को, आदि लेकर सब देवताओं को वर देने वाले हैं, सम्पूर्ण शास्त्र के खजाने हैं। धर्म, अर्थ, काम इत्यादि के फल देने वाले हैं। लोगों की मोक्ष के कारण हैं, जिनका वर्णन वाणी से नहीं हो सकता है, जो आदि और अन्त से परिमित नहीं है॥१॥

*प्रातर्नमामि कमलापति मुरवी वीर्यं नानावतार निरन्त निज रक्षणाय।*
*क्षीराब्धि वास ममराधिप बन्धुमीशं पापापहं रिपु हरं भव मुक्ति हेतुं॥ २॥*

## अर्थात्

प्रातःकाल ही मैं कमला अर्थात् लक्ष्मी के पति विष्णु को नमस्कार करता हूं जो बड़े वीर हैं और अपने भक्तों की रक्षा के लिये सदा अनेक अवतार लेते रहते हैं जो क्षीरसागर में रहते हैं, देवताओं के स्वामी हैं और संसार से मुक्त होने के एक मात्र कारण हैं॥ २॥

*प्रातर्नमामि गिरिजापतिं मिंदुमौलिं व्याघ्रा जिनावृत मुदस्य दय मनोजे।*
*नारायणेन्द्र वरदं सुर सिद्ध जुष्टं सर्पा त्रिशूल डमरून् दधंत पुरारिं॥ ३॥*

## अर्थात्

प्रातःकाल पार्वतीजी के पति जिनके मस्तक पर चन्द्रमा शोभायमान है, व्याघ्र-चर्म पहने हुये हैं और जिन्होंने कामदेव का नाश किया है, नारा- और इंद्र को वर देने वाले हैं. देवता और सिद्धों से सेवा किये गये हैं

और जो सर्प त्रिशूल और डमरू रखते हैं और जो त्रिपुरासुर के शत्रु हैं, ऐसे शिवजी को नमस्कार करता हूं ॥ ३ ॥

*प्रातर्नमामि दिननाथ मघापहारिन् मोहांधकार हरमुत्तमलोक वद्यम् ।*
*वेदत्रयात्मक मुदस्त सुरारिमायं ज्ञानैक हेतुं गुरु शक्ति मुदारभावम् ॥ ४ ॥*

## अर्थात्

प्रातःकाल ही दिन के स्वामी सूर्य जो पापों के नाश करने वाले हैं, जो मोहरूपी अंधेरे को नष्ट करने वाले हैं, उत्तम तीन लोक जिनको नमस्कार करते हैं, जो तीन वेद-रूप हैं और राक्षसों की माया को नष्ट करने वाले हैं और ज्ञान के एक मात्र कारण हैं, जिनकी शक्ति बढ़ी हुई है और जो बड़े बलवान और जिनके विचार बड़े उदार हैं उन सूर्य नारायण को नमस्कार करता हूं ॥ ४ ॥

*प्रातर्नमामि गिरिजां भवभूति हेतुं संसार सिन्धु परपारकरीं त्रिनेत्राम् ।*
*तत्वादि कारण मुदस्त सुरारि माया माया मयीं मुनीन्द्र नुतां सुरेशीम् ॥ ५ ॥*

## अर्थात्

संसार की विभूति का कारण और संसाररूपी सागर के दूसरे पार पहुंचाने वाली तीन नेत्र वाली पञ्च-तत्त्व पृथ्वी अप्, तेज, वायु, आकाश इनकी मूल कारण, जिसने राक्षसों की माया को नष्ट किया है और स्वयं माया स्वरूपिणी है और जिसको देवता और ऋषि नमस्कार करते हैं, ऐसी देवताओं की स्वामिनी पार्वतीजी को सवेरे ही नमस्कार करता हूं ।

इस प्रकार दूसरे देवताओं को और ऋषियों को याद करके मानसिक पूजा करे और फिर जल का पात्र लेकर गाँव से नैऋत्य दिशा को जावे और मिट्टी लेवें, ब्राह्मण सफेद मिट्टी लेवें, क्षत्रिय लाल मिट्टी लेवें और वैश्य शूद्र काली मिट्टी लेवें, नदी के तीर से न खोदें, यह मिट्टी न तो बहुत [illegible] हो, न इसमें जीव हों और न ब्राह्मण के घर की हो, पृथ्वी पर पहले फूल [illegible] फिर पेशाब करें वा पाखाने बैठें, रात दिन दोनों में दक्षिण की तरफ करके सौंचालें । गुदा को पहले फूँस अथवा काठ वगैरह से साफ करें, पाँच

श्रीगणेशायनमः।

# श्री गणेश पुराण का भाषानुवाद।

उपासना खण्ड

## प्रथम अध्याय।

## सोमकीर्तकांत वर्णन।

श्रीगणेशायनमः। श्रीसरस्वत्यैनमः। श्रीगुरुभ्योनमः।

नमस्तस्मै गणेशाय ब्रह्मविद्या प्रदायिने।
यस्यागस्त्यायतेनाम विघ्नसागर शोषणे॥१॥

अर्थात्

ब्रह्म विद्या के देने वाले उन श्रीगणेशजी को नमस्कार है, जिनका नाम विघ्नरूपी सागर को सुखाने के लिये काफी है आगस्त्य के समान है।

### ऋषी बोले।

हे सूतजी आप बड़े पण्डित हैं वेद और शास्त्र में धुरंधर हैं, सब विद्याओं जाने हैं, आपसे बढ़कर कोई वक्ता नहीं मिलता, हमारे इस जन्म दूसरे जन्मों के बड़े पुण्य हैं, जिनसे सर्वज्ञ अर्थात् सब कुछ जानने वाले दर्शन हमको हुए, हम इस लोक में सब से अधिक धन्य हैं हमारा जन्म

सफल है हमारे पिता पितामह आदि वेद शास्त्र तपस्या और आश्रम यह सब धन्य हैं। आपने हमको अठारह पुराण विस्तार पूर्वक सुनाये अब हमारी इच्छा औरों के भी सुनने की है इस वास्ते हे सत्तम! आप कहिये। हम लोग शौनकेय मुनी के बारह वर्ष में समाप्त होने वाले यज्ञ में लगे हुए थे, वहाँ आपकी कथा रूपी अमृत के पान के सिवाय हमको और कहीं विश्राम नहीं मिला।

## सूतजी बोले।

हे भाग्यवान् ऋषियो! आप लोग पुण्यवान् हैं जो यह पूछा। जो लोग साधू और एकसा चित्त रखने वाले होते हैं उनकी बुद्धि लोगों के उपकार करने वाली होती है। हे ऋषियो! मैं भी कथा के कहने से बड़ा सन्तुष्ट रहता हूं। इस वास्ते विशेष कर अच्छी वृत्ति वालों को कहूंगा जो जो उप पुराण हैं वे भी अठारह ही हैं जैसे गणेश पुराण, नारद पुराण, नृसिंह पुराण इत्यादि। सब से पहले श्री गणेशजी का पुराण कहूँगा जिसका सुनना विशेष कर इस मृत्युलोक में बड़ा ही दुर्लभ है जिसके सुनने ही से मनुष्य कृत–कृत्य होजाता है जिसका प्रभाव शेषजी और ब्रह्माजी भी वर्णन नहीं कर सकते इस वास्ते आपकी आज्ञा से इसे संक्षेप से कहता हूं, बहुत से जन्मों में संचित किये हुए पुण्यों से इसका श्रवण हो सकता है पाखंडी, नास्तिक और पापी लोगों को नहीं हो सकता, क्यों कि यह भगवान् नित्य हैं निर्गुण हैं और अनादि हैं इसलिये श्रीगणेशजी के स्वरूप का वास्तव में कोई भी वर्णन नहीं कर सकता, तौ भी जो लोग उपासक हैं, वे उनको निर्गुण बताते हैं जो भगवान् ॐकार रूपी है और वेद के आदि में प्रतिष्ठित हैं, जिनका सदा मुनी देवता और इन्द्रादिक हृदय में ध्यान करते हैं जिनको सदा ब्रह्मा, विष्णु, शिवजी और इन्द्र भी पूजते हैं जो सम्पूर्ण जगत् के कारण है और सब कारणों के भी कारण हैं जिनकी आज्ञा से ब्रह्मा सृष्टि को उत्पन्न करता है, जिनकी आज्ञा से विष्णु पालन कर्ता है, जि[illegible] आज्ञा से शिवजी संहार करते हैं, जिनकी आज्ञा से सूर्य चलता है, जि[illegible] आज्ञा से पवन चलता है, जल दिशाओं में बहते हैं, तारागण पृथ्वी पर [illegible] हैं और तीनों लोकों में अग्नि प्रकाश करती है, उनका गुप्त चरित्र किसी भी नहीं कहा गया वह मैं आप लोगों को कहता हूं आप लोग आदर [illegible]

सुनें पहले ब्रह्माजी ने बड़े तेजस्वी व्यासजी को कहा, उन्होंने भृगुजी को कहा और फिर भृगुजी ने राजा सोमकांत को सुनाया। पुण्यात्मा करोड़ों व्रत, यज्ञ, तप, दान और तीर्थ करते हैं, उनकी बुद्धि श्री गणेश पुराण के सुनने में लगती है और जिनकी इस संसार में स्त्री, पुत्र, भूमि आदि में ममता नहीं होती वे ही लोग गणेशजी की कथा सुनने में आदर रखते हैं इसकी महिमा सोमकांत के प्रसंग से सुनिये।

सौराष्ट्र देश ( मथुरा प्रांत ) स्थित देव नगर में सोमकांत नामी राजा हुआ। वह राजा वेद और शास्त्रके अर्थ तथा तत्त्वों का जानने वाला था और धर्म शास्त्र के अर्थ तथा तत्त्वों को जानने वाला था और धर्म शास्त्र के अर्थ में तत्पर था जिसके दस हजार हाथी २०००० घोड़े ६०००० रथ सवारी के समय पीछे चला करते थे अगणित सिपाही थे जो बंदूक आदि रखते थे और दो दो तरकस और धनुष रखने वाले सिपाही और थे। वह राजा बुद्धि में बृहस्पति से, सम्पति में कुबेर से, क्षमा में पृथ्वी से और गंभीरता में समुद्र से, प्रकाश और कान्ति में सूर्य और चंद्रमा से, प्रताप में अग्नि से, सुंदरता में कामदेव से भी अधिक था। उसके पांच मुसाहब बड़े बलवान् और बड़े विक्रमशाली थे, राजनीति के अर्थ और तत्त्व को जानने वाले थे और दूसरे अर्थात् शत्रु के राज्य को नष्ट कर देने की शक्ति रखते थे उनमें से पहले का नाम रूपवान् था दूसरे का विद्याधीश, तीसरा क्षेमकर नाम का था, चौथा ज्ञानगम्य और पांचवां सुबल था, ये राजा के बड़े प्रिय थे और सदा राज के काम में लगे रहते थे इन्होंने अपने पराक्रम से अनेक देश जय किये थे, ये अत्यंत सुंदर नाना प्रकारके आभूषण और वस्त्र पहनते थे। उस राजा की पत्नी सुधर्मा थी जो बड़ी गुणवाली [illegible] जिसके रूपको देखकर रति रंभा और तिलोत्तमा भी लज्जित होती थीं और [illegible] भी सुख नहीं पाती थीं और सुख न मानती थीं वह दोनों कानों में सुवर्ण [illegible] पहने थी जिनमें नाना प्रकार के रत्न जड़े हुए थे, गले में मोतियों [illegible]ने हुए थी, कमर में जड़ाऊ करणगती और पैरों में जड़ाऊ नूपूर [illegible]थी और जिसकी हाथ की और पैरों की उंगलियों में अति उत्तम [illegible]थीं और नाना प्रकार के बढ़िया वस्त्र पहने हुए थीं और भगवद्भजन [illegible] मन सदा लगा रहता था और सदा महमानों का सत्कार किया

करती थी । रात दिन अपने स्वामी की सेवा में तत्पर रहती थी और उसके वचन में बड़ी प्रीति रखती थी इन दोनों के हेमकंठ नामक पुत्र हुआ वह कल्याणकारी हुआ दस हज़ार हाथियों की शक्ति उसमें थी वह बुद्धिमान् था पराक्रमी था और शत्रुओं को सताने वाला था । इस प्रकार से राजा सोमकांत इस पृथ्वी पर सब राजाओं से श्रेष्ठ था, सब राजाओं को अपने वश में करके सम्पूर्ण पृथ्वी का राज्य करता था, सदा धर्म में तत्पर रहता था, यज्ञ करता था, दान देता था और बड़ा त्यागी था ॥ ३८ । १ ॥

---

# दूसरा अध्याय ।

## सूतजी बोले

हे ऋषियो ! अब राजा सोमकांत के पाप का वृतांत सुनो उसके अचानक बड़ा दुःखदायी टपकने वाला कोढ़ होगया ( यद्यपि राजा बड़ा धर्मात्मा था, परन्तु पहले के कर्मों से यह फल मिला, क्यों कि भला या बुरा जो कुछ भी कर्म हो वह मनुष्य को कभी नहीं छोड़ता ) जिस जिस अवस्था में जो जो कर्म किया हो वह अवश्य ही प्राणियों को उस उस अवस्था में भोगना ही पड़ता है । इस प्रकार राजा दुःखरूपी समुद्र में डूब गया जैसे बिना नाव के मनुष्य समुद्र में डूब जाता है जैसे कोई सांप का काटा हुआ दुःख पाता है, वैसे ही बड़ा दुःख पाने लगा, कई एक फोड़ों से शरीर ढक गया, इधर उधर से लोहू बहने लगा, राजा राध और लोहू से ल्हिसा हुआ था और कीड़े पड़ गये थे जैसे किसी को यक्ष्मा अर्थात् तपेदिक का रोग हो जाता है उसकी तरह सूख गया, हड्डियां निकल आईं, चिन्ता से व्याकुल होगया । सब इन्द्रियों में रोग लग गये, तब राजा ने बड़े यत्न से अपने मन को रोककर धैर्य से कहाः—

मेरे राज्य को, रूपको, बलको जन्मको, और धनको धिक्कार है, कौन से बीज से यह दुःख मुझको मिले हैं मैंने कांति में चंद्रमा को भी जीत लिया था, जिससे मेरा नाम सोमकांत हुआ । मैंने साधू, दीन, श्रोत्रिय पंडित बहुत

मिट्टी वगैरह से साफ करे फिर धोवें । बायें हाथ को दसबार दोनों हाथों को मिला कर सात बार लिंग को एक बार फिर बायें हाथ को तीन बार धोवें पेशाव करने के बाद दोनों हाथों को दो बार धोवें और दोनों पैरों को एक बार धोवै यह सब क्रिया गृहस्थ के लिए बताई हैं व्रत करने वाला दुगना करें और वानप्रस्थ इससे तिगुना और यती इससे चौगुना करें, रात्रि को इससे आधा करैं और मौन रहकर करें । स्त्री और शूद्र इसका आधा दिन में और रात्रि को चौथाई करें, जिन वृक्षों में कांटे होते हैं अथवा जिनमें से दूध निकलता है उनकी लकड़ी का दतौन करैं और जिह्वा को साफ करें, लकड़ी तोड़ने से पहले प्रार्थना करें, फिर तोड़ैं । प्रार्थना यह करें, कि हे वनस्पति तू मुझको बल ओज अर्थात् प्रताप यश, तेज पशु, गाय, घोड़ा आदि बुद्धि धन स्मरण शक्ति ब्रह्मज्ञान दे फिर मल के नाश करने वाले ठंडे जल से स्नान करें फिर गृह्यसूत्र में बतलाये हुए मन्त्रों से सन्ध्या करें, जप करें, होम करें, स्वाध्याय अर्थात् पाठ करें, तर्पण और देवों का पूजन करें, भोग लगा कर वैश्व देव को महमानों को भोजन कराके फिर स्वयं भोजन करें और यह कार्य ब्राह्मणों की साक्षी से करें ( अर्थात् ब्राह्मण मौजूद हों तो अच्छा ) फिर पुराण सुनें, दान देवें । दूसरे की निंदा न करें, धन से प्राणों से और मीठे वचनों से दूसरों का भला करें, बिगाड़ न करें और अपनी तारीफ न करें । गुरुओं से द्रोह अर्थात् अदावत वेद की बुराई नास्तिकता अर्थात् ईश्वर के अस्तित्व में सन्देह न करें, पाप न करें, जो चीजें नहीं खाने की हैं, उनको न खावें, पर स्त्री सेवन न करें, अपनी स्त्री ही का सदा सेवन करें, किन्तु ऋतु काल में अवश्य जावें, माता, पिता, गुरू और गौ की सदा सेवा करें, गरीब और अन्धों को अन्न और वस्त्र देवें, प्राण भी जाते हों तो भी सत्य को न छोड़ें, जिन साधुओं पर अर्थात् सज्जनों पर ईश्वर की कृपा हो उनका पालन करें, कानून को जानते हुए कुसूर के मुवाफिक धर्म शास्त्र को देखकर या पण्डितों से पूछ कर सजा दें । जिसका [illegible] त हो उसका कभी विश्वास न करें, जिसको नेकनाम होना हो [illegible] भी विश्वास पात्र पर भी अधिक विश्वास नहीं करना चाहिये, [illegible] में वैर–भाव हो उसका कभी विश्वास न करें, छः गुणों से अर्थात् [illegible] ग्रह मान आसन द्वैधीभाव इनको काम में लेकर ) अपने राज्य की

वृद्धि करें, अपनी शक्ति के अनुसार दान देवें, शक्ति के अनुसार न देने से कोष में कमी हो जाती है, विपत्ति युक्त शत्रु पर चढ़ाई करना, नीचों का काम है, इसलिये ऐसा न करें, जासूस की दृष्टि से देखें, दूत का सा मुख दिखावें, दण्ड देने को सदा तैयार राखें, ऐसा राजा होना चाहिये। सजा के डर से ही लोग अपने अपने कामों में ठीक तौर परलगे रहते हैं। यह स्पष्ट है, कि इसके बिना अपने और पराये कामों में नियम नहीं रह सकता अर्थात् वो काम नियम पूर्वक पार नहीं पड़ते। यदि कोई अधम छोटा आदमी निंदा करे या तारीफ करें तो न नाराज़ होवें न प्रसन्न होवें, इससे अर्थात् इसकी चिन्ता से कोई लाभ नहीं। किसी ने यदि पहले अपना बिगाड़ किया है और अब शरण में आना चाहता है और यदि पहले कोई धनवान् हो और अबों धनवान् न रहा हो तो ऐसों का पालन करना चाहिये। सदा सलाह की बात को छिपाना चाहिये, इसही को राज की जड़ कहते हैं काम क्रोधादि छः शत्रुओं को जीत कर दूसरे दुश्मनों को जीतना चाहिये, अर्थात् कामी, क्रोधी आदि राजा दूसरे राजाओं पर फौज वगैरह की बहुत काफ़ी ताक़त होते हुए भी कामयाबी हासिल नहीं कर सकता, किसी की जीविका का प्रजा का, आबादी का और देवताओं का उच्छेदन न करें, बाग, मन्दिर को जड़ से नहीं उखाड़ना चाहिये। पर्व के समय दान देवें, यश के निमित्त अथवा केवल त्याग के निमित्त ही देवें। मित्र को धोखा न दे और स्त्रियों को गुप्तबात न कहें। करजदारी से ब्राह्मण का उद्धार करै और कीचड़ से गौ को निकालें, कभी झूठ न बोलै और सत्य को न छोड़ें। मुसाहिबों का प्रजाओं का और नौकरों का प्रिया बनै ब्राह्मणों को नमस्कार करें और सदा देवों को नमस्कार करें।

## सूतजी बोले।

इस प्रकार से और इसके सिवाय और भी हेमकंठ नामा पुत्र को आचार धर्म्म और नीति की जैसे आपने सुनी थी जो कल्याणकारी था, नहकर [illegible] जि[illegible] और विद्या भी पढ़ चुका था उसको शिक्षा देकर राजाने नमस्कार[illegible] जित्र विद्याधीश नामक मुसाहिबों को अच्छा समय जान कर बुलाया है, कौ पर [illegible] स्थानों पर रखी हुई सामग्री को एकत्रित करके यज्ञ करने वाले, वेद [illegible] भी जी किर्स

विद्वान् ब्राह्मणों को बुलाया, बड़े बड़े राजाओं को, रानियों को और अपने मित्रों को बुलाया और मुख्य २ शहर वालों को बुलाया और अपने पुत्र के शत्रुओं को नष्ट करने वाले को राज्याभिषेक के लिये विधि पूर्वक श्रीगणेशजी का पूजन कराया, इष्ट देवता का पूजन कराया। स्वस्त्ययन पाठ करवाय, षोडस मातृका का पूजन कराने के बाद अभ्युदयिक श्राद्ध करके ब्राह्मणों को अन्न से तृप्त किया, मंत्र की धुनियों से पुत्रका राज्याभिषेक किया और सोमकान्तने अपने तीन मुख्य मुसाहिबों को बोला।

## राजा बोला।

हे मुसाहिबों यह मेरा पुत्र है ऐसा ही तुम्हारी बुद्धि रहै, मैं तुम्हारे हाथ इसको सोंपता हूँ, जिस तरह नीति में चतुर तुमने मेरी हुकूमत कायम रखी है, वैसे ही मुख्य आदमियों को साथ लेकर इसकी हुकूमत भी कायम रखना।

इति श्री गणेश पुराणे उपासना खंडे आचारादि निरूपणं नाम तृतीयोध्यायः॥ ३॥

---

# चौथा अध्याय।

## सूतजी बोले।

राज्याभिषेक होने के पीछे राजा ने ब्राह्मणों का पूजन किया और जवाहरात, मोती, मूंगा, सर्वांग सम्पूर्ण उपस्कर सहित दसहजार गौ दान में दीं, उन सबको हाथी घोड़ा बैल जो रथ के जोये जाय उनको आदि देकर प्रसन्न किया अनेक देशों से मंगाये हुए जरीन और कास्मीर के बने हुये वस्त्र दिये...गजपुरुषों को, रानियों को और उनके नौकरों को, ग्राम के मुख्य मुख्य
ह ...नों को सिरोपाव दिये। मुसाहिबों को ग्राम और बहुतसा
ध ...राजा दुःख और शोक से युक्त वन को गया पहले जन्मों में
सां ...पापों के कारण बहुत गन्दा और अपवित्र था, उसके जाने
पर ...हाहाकार मचा अपने २ कामों को छोड़कर लोग राजा को
पद ...देव, रानियां और हेमकंठ और सुहृद्व्रत उठते, बैठते, दौड़ते

रोते हुए साथ जा रहे थे. मुसाहिब और प्रजा के लोग समझाते जा रहे थे, ४ कोस इस प्रकार गये तब ठंडे जल की एक बावड़ी जिस पर वृक्ष लगे हुए थे. उसको देखकर थका हुआ वह राजा वहां ठहर गया और सब शहर वालों को मुसाहिबों को और अपने आदमियों को यों कहने लगा । मैं बहुत दिन से राज कर रहा था जो कुछ मेरा अपराध हो उसको क्षमा करना यह मैं हाथ जोड़ कर आप लोगों से माफी मांगता हूँ और आप लोगों से यह अर्ज करता हूं, कि मेरे पुत्र पर दया रखना अगर दैव कृपा से मैं वापिस आजाऊं तो मेरे ऊपर आप लोग प्रेम रखना वे आप सब लोग अब शहर में वापिस जावें स्त्रियां और बूढ़े आदमी तकलीफ पाते हैं मेरा पुत्र आपकी सेवा करेगा आप लोग बे फिकर रहें मुझको आप लोग बन में जाने की आज्ञा दीजिये जिससे मैं प्रसन्न होकर जाऊं आप लोगों के चले जाने पर मेरा चित्त निश्चल होवैगा आप लोग सब मेरे साथ उपकार कर रहे हैं मैं दुःखी हूँ मौन चाहने वाला नहीं कह सकता हूँ मैं ने इस जन्म और जन्मान्तरों में बड़े पाप कमाये हैं उनके कारण राज्य से और भला चाहने वाले आप लोगों से आज मेरा वियोग होता है परन्तु मैं क्या करूं यह कोढ़ मेरे झरता है सब ही को पुण्य पाप के फल मिलते हैं ।

## सूतजी बोले ।

राजा के यह वचन सुनकर सब मित्रगण मूर्च्छित हुए और कई तो दुःखी होकर अपना शिर पीट कर रोने लगे कुछ समझदार लोग आपस में सलाह करने लगे कि राजा के पूर्वज राजाओं के चरित्रों से शान्ति की और कई लोग राजा की इस सोचनीय अवश्य होने वाली अवस्था को देखते हुए चले गये योगी और ज्ञानी लोग ठीक हाल राजा को बन में जाता देखकर दुःख को धैर्य से रोककर बोले ।

## लोग बोले ।

हे राजन् ! हमको पाल पोषकर आज आप कैसे छोड़कर जाते हैं । जल से ठण्ड अग्नि से गर्मी जैसे नहीं जा सकती समुद्र अपनी मर्यादा को नहीं छोड़ता सूर्य अपने उजाले को नहीं छोड़ता इस ही तरह हे प्रजा के प्यारे राजा

हम आपको छोड़कर नगर में कैसे जावें जिस तरह चन्द्रमा के बिना आकाश तारात्रों के रहते हुए भी शोभित नहीं होता इस ही तरह हे शत्रुओं को दुःख दायी तेरे बिना भी नगर अच्छा नहीं लगता २—३ तीर्थों तक हम आपके साथ ही चलेंगे तीर्थों के सेवन से आपका शरीर कान्तिवान् हो जावेगा तो बड़ी खुशी के साथ बाजे बजाते हुए फिर बड़े हर्ष से पताकादि से सुशोभित बंदीजनों के सहित आपके साथ हम सब नगर में चलेंगे।

## सूतजी बोले

उनके ऐसे बचन सुनकर क्रोध से और दुःख से युक्त राजा उनको हाथ जोड़कर बार बार बोला ऐसा मत करो फिर मुसाहिब और हेमकंठ प्यारे राजा से प्रीति से कारुण्य से और विनय पूर्वक यों कहने लगा।

## बेटा बोला।

आपके बगैर वापिस जाने को जी नहीं चाहता न राज अच्छा लगता है न जीना अच्छा लगता है पहले तो कभी आपसे जुदा नहीं रहा अब आपका जाने का विरह कैसे सहूं।

## राजा बोला।

इस ही वास्ते मैंने पहले धर्म शास्त्र और नीति का उपदेश किया है उसको व्यर्थ नहीं करना चाहिये सुना है कि पहले परशुरामजी ने पिता की आज्ञा मानकर नीति को मानते हुए माता का वध किया लक्ष्मण जी को साथ लेकर राज को छोड़कर रामचन्द्र जी बन को गये बिना कारण पूछे सीताजी को लक्ष्मणजी बन में छोड़ आये अब हे हेमकंठ तीनों मुसाहिबों के साथ मेरे हुक्म से जल्दी अपने शहर को जावो और मेरे सम्हलाये हुये राज्य को चलावो कि काम में लगने पर जैसे पण्डितों का चित्त परमात्मा में ही

कायदे से इकट्ठे किये हुये धन में प्रजा का चित्त स्थिर रहता मेरे बन में जाने पर भी मेरा चित्त तेरे में ही है दैवयोग से मैं गा तो फिर घर आजाऊंगा इससे मेरी आज्ञा मानने का धर्म थ चलने से वैसा नहीं होगा इसलिए हे पुत्र! तुम पुर में जावो को जाता हूँ।

## सूतजी कहते हैं।

मुसाहिब शहर वाले और राजा के पुत्र ने बड़े दुःख से वापिस जाने का इरादा करके राजा को नमस्कार किया, उसकी आज्ञा से और आशीर्वाद पाकर फिर नमस्कार और राजा की प्रदक्षिणा करके शहर को वापिस चले,बड़ी फौज जिसमें हाथी, घोड़े, रथ और पैदल सब थे, उसको आगे लेकर हेमकंठ छत्र और ध्वजा से सुशोभित नगर में प्रविष्ट हुआ।

इति श्री गणेशपुराणे उपासनाखंडे चतुर्थोध्याय ॥ ४ ॥

---

# पांचवां अध्याय।

॥ सुधर्म्मा और च्यवन मुनी का सम्वाद ॥

## ॥ सूतजी बोले ॥

फिर हेमकंठ अपनी माता के पास जाकर प्रेम और कातर वाणी से कहने लगा, कि मुझ निरपराधी को क्यों छोड़ते हो।

## हेमकंठ बोला।

आप पिताजी से मेरी सिफारिश करो, शायद आपके कहने से मुझको साथ ले लेवै तो मैं आप दोनों उसकी सेवा करेंगे। मेरा मन राज करने में नहीं लगता, आपके बिना राज्य में मुझको कुछ सुख नहीं हैं।

## सुधर्म्मा ने कहा।

इतना दुःख और शोक से युक्त राजा मेरे वाक्य को नहीं मानेगा इसलिये हे वीर! तुम मेरी आज्ञा से जावो मैं तो पातिव्रत्य धर्म्म के अनुसार परतन्त्र हूं,स्त्रियों के पति के सिवाय और कोई देव नहीं है और न कोई दूसरा मान्य है।

यह सुनकर मित्रों सहित उस प्यारे पुत्र ने माता की प्रदक्षिणा की और वह उसे नमस्कार करके उसकी आज्ञा लेकर नगर को लौट आया, नगर भली

भांति सजा हुआ था, प्रजाने पताका, ध्वजा, वंदनवार बांध रखे थे, सुगन्धि की चीजों से सड़क छिड़की हुई थीं जैसे इन्द्रपुरी हो अपने भाई बन्धुओं को तथा सम्बन्धी मित्रादि जो आये हुए थे, उनको पान और सिरोपाव देकर विदा किये, हर्ष और शोक समेत समृद्धियुक्त महल में प्रविष्ट हुआ। धर्म्म से लड़के की तरह प्रजा का पालन करता हुआ, राज्य करने लगा। जैसे शिक्षा मिली थी, वैसे ही धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का विचार करता रहता था।

फिर ऋषि पूछने लगे, कि हे सूतजी! हमें विस्तार पूर्वक कहिये, कि राजा सोमकान्त किस वन को गया, वहां जाकर क्या किया और किसने उसकी सहायता की।

## सूतजी ने उत्तर दिया कि–

हे महाराज! मैं आपसे भली भांति वर्णन करूंगा, कि राजा सोमकान्त क्यों वन में गया और वहां जाकर क्या किया आप ध्यान देकर सुनो। मुसाहिब सुबल और ज्ञानगम्य तथा सुधर्म्मा नाम की धर्मपत्नी समेत कठिन वन में राजा गया, आगे आगे दो मुसाहिब बीच में राजा और पीछे पीछे धर्मपत्नी सुधर्मा। इस प्रकार साथ थी, जैसे रामचन्द्र जी के पीछे पीछे सीताजी गईं। चारों एकबार भोजन करते थे, एकचित्त होकर आसन ही को अपना घर समझते थे, सुख दुःख को बराबर समझते हुए, इस वन से उस वन में जाते थे। कहीं ऊँचा चढ़ना, कहीं नीचा उतरना, भूख, प्यास इत्यादि-रास्ते की तकलीफों से दुबले होगये, कहीं छाया मिलती तो बैठ जाते थे, फिर दूसरे वन में गये तो वहां एक बड़ा सरोवर देखा, जिसमें हाथी जैसे बड़े बड़े मगर और कछुवे थे और जिसके चारों ओर ताड़ तमाल, सरला, बोलसिरी, कटहल, जामुन, नींब, पीपल और बड़ के वृक्ष थे, नाना प्रकार की लतायें उन पर लिपट रही थीं, इसलिये बड़ा अन्धेरा था, जैसे पहाड़ों की गुफाओं में [illegible] पजाने वाली हवा कमलों की सुगन्ध से भरी हुई [illegible] ल लिया करते हैं, जहां हंस, बगुले, बाज कौवे, कोयल, [illegible] तरह के पक्षी शोर मचा रहे थे, जहां सूर्य और चन्द्रमा [illegible] पहुँचती है, जहां नाना प्रकार की लताएं थीं, फूल

खिल रहे हैं, जहां बहुत वृक्ष लगे हुए हैं, जहां भूख प्यास तथा मृत्यु का भी कुछ भय नहीं है, जैसे पुण्यात्माओं को स्वर्ग में कुछ भय नहीं है वहां जाकर सब ने जल पिया थकावट मिटाई, स्नान तथा नित्य क्रिया करके फल खाये, कोमल बालु का युक्त तरीके स्थान पर राजा कुछ सोया धर्मपत्नी सुधर्म्मा पैर दाबती रही, उसकी आज्ञा से दोनों मुसाहिब तो कुछ कन्दमूल फल वगैरह लेने गये और सुधर्म्मा को एक उग्र बालक दिखाई दिया, जिसका अद्भुत रूपथा और जो अपनी कान्ति से देदीप्यमान था। उसके उत्कृष्ट रूपको देखकर विचार हुआ, कि इस बालक को पहले कभी देखा है और प्रसन्न हुई, उसको अपना हितकारी जानकर अपने दुःखी मन को प्रसन्न देखकर यह समझा, कि यह हमारा उपकार करेगा और उससे पूछा, कि आप कहां से आये, आपके माता पिता कौन हैं, कृपा करके हमें बतलाइये और अपनी अमृतरूपी वाणी से हमारे कानों को तृप्त कीजिये। यह पूछने पर वह बालक राजपुत्री को मीठे बचनों से कहता है कि मेरे पिता भृगुजी हैं और माता पुलोमा है पिता की आज्ञा से जल लेने को यहां आया हूँ, च्यवन मेरा नाम है। मैं पिता की आज्ञा मानने वाला हूँ, तुम कौन हो और इस वन में कैसे आए हैं। जैसे वर्षा में पहाड़ झरता है, इस तरह अंग कैसे झरता है और किस कर्म्म से, इनमें इतनी बदबू है, कीड़े लिपट रहे हैं। इसकी सेवा तुम कैसे करती हो, तुम स्वयं श्रेष्ठ हो, सुकुमारी हो, तुम्हारे नेत्र अच्छे हैं, चहरा अच्छा है और सब अंगों से शोभा वाली हो क्या तुम्हारे पिता ने मित्रों ने अथवा भाइयों ने तुमसे यह नहीं कहा, कि यह कोढ़ी है और इसके कीड़े लिपट रहे हैं, तुमने इसको क्यों व्याह लिया और अब इस वन में क्यों आई हो।

जब मुनि पुत्र ने ऐसा पूछा तो बड़े शोक और हर्ष से युक्त वह सुधर्म्मा सब कुछ कहने लगी, सौराष्ट्र देश में देवताख्य नगर है, वहां का राजा यह सोमकान्त मेरा पति है, बड़ा मान रखने वाला दानी शूरवीर और पराक्रमी है, जिसके बहुत बड़ी फौज है शत्रु के राज्य को नष्ट करने
वाला है, बड़ा सुन्दर है, लक्ष्मीवान है और मित्रों क[illegible]ीं मानेगा इसलिये
सब कामों को विचार कर करता है, नीति और शास्त्र [illegible] अनुसार परतन्त्र
बहुत दिनों तक अपने राज्य का सुख भोगा, पिछले [illegible]ई दूसरा मान्य है।

यह दशा होगई, दो मुसाहिबों के साथ इस वन में आया है. मैं इसके पीछे २ यहाँ आई हूँ पुत्र को राज्य दे आये हैं, सुबल और ज्ञान गम्य नामा दोनों मुसाहिब राजा की आज्ञा से फल लेने गये हैं, यहाँ हमको राक्षस, प्रेत, भूत, मृग पक्षी कई प्रकार से डरा रहे हैं, हमको कैसे नहीं खाते। मैं नहीं जानती हूँ, कि दुःख के भोग के लिये ही आगे खड़े हैं इस दुःख का दुष्कृत कर्म का नाश नहीं दीखता है। हम जो छः रस वाले नाना प्रकार के भोजन किया करते थे, प्रेत और पक्षियों के बीच में बैठ कर कन्द मूल-फल इत्यादि खाते हैं जिसको दरिद्री खाते हैं, और यह हमको पचते हैं वैसी शान्ति धनवानों को नहीं होती, खाने से पचता भी नहीं जो कोमल बिछौनों पर सोते थे, वे आज जहाँ कहीं पड़ते फिरते हैं जिसकी कीर्ति चौतरफ फैल रही थी, उसके शरीर में लोहू और राध बह रहे हैं और दुर्गन्ध फैल रही है, जो पण्डितों के बीच आनन्द समुद्र में बैठा रहता था, उसके चारों तरफ आज दुखदाई कीड़े लिपट रहे हैं, देखो समय का फेर कैसा है। हे भृगु नंदन ! कृपा करके बताओ, कि हम इस दुःख समुद्र को कैसे तरेंगे, इस अगाध दुःख सागर में डूबते हुए हमारे लिये आप ही नौका रूप हैं।

---

# छठा अध्याय ।

## ॥ भृगुमुनी के आश्रम पर आना ॥

## सूतजी बोले ।

ऐसा सुनकर दूसरे के दुःख से दुःखी भृगुनंदन च्यवन मुनि जल्दी से अपने जल के घड़े को लेकर चुपचाप अपने घर पर पहुंचे तो भृगुजी ने देर होने का कारण पूछा तुम चकित जान पड़ते हो, क्या नई बात देखी और [illegible] है।

एकाक्षर
होगया,

## च्यवन मुनि ने कहा ।

सत्वगुण राट्र देश में दैवत नगर है, उसका राजा सोमकान्त बड़ा सुन्दर है, तीनों उ दिन तक धर्म-पूर्वक प्रजा का पालन करता हुआ राज करता था,

दैवयोग से वह दुःशरीर को प्राप्त होगया, अपने पुत्र को राज्य का भार सौंप कर अपनी पत्नी सुधर्म्मा और दो मुसाहिब सुवल और ज्ञान गम्य समेत इस वन में आया है, सुधर्म्मा अपने पति की सेवा कर रही है। उसके कोढ़ गल रहा है और उसमें कीड़े पड़ गये हैं, दुर्गंस सरोवर के पास भटक रहा है, उसके हजारों व्रण ऐसे होगये हैं जैसे गौत्तम के शाप से इन्द्र के हज़ार भग होगये थे, कहाँ तो अच्छे शरीर वाली सुधर्म्मा और कहाँ उसका गलत्कुष्ट पति। यह बातें पूछने में मुझे कुछ देर लग गई, उनके करुणा भरे वचनों से मेरा मन दुःखी होगया, फिर मैं जल्दी से जल का घड़ा भर कर आ रहा हूँ। जैसा उन्होंने वृत्तान्त कहा था वह सब कह सुनाया, तब भृगुजी पुत्र से कहने लगे। हे पुत्र! मेरे कहने से तुम जाओ और उन सबको यहाँ ले आओ, मैं उनका तमाशा देखूंगा और अपना उनको दिखाऊंगा।

इस प्रकार पिताजी के भेजे हुए करुणा के खजाने च्यवन मुनि तालाब के पास की जगह सुधर्म्मा से मिलने गये, इस ही अवसर में दोनों मुसाहिब सुबल और ज्ञानगम्य कन्द-मूल फल लेकर राजा के पास आ पहुँचे, तब च्यवन ने सुधर्म्मा से कहा कि मेरे पिताजी आप सबको आश्रम में बुला रहे हैं। यह सुनकर दुःख से सुधर्म्मा उस ही समय सावधान होगई मानों उसके शरीर में प्राण आगये, वह सुशीला रानी उनके बचनरूपी अमृत को पीकर अपने पति और दोनों अमात्यों समेत मुनि पुत्र के पीछे पीछे चलदी, मार्ग में जाते हुए वे ऐसे शोभायमान होते थे जैसे बृहस्पतिजी के पीछे पीछे गौरी शंकर गणेशजी और स्वामी कार्तिक जा रहे हों। भृगुजी के आश्रम में जहां वेदध्वनि हो रही थी वहां पहुँचे वहां नाना प्रकार की लताएं फूल रही थीं और पक्षी गूंज रहे थे, बिल्ली, नौला, बाज, हाथी, गौ, मोर, सर्प, पक्षी, सिंह, व्याघ्र सब क्रीडा कर रहे थे, न वहां तेज़ हवा चलती थी न कडी धूप पडती थी मेह भी जोर का नहीं बरसता था जितना चाहें उतना ही बरसता था। वे लोग [illegible] मुनि पुत्र के पीछे पीछे वहां पहुँचे वहां जाकर उन्होंने अद्भुत व्याघ्र[illegible] बैठे सूर्य के समान तेज वाले भृगुमुनि को देखा राजा उसकी पत्नी और सेवकों ने मुनि को हाथ जोड़ कर नमस्कार किया और अर्ज़ की। हे [illegible] आप के आशीर्वाद से आज हमारे सब पुण्य फल गये, मैं जन्म

इसलिये
परतन्त्र
य है।

पवित्र हुआ मेरे माता पिता, मेरे प्राण आज सुफल हुए और पूर्व जन्मों के पुण्यों से जो आज आपके दर्शन हुए हैं वे इस समय मेरे पापों को नाश कर रहे हैं, आगे के लिये कल्याण देने वाले हैं और तीनों काल में मेरे जन्म को पवित्र करते हैं। हे अमोघ दृष्टे सौराष्ट्र देशमें दैवत नाम वाले नगर में नीति-युक्त राज्य किया, मैंने पाप के भय से द्विज और देवों का पूजन भी किया अकस्मात् मेरा कोई बड़ा पाप ऐसा फूट निकला जिससे मैं इस कुदशा को पहुँचा और मैं इससे बचने का कोई उपाय नहीं जानता, अब आप उपाय बतलाइये, जो उपाय पहले किये हैं वे सब निष्फल हुए, अब आप उपाय बतलाइये,क्यों कि आपके आश्रम में जाति से बैरी भी बैर रहित हो जाते हैं, मैं आपकी शरण आया हूं। इस प्रकार सोमकान्त के करुणा से भरे हुए वचनों को सुनकर ध्यान लगाकर भृगुजी ने उसे देखा और बोले। हे राजा! मैं तुमको उपाय बताऊंगा, चिंता मत करो लोग मेरे आश्रम में आकर दुःख नहीं पाते, तुम्हारा पिछले जन्म का कोई पाप है, जिससे तुम्हारी यह दशा हुई, अब सब लोग भोजन करो बहुत देर होगई, भूखे हो एक बनसे चलकर दूसरे बन में आये हो तुम्हारे मुँह उतरे हुए हैं। इस प्रकार कहने पर वह लोग तेल लगा कर नहाये और अनेक प्रकार के षट्रस युक्त भोजन किये फिर परम तेजस्वी भृगुजी की आज्ञा से भली भांति स्नान भोजन कर वस्त्रादि धारण करके चिन्ता को छोड़ कर मुनि की बताई कोमल सेजों पर सोगये, मानों राज्य में ही जा पहुँचे हों।

---

# सातवां अध्याय।

॥ राजा सोमकान्त के पूर्व जन्म की कथा ॥

## ऋषि बोले।

एकाक्षर मंत्र

होगया, मा[illegible] जाकर राजा सोमकान्त ने क्या किया और सब जानने वाले भृगुजी सत्वगुण, र[illegible]य बतलाया, मुझसे कहो, हे ब्राह्मणों में श्रेष्ठ सूत जी आपके बचन तीनों उत्पन्[illegible] को पीते हुए हम नहीं अघाते ( नहीं धापते )

## सूतजी बोले

हे भाग्यवान् मुनियो ! आप ज्ञान के समुद्र हैं, आपने अच्छा पूछा, जिस कथा को सुनने वाला और वर्णन करने वाला अन्त तक नहीं सुनता या नहीं कहता, लिखी हुई पुस्तक पढ़े अथवा पुस्तक को चुराले जावै जो गुरू शिष्यों को पढ़ावै अथवा शिष्यों के पूछने पर गुरू न बतावै तो वे दोनों गूंगे बहरे गिने जाते हैं, इस लिये आप राजा सोमकान्त की कथा सुनो मैं कहूंगा। उस रात के खतम होने पर दिन नाथ सूर्य्य के ऊगने पर तेजवान भृगु मुनि स्नान, सन्ध्या, जप, होम करके सेवकों समेत राजा को और उसकी पत्नी को जो कि स्नान और जप करके निवृत्त होचुके थे, पूर्व जन्म की कथा कहने लगे।

## भृगुजी ने कहा कि

विंध्याचल पर्वत के पास रमणीय कोल्हार नामी नगर में चिद्रूप नाम का एक बड़ा धनवान् वैश्य था, उसकी स्त्री सुभगा नाम की थी जिसके नेत्र अच्छे थे, शीलवान थी, दान देने की उसकी आदत थी और पति की आज्ञा में रहती थी, हे राजा ! तुम पूर्व जन्म में उसके पुत्र हुए तुम्हारा नाम कामद रखा दिन रात उन्होंने बड़े स्नेह से पालन पोषण किया, क्यों कि तुम उनके बुढ़ापे में हुए थे और इकलौता थे, इस लिये उन्होंने बड़ी खुशी से मंगलाचार खेल तमाशे करके तुम्हारा विवाह किया तुम्हारे जो वधू आई वह बड़ी सुन्दर अङ्ग वाली, हिरन के से नेत्र वाली आई, कुटुंबिनी उसका नाम था, वह तुम से सदा बड़ा प्रेम करती थी, देवता, ब्राह्मण और महमानों की बड़ी शुश्रूषा करने वाली थी, स्त्रियों में रत्न रूप थी. अति सुन्दर थी और अपने कुटंबिनी नाम को सार्थक करती हुई उसने पाँच पुत्र और सात कन्या पैदा कीं मानों वह कामदेव की स्त्री रति ही थी, बहुत दिन पीछे तुम्हा[illegible] शरीरान्त होगया और तुम्हारी माता पति के साथ भस्म होकर [illegible]सलिये और देवलोक को पहुँची फिर तुमने मित्रों के साथ बहुत धन बि[illegible]रतन्त्र तो लोग लेगये कुछ नष्ट होगया कुछ को तुमने खा डाला इस तरह [illegible] है। नाश को प्राप्त हुआ। इसकी चिंता से तुम्हारी धर्म–पत्नी तुमको [illegible]

तुमने उसकी नहीं मानीं और मकान भी बेच डाला। तुम्हारी आज्ञा लेकर तुमको वंश का कांटा जान तुम्हें छोड़ कर अपने बच्चों को पालने के लिये वह अपने बच्चों को लेकर अपने पीहर चली गई। उसके पीछे तुम शराबी उन्मत्त की तरह बे सोचे, समझे बेढंगे काम करने लगे, नगर में अन्याय करने लगे, हाथी की तरह मतवाले होगये, दूसरों का धन छीनने लगे, स्त्रियों के साथ जाकर कुकर्म्म करने लगे, गाँव गाँव में चोरी करने लगे, लोगों की बुराई ली, जुवा खेलने में हौंसला दिखाते थे, खूब पाप कट्ठे किये, कमजोरों के लिये शूरवीर बने। जिन २ लोगों के साथ तुम सुख से रहे उनसे तुमने बहुत धन लिया, उसको बिगाड़ कर तुम्हारे पिता के मित्रों से जो शहर में जहां तहां रहते थे उनसे किसी न किसी बहाने से रुपया लेकर उसको बिगाड़ा. दिलाई हुई सौगंदों को झूंठी की और स्त्रियों के सामने झूठ बोल कर उनको ठगा इस तरह सब लोग तुमसे डरने लगे जैसे कोई बड़े विषैले सांप से जब वह घर में घुस आता है तो डरने लग जाते हैं जिस तरह कोई गो-वध करने वाला पापी न सहा जा सकता, उस ही प्रकार तुम सब को इस तरह असह्य होगये, फिर राजा की आज्ञा लेकर लोगों ने तुमको नगर से निकाला, वन में रहकर तुमने बहुत से जन्तु मारे। स्त्री, बालक और वृद्ध राहगीरों को तुमने मारा जिस तरह सिंह को देखकर वृक और मृग भागने लगते हैं वैसे ही महाजनों को देखकर तुम भागने लगते। मछली, बगुला, सारस, मुर्गा, वृक, वानर, कोयल, गेंडा, सुस्सा, पाटागोहली इनको मारकर खाने लगे और अपने देह का वृथा ही पोषण करने लगे। पहाड़ों की गुफाओं में से सिंह, व्याघ्र और गीदड़ों को निकाल कर ऐसे कई स्थानों में स्थित चोरों से मिल करके काठ और लोह पत्थरों से तुमने कोस भर लंबा चौड़ा घर बनाया जिसमें कई तरह के खेल होने लगे, तुम्हारी पत्नी को उसके पिता ने तुम्हारे डर से बालकों को लेकर उस गुफा [illegible]रे घर पर पहुंचादी. जिस स्थान पर राजा और प्रजा का भी गुजर [illegible] तुम्हारी स्त्री के पास बहुत से गहने और कपड़े थे, बालक तेजस्वी थे। [illegible]ना की तरह शोभायमान थी और तुम चोर की तरह रात्रि में गरीब [illegible] लूट मार कर गुफा में आते थे। चोरों और उनके बालक स्त्रियों से

तुम उनके राजा ही वन रहे थे। एक वार एक विद्वान् गुणवर्द्धन नाम का ब्राह्मण दोपहर के समय तुमको रास्ते में अकेला मिल गया, उसका दहना हाथ पकड़ कर तुमने उसको धर पकड़ा, तुम्हारे खयालात समझकर डरकर उस धमकी से वह कांप उठा, वड़ी करुणा भरे वाक्यों में दलीलों से तुमको समझाता हुआ अपने जीने की इच्छा से मूर्च्छित होकर अपनी मौत जानकर तुमसे कहने लगा, कि आप वड़े सुन्दर हैं, धनवान् हैं, आप मुझे क्यों मारना चाहते हैं, मैं ब्राह्मण हूँ, मेरी पहली स्त्री गुजर गई। अब यह दूसरी सुन्दर स्त्री है, मेरी नई विवाहिता स्त्री है, मैं शान्त हूं और वेकसूर हूँ, ऐसी दुर्बुद्धि को छोड़कर अच्छे धर्म की ओर झुको, मेरी स्त्री अपने आचार से रहती है वड़ी उदार, वड़ी पतिव्रता सब गुणों से पूर्ण है, माता पिता से उऋण होने को धर्म और सन्तान की वढ़ोतरी करने को वड़े उपायों से ग्रहस्थी वना हूँ, मेरे विना उसका और उसके विना मेरा जन्म वृथा है, तुम मेरे माता पिता हो। मैं तुम्हारा पुत्र हूँ, जीवदान देने वाला, भय से बचाने वाला, शास्त्र में पिता कहे गये हैं, शरणागत ब्राह्मण की चोर भी रक्षा करते हैं, शरण आया हुआ योग्य ब्राह्मण जानकर मुझको छोड़दो, नहीं तो तुम १२ हजार वर्ष तक नरक के दुःख भोगोगे, यह सब स्त्री पुत्र और मित्र सुख के भोगने वाले हैं पाप के भागी नहीं हैं, तुमको सब प्रकार से ठगने वाले हैं, मैं नहीं कह सकता कि तुम कितने जन्म तक पाप का फल भोगोगे।

---

# आठवां अध्याय ।

॥ अनेक पक्षियों का हटाना ॥

## भृगुजी ने कहा ।

ऐसे उस ब्राह्मण के करुणायुक्त वचन सुनकर फिर तुम्हें ग्ला
हुई, फिर भी तुम्हारा हृदय पसीजा नहीं, क्या ब्रह्मा ने वज्र से भ
तुम्हारा हृदय बनाया था, बहुत से जन्तुओं की और हजारों आदमि
हिंसा करते रहने से कृतघ्नी के सदृश तुम्हारा मन कठोर हो गया थ
भी तुमने उसको मृत्यु के समान वनकर कठोर ही जवाब दिया।

हे ब्राह्मण तुम्हारे वाक्यों से जो मुझ पर बाण की तरह फेंक रहे हो, क्या हो सकता है, जो न सुने उसे पण्डिताई से क्या अथवा उलटे घड़े में जल कहां'। हे मूर्ख ! मेरी बुद्धि इस समय कैसी और तेरा उपदेश कैसा। जैसे शराबी को ब्रह्मज्ञान नहीं सुहाता वैसे ही इस समय मुझको भी तुम्हारी बातें अच्छी नहीं लगतीं। धन के लोभी को पिता या भाई का विचार नहीं होता, कामी को न डर होता है न शरम, कौवे में शुद्धता कहां, जुवारी के सच कहां, नपुंसक के धीरज कहां, स्त्रियों में काम की शान्ति नहीं, सर्प के क्या कभी शान्ति देखी है, मेरे तो और कोई काम नहीं है, विधाता ने दैवयोग से तुमको मौत के मुंह में डाल दिया, मैं तुमको कभी नहीं छोडूँगा।

यह कह कर दाहिने हाथ में तलवार लेकर जैसे बिल्ली चूहे को मार डालती है वैसे फौरन उसका तुमने शिर काट डाला। इस प्रकार तुम्हारी ब्रह्म हत्याओं की गिनती न रही, खासकर स्त्री, बालक और बुड्ढों की हत्यायें तो तुमने बहुत ही की हैं, तुम दूसरों की हत्यायें करते २ बहुत पाप के भागी हुए, इस तरह करते २ आखिर तुम्हारा बुढ़ापा आगया। कफ गिरने लगा, तुमको देख कर दूसरों को ग्लानि होने लगी। तुम्हारे शरीर का पसीना ही तुम्हारे लिये क्वाथ ओटाई दवा बनी, तुम धूजने लग गये, बैठे २ तुम ऊंगने लगे, सोते तो नींद नहीं आतीं। तब तुम्हारे पुत्र, दासियां और नौकर तुम्हारा निरादर करने लग गये। मित्र, बेटे, पोते या दौहित्र और खिदमतगार सब अनादर करने लगे, तुम्हारी बात मानने वाला एक अच्छा ब्राह्मण था, उसे भी तुमने वन में रहने वाले सब मुनि वगैरह को बुलाने भेज दिया, वे तुम्हारे भय से और ब्राह्मण के कहने से आगये तुमने उनको नमस्कार करके कहा, कि मुझसे दान लो, उन्होंने जवाब दिया कि हम तुझ नींच पापी का दान नहीं लेवेंगे, क्योंकि दान लेने से हमारे यज्ञ, ध्यान आदि निष्फल हो जावेंगे। [illegible] करने में, तुम्हारे साथ चलने से वा बैठने से वा भोजन करने से एकाक्षर मंत्र[illegible]ा है। इस तरह तुमको कह कर वे आश्रम को चले गये और होगया, मा[illegible]अपनी शुद्धि के लिये नहाये, अपने कपड़े धोये और पवित्र करने सत्वगुण, र[illegible]ओं का जप किया। हे कामाद रोग होने से अपने लोगों के छोड़ तीनों उत्प[illegible] ब्राह्मणों के फटकारने से तुमको बड़ा पश्चाताप हुआ, अपने पास

बहुत सा रत्न, सोना, चांदी देखकर तेरी बुद्धि में यह आया, कि किसी मंदिर को जो पुराना वा गिरता हो, उसकी मरम्मत कराऊं तब ब्राह्मणों ने एक पुराने छोटे से मन्दिर में श्री गणेशजी की मूर्ति बतलाई तुम्हारा विचार हुआ कि अपना खूब धन लगाकर इस मन्दिर का जीर्णोद्धार कराऊं इसको बड़ा बनाऊं और इसके चार दरवाजे बनवाऊं । चौतरफ से ठीक बनाऊं, चार शिखिर हों, बहुत खंभे हों, चारों तरफ बहुत सी वेदियां बनाई जावें, इसके आंगन में मोती मूंगे और अनेक रत्न जड़ाऊ नाना प्रकार के फूल वाले वृत्तों का बाग लगाऊं, चारों तरफ चार अच्छे जल की बावड़ी खुदवाऊं और महल भी हो यह बनवाते बनवाते वह तुम्हारा धन खर्च होगया और रहा सो तुम्हारी स्त्री और लड़कों ने ले लिया, कुछ भाई, बन्धु, मित्र लेगये । थोड़े दिन पीछे तुम्हारा देहान्त होगया तो यमराज के दूतों ने शिर के बाल पकड़ कर तुमको खेंचा और बहुत कोड़े मारे, सारे शरीर में तुम्हारे कांटे लग गये शिला पर पटक कर तुमको पछांटा, घोर नरक में जहां राध लोही का कीचड़ हो रहा था वहां तुमको डुबो दिया जब यमराज के रोबरू पेश हुए तो चित्रगुप्त से पूछा गया यमराज ने तुमसे पूछा, कि कहो पहले तुम पुण्य का फल भोगोगे या पाप का। तो तुमने जवाब दिया कि हे यमराज मैं पहले पुण्य का फल भोगूंगा, तब आप सौराष्ट्र देश में राजा बनाये गये, तुमको शरण आये जानकर दया करके अपनी तपस्या के बल का आश्रय लेकर मैंने तुम्हारे पिछले जन्म के पाप की कथा कही है, बहुत कान्ति वाला अर्थात् सुन्दर मंदिर बनवाने से तुम सोमकांत राजा बने और तुमको रानी तुमसे भी अधिक कांति वाली मिली, जो चन्द्रमा की तरह अपनी कांति से शोभायमान होती है ।

## सूतजी बोले ।

वह नीच राजा सोमकांत भृगुजी के कथन को सुनकर पत्थर [illegible] निश्चल होकर चुपचाप हो गया जो भृगुजी वेद शास्त्र सबके [illegible] आगे पीछे की सब बातें जानते थे, तपस्वी थे, उनके वचनों पर [illegible] हुआ और विश्वास नहीं हुआ, चण भर में उसके शरीर में से [illegible] पत्ती उड़कर निकले और उस राजा को खाने लगे, उड़ २ कर चों[illegible]

सलिये
तन्त्र
है ।
और

नृपति को छेद डाला, उसका मांस ऊखाड़ उखाड़ कर मुनि के सामने खाने लगे फिर बहुत दुःखी होकर मुनि की शरण आया और दीन वचन कहते हुए भृगुजी से बोला।

## राजा बोला।

आपके इस वन में जो स्वाभाव से ही वैरी हैं, वे भी वैर छोड़ देते हैं, फिर आपके सामने मुझ मरे हुएंको यह कैसे मारते हैं, मैं आपके चरणों में पड़ा हूँ, दीन हूं, आपकी शरण आयाहूँ, कोढ़ी हूँ, आप सब लायक हैं, अभय करो, मुझे इनसे छुड़ाओ। इस प्रकार दीन जिसके प्यारे हैं, ऐसे भृगुजी को जब उसने फिर ऐसा कहा तो, उन्होंने जवाब दिया कि मेरे बचनों पर तुमको सन्देह हुआ, इस लिये राजा ऐसा अनुभव तुमको कराया है, इसका प्रतीकार ( उपाय ) मैं बतलाता हूं, क्षण भर ठहरजा, मेरी हुँकार से ही यह पक्षी चले जावेंगे।

## भृगुजी ने कहा।

ब्राह्मण की हुँकार सुनते ही सब पक्षी अन्तर्ध्यान होगये और राजा रानी और दोनों मुसाहिब बड़े प्रसन्न हुए ॥ ८ ॥ ४१ ॥

---

# नवां अध्याय।

॥ भृगुजी का राजा को उपदेश ॥

## सूतजी बोले

फिर भृगु मुनि ने कुछ देर ध्यान करके देखा, कि राजा के पहले के कर्मों [illegible] बड़े दुःखदायी हैं, इससे मनमें बहुत दुःखी हुए और राजा से [illegible] तो तुम्हारे पापों के समूह, कहाँ मेरे बताये उपाय, फिर भी मैं एकाक्षर मंत्र करने का एक उपाय और बतलाता हूँ, वह यह है, कि यदि होगया, मायागणेश पुराण की कथा सुनो तो दुःखों के सागर से तुम्हारा सत्वगुण, रजवे, इसमें सन्देह नहीं। यह श्री गणेशजी के १०८ नाम उसको तीनों उत्पन्न नसे जलमन्त्र कर राजा को छींटे दिये, जलके छींटे लगते ही

उसकी नाक से एक काले मुँह का छोटा सा ( बालक ) जमीन पर गिर पड़ा थोड़ी देर में वह सात ताड़ लम्बा होगया, मुँह फाड़े हुए बड़ा डरावना, कराल जीभ वाला, लाल नेत्र वाला जिसके लम्बी २ बाहें हैं, जटा रक्खे हुए हैं, मुँह से आग उगलता था, थोड़ी देर में राध, लोहू फैल गया, सब की आँखों में अन्धेरा छागया, मानों वह साक्षात् दूसरा अन्धकार ही था, उसको देखकर सब आश्रमवासी भाग गये, वह बड़े जोर से दाँत कड़कड़ाने लगा, दशों दिशाओं में उसका शब्द भर गया। भृगुजी ने उसके सामने ही उससे पूछा कि तुम कौन हो, हमने तुमको नहीं पहिचाना, आप अपना नाम बतलाओ तो उसने उत्तर दिया, कि मैं प्रत्येक प्राणी के शरीर में रहने वाला पुरुष हूँ, आपके मन्त्र जलके लगने से राजा के शरीर से निकला हूँ, अब मैं कुछ खाना चाहता हूँ, मुझे भूख सताती है, कुछ खाने को बताओ, नहीं तो आपके सामने सब लोगों को और सोमकान्त को खाजाऊंगा और जो मुझको यहाँ से निकाला है, इस लिये रहने को अच्छा स्थान बताओ, तब मुनि ने बाहर आकर ( एक वृक्ष की तरफ इशारा करके ) कहा, कि हे नीच ! मेरे हुक्म से इस सूखे आमके खोकले में तू रह और गिरे हुए पत्ते खा, यदि ऐसा नहीं करेगा तो मैं तुझको भस्म कर दूंगा। हे अधम ! मेरा वचन झूंठा नहीं है, इस तरह मुनिके कह चुकने पर उसने उस सूखे वृक्ष को छूआ तो वह जलगया, मुनि के दर्शन से डरा हुआ वह पाप पुरुषभी उसही में जल मरा, उसमें रहने वाले पक्षी उसके छूने से ही चिल्ला उठे, उसके वहाँ जल मरने पर मुनि ने सोमकान्त से कहा। हे राजा ! जब पुराण सुनोगे तो उसके पुण्य से यह आम का वृक्ष फिर खड़ा हो जावेगा, इस जले हुए में से दूसरा वृक्ष उगेगा और वह दिन-दिन बढ़ेगा, ज्यों २ वह बढ़ता जावेगा, त्यों २ तुम्हारे पाप कटते जावेंगे।

## राजा ने कहा

ऐसा श्रीगणेश पुराण मैंने न कभी पहले देखा न सुना मिलेगा और उसका कहने वाला कहाँ है।

## भृगुजी ने कहा

पहले वेदव्यास जी को ब्रह्मा ने कहा, उन से मुझे मालूम

पापों का नाश करने वाला है, वो मैं तुमसे कहूंगा तीर्थ में जाकर स्नान कर आवो और सकल्प करो कि मैं श्रीगणेश पुराण सुनूँगा । भृगुजी के ऐसे कहने पर विख्यात भृगुतीर्थ पर स्नान करके सोमकान्त ने खुशी से सङ्कल्प किया, कि मैं आज से श्रीगणेश पुराण सुनूँगा, इस सङ्कल्प ही से वह निरोग होगया, भृगुजी की कृपा से उसका लोहू बहना बन्द होगया, कीड़े भी जाते रहे और घाव भी नहीं रहे, भृगुजी तब उठकर राजा सोमकान्त को जो आश्चर्य युक्त और प्रसन्न हो रहा था उसका हाथ पकड़ कर उठा ले गये और आसन दिया, आसन पर बैठ कर राजा ने जिसकी दिव्य कांति होगई थी, यों कहा । आपकी कृपा से मेरे सब अरिष्ट दूर हुए, केवल सङ्कल्प करने ही से मेरी तकलीफें जाती रहीं, यह बड़े आश्चर्य की बात है, आप श्रीगणेशजी का पुराण सुनाइये ।

## भृगु जी बोले

तुम सावधान होकर सुनो ! मैं [illegible] सको उनका पुराण सुनाता हूं, अनन्त पुण्यों से जो सुना जा सकता है, पाप करने वालों की बुद्धि सुनने में भी नहीं होती, जिसके सुनने ही से अनेक जन्मों के कमाये हुए छोटे, बड़े, सूखे, गीले और बड़े पाप श्रीगणेश जी की कृपा से फौरन नष्ट हो जाते हैं । श्रीगणेशजी अव्यय हैं, जिनका नाश नहीं हो सकता, जिनका पार नहीं पा सकते, निर्गुण और निराकार हैं, मन और वाणी से नहीं बताये जा सकते, केवल आनन्द स्वरूप हैं, मैंने बड़े तेजस्वी अतीन्द्रिय ज्ञानवान व्यासजी के मुख से जैसा सुना है तुम से कहूंगा, उनकी महिमा कौन कह सकता है । मेरी भी बुद्धि उनकी महिमा करने में समर्थ नहीं है, जिनके स्वरूप को ब्रह्मा, शिव, वगैरह देव [illegible]भी नहीं जानते और शेषजी भी जिनकी महिमा का वर्णन नहीं कर सकते, बड़े ज्ञानी भी उनका माहात्म्य नहीं कह सकता, मुद्गलजी से यज्ञ [illegible] से दुःखी दक्ष ने यह पुराण सुना, जिसकी भक्ति श्रीगणेशजी जो एकाक्षर मंत्र की आ[illegible] हैं, उनमें हो वह इस पुराण को सुने और सुनावे, इसी होगया, मायामयी [illegible]सुनाता यदि सब ही लोग श्रीगणेशजी जो विघ्नों के सत्वगुण, रजोगुण, [illegible]रें तो फिर सब विघ्न कहाँ सुखसे रहैं, नाना प्रकार के तीनों उत्पन्न हुए, [illegible] दुःख कौन भोगैं, अवश्य भूत, भविष्य और

वर्तमान काल के जानने वाले व्यासजी ने इस पुराण को यह जानकर पहले बनाया, कि कलियुग में पापी कुटिल लोग होंगे, जो जाति सङ्कर होंगे, वेदों के अर्थ जानेंगे नहीं न वेद पढ़ सकेंगे और वर्णाश्रम के आचार्य से भी रहित होंगे, फिर धर्म्म की रक्षा के लिये १८ पुराण बनाये, फिर उपपुराण बनाये जिसका अर्थ लोग जान सकेंगे, श्रीगणेश जी का स्वरूप वही लोग जान सकते हैं, जिन्होंने इसको सुना हो ॥ ९ ॥ ३९ ॥

---

# दसवां अध्याय ।

॥ व्यासजी का सवाल करना ॥

## भृगुजी बोले

नारायण के अन्श से पैदा हुवे पराशरजी के पुत्र व्यास मुनि ने जो परोक्ष की बात जानने वाले थे, वेद और शास्त्र के अर्थों के तत्त्व को जानने वाले थे चारों भाग वेद के बनाकर उनकी ज्ञान की सिद्धि के लिये अपनी विद्या के मद के अभिमान में पुराण कहना आरम्भ कर दिया और समाप्ति का जो साधन मंगलाचरण होता है, नहीं किया, न श्री गणेशजी को नमस्कार किया न कहीं उनकी स्तुती की तो यह हुआ कि विघ्नों के कारण किसी का भी अर्थ उनको याद नहीं रहा, सांसारिक अथवा दैवी नित्य के अथवा किसी कार्य्य विशेष से किये जाने वाले वैदिक कामों में वेद और शास्त्र की व्याख्या करने बैठे तो सब कुछ जानने वाले होते हुए भी ऐसे होगये जैसे कोई बड़ा ज़हरीला सर्प दवा और मन्त्रों के जोर से निजोरा हो जाता है। इस प्रकार अपनी आत्मा के अन्दर रुक गये, इसका कारण समझ में नहीं [illegible] व्यासजी ब्रह्माजी से आदर पूर्वक पूछने को सत्यलोक में [illegible] लिये लज्जावान हुये, देवताओं को और देवर्षियों को तथा [illegible] न सुन [illegible] न्त्र करके उनके बताये हुये आसन पर बैठे, ब्रह्माजी ने उन [illegible] व्यासजी ने ब्रह्माजी के चरण छुए और आदर से ब्रह्मा [illegible]

## व्यासजी बोले कि

हे ब्रह्माजी मेरे अकस्मात् यह एक अद्भुत बात कैसे पैदा होगई, कि जब मैं वेद और पुराणों का अर्थ करने लगा तो मैंने देखा कि सम्पूर्ण लोग ज्ञान और आचारहीन हैं, कलियुग में जड़ कर्म्म और मूर्ख नास्तिक, वेद निन्दक होंगे तो विधि और निषेध अर्थात् क्या करना चाहिये,क्या नहीं करना चाहिये, इत्यादकों मेरे वाक्य से जानैं। इस लिये वेद पुराणों की रचना और उनके अर्थ कहने बैठा तो मेरा भी ज्ञान जाता रहा और मैं मदिरा पीने वाले की तरह वहम में पड़ गया, कोई कारण मेरी समझ में नहीं आता न मुझे फ़ुरती है, उसका (नहीं फ़ुरने का) कारण मैं आपसे पूछने आया हूँ। हे ब्रह्माजी आपके सिवाय मैं किसकी शरण लूं, आप सर्वज्ञ हैं, सब करने वाले हैं, मेरा वहम मिटावो, हे ब्रह्माजी आप नारायण स्वरूपी मेरे वहम का कारण बताओ, मैं नित्य आचारयुक्त हूँ, सब जानने वाला हूँ और सद्रूप हूँ।

## सूतजी बोले

व्यासजी के इस प्रकार के बचन सुनकर और विचार करके ब्रह्माजी विनीत उस मुनि से हँसकर आश्चर्य सा दिखाते हुये बोले।

## ब्रह्माजी ने कहा कि

मैं तुमसे कहता हूँ कि कर्म्मों की गति सूक्ष्म है विचार कर काम करना चाहिये, तब तो ठीक होता है, नहीं बिगड़ जाता है। आदमी करता कुछ है, हो कुछ जाता है,बुद्धि से युक्ति से और सरलता से छोटे बड़े काम सिद्धि को प्राप्त होते हैं,अभिमान और मत्सरता से छोटे बड़े काम सिद्ध नहीं होते,गर्व के कारण ग[illegible]जी सवारी में आगये, मत्सर से ही स्वाम-कार्तिक ने सब कुछ नष्ट कर [illegible] राम ने क्षत्रियों का बीज नाश कर डाला, जो श्री गणेशजी [illegible]का नाश कभी नहीं होता, जगत् के कर्त्ता हैं, जगत्स्वरूप हैं, [illegible]करते हैं और नाश करने वाले हैं, सत् असत् और अव्यक्तरूप अर्थात् कभी नाश होने वाले नहीं हैं जिनकी सदा यह शक्ति

एकाक्षर मंत्र की अ
होगया, मायामयी
सत्वगुण, रजोगुण,
तीनों उत्पन्न हुए,

है कि जो चाहें सो करें, जिनकी आज्ञा में सदा देवता इन्द्रादिक हैं। मैं विष्णु, शंकर, सूर्य, अग्नि वरुणादि सदा रहते हैं, जो भक्तों के विघ्नों का नाश करते हैं और दुष्टों के कामों में विघ्न डालते हैं तुमने अपनी विद्या के बल के आश्रय से उनसे गर्व किया, अपने को सर्वज्ञ जान कर उनका पूजन् नहीं किया न प्रथम उनका स्मरण किया न और किसी देवता को याद किया, इससे तुमको भ्रम होगया। सब कामों के आदि में किसी मकान या नगर में घुसते हुये या बाहर जाते हुए, वैदिक कामों या सांसारिक कामों में यदि उनको याद नहीं करें तो विघ्न होते हैं, जिनको परमानंद कहते हैं, परमगति कहते हैं जो परब्रह्म हैं, वेद और शास्त्र के अर्थ दिखलाने वाले हैं। हे पुत्र! आदर पूर्वक उनकी शरण लो, वह भगवान् प्रसन्न होकर तुम्हारी मनसा पूरी करेंगे, नहीं तो हज़ारों वर्ष तक अपनी इष्ट-सिद्धि नहीं पा सकते।

### व्यासजी पूछते हैं कि।

ऐसे श्री गणेशजी कौन हैं, उनका कैसा स्वरूप है और कैसे जाने जावें। हे ब्रह्माजी! पहले किस पर प्रसन्न हुए हैं, उनके कितने अवतार हुए हैं और उन्होंने क्या २ काम किए हैं पहले उनकी पूजा किसने की है, कब २ उनको याद किया गया है। हे पितामह! आप करुणा के आप खजाने हैं, इसलिये पूछते हुये विक्षिप्त चित्त वाले मुझको यह सब विचार से कहिये ॥२१॥१०॥

---

## ग्यारहवां अध्याय।

॥ मन्त्र बताना ॥

### भृगुजी बोले

व्यासजी के सवाल करने पर फिर ब्रह्माजी ने कहा कि निचार कर धीरे २ मैं सब श्री गणेशजी के मन्त्र तुमसे कहूँगा।

### ब्रह्माजी ने कहा

हे मुनि महात्मा! श्री गणेशजी के बहुत से मंत्र हैं, ज

वाली उपासना तुमको बताता हूं, वेद शास्त्र में श्रीगणेशजी के सात करोड़ महामन्त्र हैं, इसका रहस्य शिवजी जानते हैं और कुछ २ मैं जानता हूँ, उनमें से एक अक्षर वाला और छः अक्षरों वाला मन्त्र श्रेष्ठ है, जिनके याद करते ही सब काम सिद्ध हो जाते हैं, जिनकी उपासना से सब काम होते हैं, जिनकी उपासना से सारी सिद्धियां दासी बन जाती हैं, जो श्री गणेशजी की भक्त-भाव पूर्वक उपासना करते हैं वे जीवन से मुक्त होकर मोक्षपद को प्राप्त होते हैं, वे धन्य हैं, पूजनीय हैं और देवता भी उनको नमस्कार करते हैं, वह अपनी इच्छा से सब जगह घूमते हैं, सब जानने वाले होते हैं और उनके अनेक रूप होते हैं। जिनके लेशमात्र भी भक्ति नहीं है, उनका जन्म व्यर्थ है। जो गजानन से विमुख हैं उनका मुख नहीं देखना चाहिये, उनके देखने से पेड़ २ पर विघ्न होते हैं, उनके उपासक के दर्शन से विघ्न नष्ट होते हैं, स्थावर और चर प्राणिमात्र उसको नमस्कार करते हैं, इस वास्ते मैं कल्याण-कारी एकाक्षर मन्त्र तुमको बताता हूँ, उसके अनुष्ठान से ही मनवांछित फल पावोगे। अनुष्ठान भी जैसा शिवजी ने मुझको बताया है वैसा ही बताता हूँ, शुद्ध होकर स्नान करके धुले हुए वस्त्र पहने, मृगचर्म के आसन को अच्छी अच्छी बुद्धि वाला डाभ से युक्त करके बैठे, भूत शुद्धि करके प्राण प्रतिष्ठा करे, भीतर बाहर की इन्द्रियों का मातृकाओं का न्यास करे, ऊंगे नहीं, प्राणा-याम करै, मूल मन्त्र को मन में जपै, शास्त्र में बताई हुई विधि से मन्त्र संख्या करे, निश्चल चित्त होकर श्री गणेशजी के सम्पूर्ण अङ्ग का ध्यान करै, भली भांति मानसिक पूजा करै, पुरश्चरण के ढंग से यथाशक्ति जप करै, जब तक श्री गणेशजी वर देने को प्रसन्न न हो जावें और जब तक वे अपने दर्शन न देवें, तब तक जप करता रहे।

## भृगुजी बोले

एकाक्षर मंत्र की आकाङ्क्षकर ब्रह्माजी ने अच्छा दिन देखकर श्री एकार्ण होगया, मायामयी विका सभ्रान्त मुनि को सिखाया।

सत्वगुण, रजोगुण, तमो

## ब्रह्माजी ने कहा

तीनों उत्पन्न हुए, यह

ान तेजवाले वर देने को आते हुए, उनको जब देखो

तो चित्त को स्थिर करना । हे गजानन ! मेरे चित्त में नित्य स्थिर रहो । यह ध्यान करना, जो वर तुम मांगोगे वह वे अवश्य देवेंगे, जब वे भगवान् हृदय में विराजेंगे तब तुमको दिव्यज्ञान प्राप्त होगा । भूत, भविष्य, वर्तमान तुमको पूरे तौर पर दिखाई देने लगेगा । हे पुत्र ! इस भ्रान्ति को छोड़कर तुम अनेक ग्रन्थ निर्माण करोगे ।

(व्यासजी ने कहा)

हे पिताजी आपके उपदेश करते ही मेरी भ्रांति जाती रही और आपकी आज्ञा से मैं अनुष्ठान करूंगा ।

(ब्रह्माजी ने कहा)

एकांत स्थान में जहाँ मनुष्य आते जाते न हों और चित्तको व्यग्रता न हो, श्रीगणेशजी का स्मरण करके अनुष्ठान करो । नास्तिक निंदा करने वाले, क्रूर स्वभाव वाले, आचार हीन मनुष्य को मूर्ख और शठ को इस मन्त्र का उपदेश मत करना । इसही प्रकार शरण आये हुए पूरी भक्ति वाले श्रद्धा रखने वाले नम्र और वेद वादी को, आकांक्षा वाले को और निन्दा करने वाले को, शास्त्र के जानने वाले को यह मन्त्र देना, जो इस प्रकार पात्र न हो उसको मन्त्र दिया जावे तो दश पीढ़ी अगली, दश पीढ़ी पिछली नरक में पड़ती हैं, जो भक्ति पूर्वक जप करै तो वांछित फल पाता है. पुत्र पौत्र होंगे और धन धान्य भी होगा । श्री एक दन्त के प्रभाव से निर्मल ज्ञान प्राप्त करके इस लोक में सब भोगों को भोगकर अन्त में मोक्ष पावेगा ॥

---

# बारहवाँ अध्यायः ।

॥ श्री गणेशजी के दर्शन होना ॥

ब्रह्माजी के मुख से यह वचन सुन कर बड़े प्रसन्न [illegible]
ब्रह्माजी से फिर पूछा, कि आपके वचनामृत को पीकर [illegible]
हे पिताजी ! मैं आपसे मंत्रराज जानना चाहता हूँ । कि [illegible]

श्रीगणेशजी से किसने कैसे सिद्धि पाई, यह मेरा सन्देह मिटावो, आपके सिवाय मेरा और कोई गुरू नहीं।

भृगुजी ने कहा, हे राजा! इस प्रकार व्यासजी के पूछने पर उनके नम्र भाव को देखकर कृपा करके समस्त बड़े बोलने वालों में श्रेष्ठ ब्रह्माजी बोले, तुमने बहुत ही अच्छा पूछा, तुम पुण्यवान् हो, जो पापी होते हैं उनको कथा सुनने में प्रेम नहीं होता। मैं यह तुमको पहले उपासना मार्ग भली भांति समझाता हूं, जिसकी शिष्य पर प्रीति हो और जो बुद्धि में विशेष हो उससे गुरू को कुछ छिपाना नहीं चाहिये, मैं तुमसे कहता हूँ कि श्रीगणेशजी ॐकार रूपी हैं, सब कामों में जो निर्विघ्नता पूर्वक समाप्ति चाहते हैं, वे उनको पूजते हैं, अन्यथा वे विघ्न करते हैं। उनके मन्त्र ॐकार बीज युक्त और जिनमें ॐकार ही पल्लव अर्थात् पत्ते लग रहे हैं, सब शास्त्रों में ऐसे ही कहा है, दूसरे मन्त्र निष्फल हैं, श्रीगणेशजी सत् असत् व्यक्त अव्यक्त सब कुछ हैं इस प्रकार सब देवता सिद्ध मुनि, राक्षस, किन्नर, गंधर्व, चारण, नाग, यक्ष, गुह्यक और मनुष्य, चर और अचर सारी सृष्टि श्रीगणेशजी की उपासना करती है। इसलिये श्रीगणेशजी से बढ़कर और कोई नहीं है। अब मैं तुमको एक पुरानी कथा सुनाता हूँ, किस प्रकार इस मन्त्रराज के जप करने से श्रीगणेशजी प्रसन्न हुए। एक बार दैवयोग से प्रलय होगया, हवा के ज़ोर से पहाड़ टूट कर चौतरफ दिशाओं में पड़ गये, १२ बारह सूर्य भी खूब तपे और सारा जल सूख गया, अग्नि में बड़ी २ ज्वालाएं उठीं और उन्होंने सब कुछ जला डाला, हाथी की सूंड़ जैसी मोटी २ धाराओं से मेह बरसा और चौतरफ जल ही जल होगया, समुद्र और नदियों ने अपनी मर्य्यादा छोड़ दीं, इस प्रकार ब्रह्म से लगाकर स्थावर तक सब कुछ नष्ट होजाते हैं, माया रूपी विकार भूत संसार के नष्ट होने पर श्रीगणेशजी बहुत छोटा सा रूप धारण करके कहीं ठहरे हुए थे, जब बहुत देर ऐसा अन्धकार छाया हुआ रहा तब एकाक्षर मंत्र की आकाशवाणी हुई, फिर वैकारिक रूप आनन्दमय उपस्थित होगया, मायामयी विकार को ग्रहण करके श्रीगणेशजी प्रगट हुए, उनसे सत्वगुण, रजोगुण, तमोगुण उत्पन्न हुए, उनसे विष्णु, ब्रह्मा और शिवजी तीनों उत्पन्न हुए, यह चराचर तीनों लोक माया से रचे, फिर उनकी माया

से यह तीनों देवता भटकते फिरे, उन ही को अपना पिता देखा और पूछना चाहा कि हम क्या काम करें, ऊपर २१ स्वर्ग दिखाई दिये फिर अन्तरिक्ष है, तिर्यक है, फिर पाताल हैं, वहाँ आये परमात्मा को न देखकर और निराहार हजारों दिव्य वर्ष तक तप करते २ थक गये, तब दुःखी होकर पृथ्वी पर ढूंढते फिरे, बन और उपवन, सागर, पहाड़ उनके शिखरों पर ढूंढते फिरे तो उनको सामने एक बहुत बड़ा तालाब दिखाई दिया, जिसमें नाना प्रकार के जल के जीव थे, वृक्ष थे, जिनपर नाना प्रकार के पक्षी थे, बगुले, चकवे, हंस और सारस थे, कमल के तन्तुओं को खा रहे थे, उससे कमलिनी समूह गूंज रहा था, उसके तीर पर स्नान करके विश्राम किया और फिर विचार किया कि इसको तैर चलें, परन्तु इसमें बहुत सी लहरें उठ रही हैं, इसमें मच्छ हैं, मगर हैं, यह मनुष्यों के बहुत कठिनाई से तैरने योग्य हैं, यह प्रलयाग्नि की तरह उनको दिखलाई दिया, उनको करोड़ों सूर्यों के तेज के समान प्रकाश दिखाई दिया, उनकी दृष्टि तो तेज से जाती रही और चिंता हुई, फिर भूखे-प्यासे थके हुए हांपते २ अपनी निंदा करते हुए और अपने आपको शाप देते हुए भय युक्त हुये, बड़े कष्ट से आकाश मार्ग से उस तेज में होकर बाहर निकले तो सब कुछ जानने वाले लोकों के स्वामी में करुणा करके उनको अपना स्वरूप दिखलाया जो मन और नेत्रों को आनन्द देने वाला था, चरणों की उँगलियों के नखों में से ऐसा नूर बरसता था, जिसके आगे लाल कमल की केसर भी कुछ नहीं, लाल वस्त्र ऐसे प्रभावशाली जँचते थे, कि सन्ध्या के सूर्य का मंडल भी उनके सामने कोई चीज नहीं, कणगती ऐसी देदीप्यमान थी कि सुमेरु का शिखर उसके सामने कुछ नहीं, चारों हाथों में खड्ग, खेट, धनुष और शक्ति शोभायमान थे, नासिका सुन्दर थी, मुख कमल पूर्णिमा के चांद की शोभा को हर लेता था, नेत्र दिन रात खिले रहने वाले कमल के समान सुन्दर थे, बहुत से सूर्यों की शोभा का जीतने वाला मुकुट मस्तक पर शोभायमान था, जिस प्रकार आकाश में तारे चमक रहे हों, ऐसा दुपट्टा था, एक दंत ऐसा सुन्दर था, कि उसके सामने बराह की दाढ़ भी कोई चीज नहीं, ऐरावत आदि दिग्गज जिनकी सूंड़ को देखकर डर गये, ऐसा प्रसन्न खिला हुआ चहरा था, यकायक ऐसे स्वरूप को देखते

---

श्रीगणेश जी के स्वरूप का वर्णन है।

ही उन्होंने प्रसन्न होकर नमस्कार किया और चरण कमलों को पकड़ कर स्तुति करने लगे ॥ ३८ ॥ १२ ॥

---

# तेरहवां अध्याय ।

—: ब्रह्माजी का स्तुति करना :—

पंचास्य पांच मुख वाले शिवजी, चार मुख वाले ब्रह्माजी और हज़ार मस्तक वाले शेष जी ने किस प्रकार गजमुख वाले श्रीगणेशजी को प्रसन्न किया ।

ब्रह्माजी ने व्यासजी से कहा, कि विघ्नों के स्वामी श्रीगणेशजी को प्रसन्न होते देखकर उनकी कृपा से बुद्धि का प्रसाद पाकर उन्होंने इस प्रकार उनकी स्तुति की ।

## ब्रह्मा विष्णु महेशा उचुः

अजं निर्विकल्पं निराकारमेकं निरानन्दमानन्दमद्वैत पूर्णं ।
परं निर्गुणं निर्विशेषं निरीहं परब्रह्मरूपं गणेशं भजेम ॥ १ ॥

नहीं जन्म लेने वाले विकल्प से रहित निराकार एकमात्र निरानंदरूप द्वैत रहित आनन्द से पूर्ण सब से परे, तीनों गुणों से रहित, जिनसे कोई बड़ा नहीं, भयभेद रहित इच्छा से रहित और परब्रह्म स्वरूप ऐसे श्रीगणेशजी की हम स्तुति करते हैं ॥ १ ॥

गुणातीतमाद्यं चिदानंदरूपं चिदाभासकं सर्वगं ज्ञानगम्यं ।
मुनिध्येयमाकाशरूपं परेशं परब्रह्मरूपं गणेशं भजेम ॥ २ ॥

सब गुणों से रहित आदि चिदानन्दरूप सर्वदा प्रकाशमान सब जगह पहुँचने वाले, ज्ञान से ही जानने योग्य, मुनि जिनका ध्यान करते हैं आकाश की तरह सर्व व्यापक सबसे बड़े स्वामी ऐसे परब्रह्मस्वरूप श्रीगणेशजी की हम स्तुति करते हैं ॥ २ ॥

जगत् कारणं कारणज्ञानरूपं सुरादिं सुखादिं युगादिं गणेशं ।
जगद्व्यापिनं विश्वनंद्यं सुरेशं परब्रह्मरूपं गणेशं भजेम ॥ ३ ॥

जगत् के कारण, कारण के भी ज्ञानरूप देवताओं में आदि सुखों के आदि युगों के आदि गणों के स्वामी जगत् में व्याप्त संसार को सुख देने वाले देवताओं के स्वामी ऐसे परब्रह्म स्वरूप श्रीगणेशजी की स्तुति करते हैं ॥ ३ ॥

रजो योगतो ब्रह्मरूपं श्रुतिज्ञं सदा कार्य सक्तंहृदाचिंत्यरूपं ।
जगत्कारकं सर्व विद्या निधानं परब्रह्मरूपं गणेशं नतास्मः ॥ ४ ॥

रजोगुण के योग से आप ब्रह्मरूप हैं, वेदों के जानने वाले हैं, सदा काम में लगे हुए हैं और हृदय से जिनका रूप नहीं सोचा जा सकता संसार के करने वाले सब विद्याओं के स्थान ऐसे परब्रह्म स्वरूप श्रीगणेशजी को हम नमस्कार करते हैं ॥ ४ ॥

सदा सत्वयोगं मुदा क्रीडमानं सुरारी न्हरंतं जगत्पालयंतं ।
अनेकावतारं निजाज्ञानहारं सदा विष्णुरूपं गणेशं नमामः ॥ ५ ॥

सर्वदा सतोगुण के योगसे प्रसन्नता पूर्वक खेलने वाले हैं, देवताओं के शत्रु, राक्षसों का नाश करने वाले और संसार के पालन करने वाले हैं, अनेक अवतार लेकर अपने जनों के अज्ञान को नष्ट करने वाले सदा विष्णु स्वरूप श्री गणेशजी को हम नमस्कार करते हैं ॥ ५ ॥

तमो योगिनं रुद्ररूपं त्रिनेत्रं जगद्धारकं तारकं ज्ञान हेतुं ।
अनेकागमैः स्वजनं बोधयंतं सदा सर्वरूपं गणेशं नमामः ॥ ६ ॥

तमोगुण के योग से बड़े डरावने रूपवाले, तीन नेत्र वाले, जगत् के नाश करने वाले और इस संसार से तारने वाले, ज्ञान के कारण अपने भक्तों को सारे शास्त्र सिखाने वाले, सदा कल्याण रूप श्रीगणेशजी को हम नमस्कार करते हैं ॥ ६ ॥

तमस्तोमहारं जना ज्ञानहारं त्रयी वेदसारं परब्रह्म पारम् ।
मुनि ज्ञानकारं विदूरे विकारं सदा ब्रह्मरूपं गणेशं नमामः ॥ ७ ॥

अन्धकार के समूह को नष्ट करने वाले, अपने भक्तों के अज्ञान का नाश करने वाले, तीनों वेदों के सारभूत, परब्रह्मके पाररूप, मुनियों को ज्ञान देने वाले, विकार को दूर करने वाले, ऐसे ब्रह्मरूप श्रीगणेशजी को हम नमस्कार करते हैं ॥ ७ ॥

निजै रोषधीस्तर्पयंतं करौघैः सुरौघान् कलाभिः सुधास्राविणीभिः ।
दिनेशांशु संतापहारं द्विजेशं शशांक वरूपं गणेशं नमामः ॥ ८ ॥

अपनी किरणों के समूह से सम्पूर्ण देवताओं को सींचने वाले, अमृत बरसाने वाले, कलाओं से देवताओं को तृप्त करते हुए सूर्य की किरणों के संताप

को हरने वाले, ब्राह्मणों के स्वामी चन्द्रमास्वरूप, श्रीगणेशजी को हम नमस्कार करते हैं ॥ ८ ॥

प्रकाशस्वरूपं नभोवायुरूपं विकारादिहेतुं कला काल भूतं।
अनेक क्रियानेक शक्ति स्वरूपं सदा शक्तिरूपं गणेशं नमामः ॥ ९ ॥

प्रकाशही है स्वरूप जिनका आकाश और वायुरूप विकारादिके कारण कला और काल जिनसे पैदा हुए हैं, अनेक क्रियाओं की अनेक शक्ति स्वरूप ऐसे सर्वदा शक्तिरूपी श्री गणेशजी को नमस्कार करते हैं ॥ ९ ॥

प्रधानस्वरूपं महत्तत्त्वरूपं धरा वारि रूपं दिगीशादिरूपं।
असत्सत्स्वरूपं जगद्धेतुभूतं सदाविश्वरूपं गणेशं नतास्मः ॥ १० ॥

प्रकृतिस्वरूप महत्तत्त्वरूपी पृथ्वी और जलरूपी दिशाओं के स्वामीरूपी असत् और सत् स्वरूपी जगत् के कारण ऐसे सर्वदा संसार रूपी श्रीगणेशजी को हम नमस्कार करते हैं ॥ १० ॥

त्वदीयेमनः स्थापये दंघ्रियुग्मे जनो विघ्नसंधान् न पीडां लभेत्।
लसत्सूर्य बिंबे विशाले स्थितोयं जनो ध्वांत बाधा कथं वा लभेत् ॥११॥
वयं भ्रामिताः सर्वथा ज्ञानयोगात् अलब्धास्तवांघ्रि बहून्वर्षपूगान्।
इदानी मवाप्तास्तवैवप्रसादात् प्रपन्नान्सदा पाहि विश्वंभराद्यः ॥ १२ ॥

आपके दोनों चरण कमलों में अपना मन लगा देने से मनुष्य विघ्नों से नहीं सताया जाता, जैसे प्रकाशमान सूर्यके बड़े बिंब में बैठा हुआ मनुष्य कभी अंधेरे की तकलीफ नहीं पाता, हम हर तरह से अज्ञान के कारण बहुत वर्षों तक भटकते हुए फिरे और आपके चरणों में नहीं आये. अब हम आपकी कृपासे आपके चरणों की शरण आये हैं, हे संसार के स्वामी हमारी रक्षा करो।

ब्रह्माजीने कहा, हे मुनि इस प्रकार स्तुति करनेसे प्रसन्न होकर कृपा करके श्रीगणेशजी को कहने लगे। जिस वास्ते तुमने तकलीफ उठाई और यहां आये, मैं इस स्तुति से प्रसन्न हुआ, वर मांगो। आत्म तत्त्व जानने वाले आप लोगों ने जो जो मेरी प्रार्थना की है, मेरी आज्ञा से यह स्तोत्रराज कहलावेगा, सवेरे उठकर जो कोई बुद्धिमान् इसका पाठ करे, वह और तीनों काल की सन्ध्या के समय भक्ति से शुद्ध होकर जो इसका पाठ करेगा, वह पुत्रवान्, लक्ष्मीवान् होगा, उसकी कामनाऐं पूरी होंगी और अन्तमें वह परब्रह्मरूप हो जावेगा।

ब्रह्माजी ने कहा,इस प्रकारसे उनके वचन सुनकर सन्तुष्ट हुये और वे बोले कि आपकी निगाह से रजोगुण सतोगुण और तमोगुण से हमारी सृष्टी हुई है हे संसारके उत्पन्न और नाश करने वाले यदि आप हमसे प्रसन्न हैं तो हमको आपके चरण कमलों की ऐसी भक्ति प्रदान करै जो कभी डिगै नहीं और हमको यह आज्ञा दीजिये कि हम क्या क्या करैं, यही वर हम आपसे मांगते हैं, इस प्रकार उनके वचन सुनकर फिर श्रीगणेशजी ने फरमाया, कि हे महा भागो बड़े भाग्य वाले, हे देवताओ मुझमें आपकी दृढ़ भक्ति होगी, जिससे आप लोग बड़े बड़े कष्टों से तैरैंगे, आपकी नामवरी के लिये आपको जुदा जुदा काम बताता हूँ। हे रजोगुण से उत्पन्न होने वाले ब्रह्माजी तुम सृष्टि करो, सत्वगुण पर आश्रय करनेवाले विष्णु तुम व्यापक हो,पालन करो। तमोगुण से उत्पन्न होने वाले शिवजी तुम सबका संहार करो।

ब्रह्माजी बोले, वेद, शास्त्र, पुराणों की सृष्टि की शक्ति और दूसरी विद्याएँ मुझ ब्रह्मा को आदर से उन्होंने प्रदान की, विष्णु को श्रीगणेशजी ने योग से स्वच्छंद रूप दिया, एकाक्षर षडमंत्र और सब शास्त्र और संहार करने की शक्ति यह श्री गणेश जी नें शिवजी को दिये, दीन मन होकर तीन लोक के स्वामी जगत्के गुरु गज के से मुख वाले श्रीगणेशजी को हाथ जोड़कर नमस्कार करके बोला।

ब्रह्माजीने कहा शक्ति होने पर भी मुझको बोलने का होश नहीं है, मैंने नानाप्रकार सृष्टि कभी देखी नहीं है। हे भगवन्! आपकी आज्ञा का पालन मुझसे कैसे होगा, कहां बावड़ी बनाऊं, कहां कुँआ बनाऊं, इस प्रकार व्याकुल चित्त वेद शास्त्र के जानने वाले ब्रह्मा को देख कर प्रभूने दिव्य नेत्र प्रदान किये।

श्रीगणेश जी ने कहा, मेरे बाह्य और अंतर शरीर में बहुत से ब्रह्मांड घूम रहे हैं तुम अभी देखलो।

ब्रह्माजी बोले, फिर श्रीगणेशजी ने मुझको अपने उदर में स्वास वायुके द्वारा पहुँचाया, वहां मैंने बहुत से ब्रह्मांड देखे जो मच्छरों की तरह और कुछ औदुम्बर (गूलर) की तरह थे, मैंने उनमें से एक को अपने जोर से तोड़ा तो उसके भीतर सारी सृष्टि बारबार देखी वहां दूसरा ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, प्रजापति शंकर, सूर्य, वायुवन, नदी, सागर, यक्ष, गंधर्व, अप्सरा, किन्नर, नाग, ऋषि,

राक्षस जिनकी साधना की जावे,ऐसे लोग मनुष्य पर्वत वृक्ष उद्भिज जारज जंतु पसीने से पैदा होने वाले अंड से पैदा होनेवाले पृथ्वी सात पाताल २१ इक्कीस स्वर्ग देखे विश्व को देखा तो भाव अभाव चर अचर रूपथा जो जो ब्रह्मांड मैंने तोड़ा उन उन में यह सब देखे, इनको देखकर पहले की तरह से फिर मुझको भ्रांति हुई उसको अंत में पा न सका न खड़ा रह सका न मैं चल सका फिर जैसे तैसे कमलासन पर बैठकर फिर ब्रह्माजी ने श्रीगणेशजी की स्तुती की।

## ब्रह्माजी ने कहा।

वंदे देवं देव नेशं गणेशं ब्रह्मांडानां नैव संख्या यदंगे ।
अम्भोडूनां सागरे वा झषाणां कः संख्याता शर्कराणां च तीरे ॥ १ ॥
लज्जा न मेत्रास्ति सुरेन्द्र वंद्य पादार विंदं तवयत् विलोक्य ॥
भ्रांतो भवं ज्ञाननिधौ प्रसन्ने मोक्षोपि तुच्छः किमुतान्य वार्ता ॥ २ ॥
दृष्टं च नानार्थयुतं सुरेश ब्रह्मांड कूटं जठरे त्वदीये ।
स्थातुं वहिर्गन्तु मपीह नेश स्त्वदन्य देवं शरणं न वैमि ॥ ३ ॥

जिनके अंगों में ब्रह्मांडों की संख्या नहीं; जिस प्रकार आकाश में तारों की संख्या नहीं है, समुद्र में मछलियों की तीर पर छोटे कंकरों की देवताओं के इन्द्र द्वारा पूजित आपके चरण कमलों को देखकर मेरी लज्जा जाती रही ज्ञानके समुद्र आपके प्रसन्न होने पर मैं वहम में पड़ गया और सोचने लगा, कि और तो सब मुझको प्राप्त हो ही गया, मोक्ष भी तुच्छ है अनेक अर्थ समेत ब्रह्मांड मैंने आपके उदर में देखे न मैं वहां ठहर सका न बाहर आसका अतएव आपके सिवाय मैं किस देवकी शरण लूँ।

फिर प्रसन्न हुये अनन्त भगवान् श्रीगजानन ने मुझको खिन्न उदास देखकर अपने नाक के रास्ते से बाहर निकाला मेरे पीछे पीछे जाने वाले विष्णु को और विष्णु के साथ जाने वाले शिवजी को कानों के रास्ते बाहर निकाला उनके अंग में दोनों विष्णु और शंकर लीन हैं। ४६।१३॥

---

# चौदहवां अध्याय।

(ब्रह्माजी का चिंता करना)

राजा सोमकांत ने पूछा, उन हजारों ब्रह्मांडों को देखकर ब्रह्मा न क्या किया और श्रीगणेशजी की आज्ञा पाकर कैसे सृष्टी रची।

भृगुजी ने कहा अपने मनमें यह बिचार करकेकि मैं शास्त्र वेदपुराण आगम सब जानताहूं और ज्ञान और विज्ञान मेरे में हैं शाप देनेकी शक्ति रखताहूँ और माफ भी कर सकताहूं मैंने ब्रह्मा भी देख लिये और सृष्टि की रचना करना मेरे लिये अब कुछ मुश्किल नहीं इस प्रकार ब्रह्मा को अभिमान हुआ और सब कुछ सामग्री होते हुए भी जब वह सृष्टि की रचना करने लगा तो हजारों नानाप्रकार के विघ्न बड़ेरकठोर उसे घेर कर खड़े होगये जैसे मोह की मक्खियां शहद को पीकर मतवाली होजाती हैं और अपने छत्ते पर भिन भिनाया करती हैं। कुछ तीन नेत्रवाले,कुछ पांच हाथ वाले, कुछ . के मुंह कुँवे जैसे सात हाथ तीन पैर पांच मुख थे, कुछ के सातमुख, छः पैर थे,कुछ के दशमुख पांच पैर थे कुछ के ताडके समान दांत थे वृक ( भेड़िये ) के समान उदर थे, अनेक रूप वाले बड़े बलवान् थे और इतने थे. कि जो गिने नहीं जा सकते थे, उनके नाना-प्रकार के शब्द सुनकर ब्रह्माजी क्रुद्ध हो गये कई ब्रह्मा को मुकों से मारने लगे, कईनें उसे नमस्कार किया. कुछ स्तुति करने लगे, कुछ ने उसकी चारों चोटियां पकड़ कर उसे घुमाया, कुछ उसके चार मुखों को देखकर हँसने लगे कुछ निंदा करने लगे, कुछ प्रशंसा करने लगे, कुछ उसकी सेवा करने लगे, कोई बांधते थे, कोई खोलते थे, कोई खोले हुए को बांधकर इधर उधर घसीटने लगे, कोई उससे लिपटते थे और बच्चे की तरह मुँह चूमते थे कोई कोष्ठ हाथ वाला उसके आठों श्मश्रुओं को पकड़ कर नांचने लगता था, इस तरह शोक में डूब कर ब्रह्मा कुछ का कुछ होगया और उसके मनमें जो सृष्टि रचने का घमण्ड था, वह जाता रहा और अपनी ज़िन्दगी से ना उम्मेद होकर मूर्छित होगया, घड़ीभर में ऐसा हाल होगया तो मनसे श्री गणेशजीसे बड़ी करुणा के साथ रोते हुए उसने यह प्रार्थना की ।

न चायुष्यं स्वल्पं विविध जनने सक्त मनसो न मे तत्वज्ञानं भवजलधि-तारं सुविमलम् । जनुर्भूमौ लब्ध्वा तव भजनतो यामि परमां कदा भुक्तिं मुक्तिं निरुपम सुखां वाखिलगुरो ॥ १ ॥

त्वत्कटाक्षामृते नाक्तो भक्तः सीदतिते विभोः ।

इयं लज्जा तवै तास्ताम् नमे मृत्युश्चिरायुषः ॥ २ ॥

नाना प्रकार की सृष्टि करने में तत्पर मेरी अवस्था कम नहीं है, न

मुझको तत्त्वों का ज्ञान है, जो इस संसाररूपी समुद्र से तरजाऊं, आप जो सबके गुरू हैं, उन्हीं के भजन की कृपा से मेरे पैर टिकैं और मैं परम भक्ति और मुक्ति पा सकूँगा ॥ १ ॥ हे भगवान् ! आपकी कृपा विना आपका भक्त दुःख पा रहा है, आपही को इसकी शरम है मैं चिरजीव हूँ, मुझे मौत भी कहां ? ॥ २ ॥

भृगुजीने कहा इस प्रकार प्रार्थना करते ही आकाशवाणी हुई,कि'तपस्व'तुम तपकरो और उस आकाशवाणी को सुनकर सब नाना प्रकार के विघ्न ब्रह्माजी को छोड़कर अंतर्ध्यान होगये,उनसे छूटने पर यशस्वी ब्रह्माजीसोचने लगे,कि विना मंत्र के और विना स्थान के कैसे बड़ा तप करूं इस प्रकार ब्रह्माजी व्याकुल चित्त होकर जल में भ्रमण करने लगे और एकाग्रचित्त होकर रोग रहित श्रीगणेशजी का ध्यान किया।

## ध्यान

मुकुटेन विराजंतं मुक्तारत्नयुजा शुभं ॥ रक्त चंदन लिप्तांगं सिंदूरारुण मस्तकम् ॥ १ ॥ मुक्तादाम लसत्कंठं सर्पयज्ञोपवीतिनं ॥ अनर्घ्य रत्नघटित बाहूभूषणभूषितम् ॥ २ ॥ स्फुरन्मरकत भ्राज दंगुलीयक शोभितं ॥ महाहि वेष्टित बृहन्नाभि शोभि महोदरं ॥३॥ विचित्ररत्न खचित कटिसूत्र विराजितं ॥ सुवर्ण सूत्र विलस द्रक्तवस्त्र समावृतम् ॥ ४ ॥ भालचंद्र लसद्दंतं शोभा राजत्करंपरं ॥ ५ ॥

जिनके मोतियों और रत्नों से जड़ा हुआ मुकुट लगा हुआ है,सारे अंग में लाल चंदन चर्चा हुआ है और मस्तक पर सिन्दूर लग रहा है, मोतियों की माला गले में और सर्प जनेऊ बहुत बढ़िया जड़ाऊ बाजूबंद है, उंगलियों में मरकत मणियों की जड़ी हुई चमकने वाली अंगूठियां शोभित हैं, बड़े उदर की नाभी के चारों तरफ सर्प ने घेरा बना रखा है वह शोभायमान है, नाना प्रकार के रंगों के रत्नों की जड़ी हुई कणगती पहने हैं और जर्रीन काम के लाल वस्त्र धारण किये हैं, ललाट पर चन्द्रमा शोभा देरहा है, दांत भी बड़े मनोहर दिखाई देरहे हैं और हाथ बड़े शोभायमान हैं, इस प्रकार ध्यान

में दर्शन हुए और यह आवाज़ आई, कि पूर्व दिशा की ओर सुन्दर वड़ के वृक्ष को देखो। यह सुनकर ब्रह्माजी को फिर चिंता हुई ॥ २६ ॥ १४ ॥

---

# पन्द्रहवां अध्याय।

## ( श्रीगणेशजी की पूजा बताना )

## भृगुजी बोले

व्यासजी के आगे लोकों के पितामह ब्रह्माजी ने कहा। हे राजा! सोमकान्त वह ही कथा अब मैं तुमको सुनाता हूँ, आदर पूर्वक सुनो।

ब्रह्माजी ने कहा—हे व्यासमुनि!मैंने एक वड़ा स्वप्न देखा, वहुत जोर की हवा चली, गर्मी पड़ी, सब स्थावर जंगल नष्ट हो गये, तो भी यह एक ही वड़ का वृक्ष कैसे बच रहा,आकाश में घूमते घूमते मैंने जलमें उसे देखा इस संदेहमें था, कि एक छोटा सा बालक चार भुजाधारी अच्छा मुकुट लगाये, कानों में कुंडल, गले में मोतियों की माला, मस्तक पर अर्द्धचन्द्रमा लाल कपड़े पहने कमर में करणगती पहने एक दांत वाला मनुष्य सदृश शरीर वाले हाथी के समान मुख वाले अपने तेज से देदीप्यमान उस बालक को वड़ के पत्रों में देखा, उसे देखकर मैं सोचने लगा, कि यह बालक यहां कैसे। उस बालक ने सूँड़ के फटकारे से मेरे शिर पर जल फैंका, तो मैं चिंता और आनन्द युक्त होकर खूब हंसा मेरे हंसने पर वह बालक वड़ से उतर कर मेरी गोद में आ बैठा और मुझे मीठे शब्दों में कहने लगा।

बालक बोला—हेब्रह्मा! तू वृथा ही बुड्ढा हुआ है,तू छोटे से छोटा है,मूर्ख है, सृष्टि रचने की चिंता में पड़ा हुआ है,विघ्नों ने तुझको घेर लिया है नित्य तपस्या करने के विचार से घूमता फिरता यहां जल के बीच में आ पड़ा। मैं तुझे इस चिंता के हटाने का उपाय बताऊंगा मैं तुझे मेरे इस एकाक्षर मंत्र का उपदेश करता हूँ। पुरश्चरण द्वारा १० लाख जप करो, उससे मैं प्रसन्न होकर तुझको दर्शन दूंगा और तुझे बड़ी शक्ति प्रदान करूंगा। इस अद्भुत स्वप्न को

देखने पर मैं जाग उठा और सोचने लगा, कि परमेश्वर श्रीगणेशजी के दर्शन मुझको कब होवेंगे, इस स्वप्न को देखकर मैं आनन्द सागर में डूब गया, फिर स्नान करके बहुत दिन तक उस परम मंत्र का जप किया, एक पैर से कमल पर खड़ा रहा, श्रीगणेशजी का ध्यान करता रहा, इन्द्रियों को अपने वश में रक्खीं, आहार को वश में रक्खा, काठ और पत्थर की तरह स्थिर रहा एक हजार दिव्य वर्ष तक घोर तप किया, तो मेरे मुख से असह्य आग निकलने लगी, जिससे सब प्राणियों को बड़ी पीड़ा हुई फिर श्रीगणेशजी ने मेरी ऐसी दृढ़ निष्ठा देखी तो इस परम भक्ति से प्रसन्न हुए और मेरे सामने आखड़े हुए करोड़ों सूर्य के समान कांति वाले ज्वालाओं से लिपटे हुए अग्नि के समान तेज वाले तीन लोकों को जलाता हुआ स्वर्ग तथा पृथ्वी का संहार करता हुआ ही मानों।

परशु कमलधारी दिव्यमायाविभूषः ।
करिवर मुखशोभी भक्त वांछाप्रपोषः ॥
सकल दुरितहारी सर्व सौंदर्य कोषः ।
सुर मनुज मुनीनां सर्व विघ्नैक नाशः ॥ १ ॥

परशु और कमल धारण किये हुए हैं, दिव्य माया से सुशोभित हैं, सब पापों के नाश करने वाले हैं, सम्पूर्ण सुन्दरता के खजाने हैं. श्रेष्ठ हस्थिका मुख शोभायमान हैं, भक्तों की इच्छाओं को पूर्ण करने वाले देवता मनुष्य और मुनियों के सब विघ्नों के नाश करने वाले हैं। हे व्यासजी! ऐसे तेज स्वरूप को देखकर मैं कांप उठा। आकुल होकर जप छूट गया और मुझे चिन्ता हुई, मेरी आंखें बंद हो गईं, स्मरण शक्ति विलीन होगई, मेरी ऐसी अवस्था देखकर श्रीगणेशजी फौरन बोले कि हे लोक के स्वामी! डरो मत जिसने तुझे स्वप्न में शुभ एकाक्षर मंत्र का उपदेश दिया था वह मैं आ गया हूं, वह तेरा मंत्र सिद्ध हुआ। मैं वर देने आया हूँ, मैं तुझ पर प्रसन्न हूँ, वर मांग,जो कुछ तेरे मनमें हो सब मांग। मेरे प्रसन्न होने पर जो मांगे वही दूंगा और वह वैसे ही होगा, इसमें सन्देह नहीं। इस प्रकार श्रीगणेशजी के परम शुद्ध वचन सुनकर ब्रह्माजी बड़े प्रसन्न हुए और अपने सारे मस्तकों से

चराचर के स्वामी श्रीगणेशजी को नमस्कार करके प्रसन्न चित्त होकर बोले. कि मेरा जन्म धन्य है। जिसका वेद शास्त्र पार नहीं पाते, ज्ञानी और योगी जिसका पार नहीं पा सकते, सब उपनिषदों के जो गोचर नहीं है, आज मेरे पुण्यों के प्रताप से वह प्रत्यक्ष हुआ है, आप अनादि हैं, अनंत हैं, जिनका परिमाण नहीं हो सकता और निर्गुण हैं। देवों के स्वामी! हे दयालु! हे विघ्नेश! हे करुणाकर अगर आप मुझसे प्रसन्न हैं तो मुझे आपकी दृढ़ भक्ति दो जिससे मुझको दुःख न छुवै और अब सब कुछ बनाने की शक्ति दो और जो आप प्रसन्न होतो सब विघ्न टल जावें, याद करते ही मेरे सब कार्य समाप्त कर दो, अंत में स्थिर रहने वाली मुक्ति दो और निर्मल ज्ञान दो।

श्रीगणेशजी बोले—एवमस्तु!ऐसाही हो। तुम नाना प्रकार की सृष्टि रचो,जब तुम मुझको याद करोगे,तो सब विघ्न नष्ट होजावेंगे,मेरी कृपा से तुम्हारी मुझमें दृढभक्ति रहेगी और कल्याणकारी ज्ञान प्राप्त होगा। हे ब्रह्मा बेखटके सब काम करो। इस प्रकार वर पाकर ब्रह्मा ने उनका पूजन किया। जो २ मनमें सोचता था वह ही आकर उपस्थित होने लगा। श्रीगणेशजी की कृपा से उनकी पूजा के लिए दक्षिणा के समय दो कन्याएं आईं, जिनके नेत्र सुन्दर थे और चेहरे खिले हुए थे, अनेक रत्नों के जड़ाऊ आभूषण पहनें थीं, दिव्यगन्ध से व्याप्त थीं, दिव्यवस्त्र और मालाऐं पहने हुए थीं, ब्रह्मा ने दक्षिणा में इनको भेंट करने की इच्छा की. कपूर से आरती उतारी और दिव्य पुष्पांजली दी, सहस्र नामों से स्तुति करके प्रदक्षिणा की नमस्कार करके प्रार्थना की, कि गरीबों को कल्याणकारी होवो, इस प्रकार भगवान् विघ्नों के हरने वाले श्रीगणेशजी ब्रह्मा के पूजन किये पीछे सिद्धि और बुद्धि को लेकर अंतर्हित होगये और उन परमेश्वर श्रीगणेशजी की आज्ञा से उनकी कृपा से प्रसन्न बुद्धि होकर ब्रह्मा ने पहले की तरह लम्बी चौड़ी सृष्टि की रचना आरम्भ की।४०।१५॥

---

# सोलहवां अध्याय।

## —: देवी की प्रार्थना :—

राजा ने कहा—श्रीगणेशजी की कथा सुनकर चित्त को हर्ष होता है, हे

मुनि और कहो,इस कथामृत से मेरी तृप्ति नहीं होती, श्रीगणेशजी महाराज के अन्तर्ध्यान होने पर ब्रह्मा ने सृष्टि की रचनाकी जैसे कि ब्रह्माने व्यास मुनी से कहा है, वह सब कथा मैं विस्तार पूर्वक सुनना चाहता हूं।

भृगुजी ने कहा–कि सिद्ध क्षेत्र का महात्म्य ब्रह्माने व्यास से कहा है, वह मैं तुमको आदि से कहता हूं, जिस प्रकार सृष्टी रची-गई, पहिले ब्रह्माने मन से सात पुत्र पैदा किये और उनको कहा, कि अपनी अपनी बुद्धि से सृष्टि रचने में सहायता दो, वे उनके वचन सुनकर तपस्या करने के विचार से घोर तप करके परब्रह्म में लीन होगये, फिर ब्रह्माने दूसरे सात पुत्रों की रचना की, वे अत्यन्त ज्ञानी होगये और कोई सृष्टि नहीं की, फिर उन सनकादिक को देखकर स्वयं सृष्टि की रचना करने लगे, ब्रह्माने अपने मुख से ब्राह्मणों को और अग्नि को रचाबाहू से क्षत्रिय और जंघों से वैश्य तथा पैरों से शूद्र उत्पन्न किये, हृदय से चन्द्रमा बनाया, नेत्रों से सूर्य्य और कानों से हवा और प्राण बनाये, नाभि से अन्तरिक्ष अर्थात् आकाश शिर से स्वर्ग, चरणों से पृथ्वी और कानों से दिशाऐं बनाई और लोक भी बनाए और भी ऊंचा नीचा स्थावर जंगम रूप जो संसार है, समुद्र, नदियां, पहाड़, घास,गुल्म और वृक्ष रचे, फिर बहुत दिन बीत जाने पर सोते हुये विष्णु भगवान् के कानों से मधु और कैटभ नाम के दो नामी राक्षस पैदा हुए, जिनके लम्बे लम्बे दांत,भयानक मुख, लाल नेत्र और लम्बी नाक थीं, बड़े बड़े शरीर वाले थे,बड़े बलवान् थे, और पर्वतों की तरह बहुत ऊंचे ऊंचे वर्षा के बादल कीसी गर्जना करते हुए बहुत गर्व वाले बड़े अभिमानी थे, बहुत सी बातें बनाकर वे दोनों दुष्ट उसकी इज्जत बिगाड़ते थे, ब्राह्मण, देवता, साधू और ऋषियों की निंदा करते थे, उनके शब्द से पृथ्वी और शेषनाग कांप उठते थे, उनके सांस लेने से ही सारा ब्रह्मांड घबड़ा उठता था, फिर वह दोनों लाल–लाल नेत्र दिखाकर उस ब्रह्मा को खाने के लिये तैय्यार होगये. फिर ब्रह्माने विष्णु को मोह में डालने वाली, वर देने वाली और नेत्रों में स्थित निद्रा देवी को, विष्णु भगवान् को, जगाने के लिए और मधु कैटभ के नाश के लिये प्रसन्न की। श्रीगणेशजी की कृपा से विष्णु के हाथ से ही उनका नाश होना जाना तो ब्रह्माजी को चिंता हुई और हर्ष भी हुआ।

## ब्रह्मोवाच

स्वाहा स्वधारूप धरा सुधात्वं मात्रार्धमात्रा स्वररूपिणीच ।
कर्त्रीच हर्त्री जननी जनस्य सतोसतः शक्ति रसि त्वमेव ॥ १ ॥
श्रुतिः स्वराकालरात्रि रनादि निधनात्चपा ।
जगन्माता जगद्धात्री सृष्टि स्थित्यंतकारिणी ॥ २ ॥
सावित्री च तथा सन्ध्या महामाया तृपा चुधा ।
सर्वेपां वस्तुजातानां शक्ति स्त्वमसि पार्वति ॥ ३ ॥

तुम स्वाहा और स्वधारूपिणी हो तुम पृथ्वी अमृत मात्रा अर्धमात्रा स्वर रूपिणी हो करने वाली हरने वाली लोक की माता सत् असत् की शक्ति हो श्रुति ही जिसकी आवाज़ है, कालरात्रि आप ही हो अनादि और मृत्यु रहित भी आप ही हो, जगत् की माता तथा जगत को पैदा पालन और नाश करने वाली हो, सावित्री, सन्ध्या, महामाया, भूख, प्यास, रूपिणी हो, हे पार्वति ! शक्तिरूप आप ही हो, सब प्राणियों की तुम शक्ति हो, तीनों लोकों के करने वाले, तुम्हारे स्वामी दैत्य और दानवों के नाश करने वाले, ज्ञानी और सब विज्ञान जानने वाले, इस समय सो रहे हैं, जिन्होंने जगत् को पैदा किया, पालन करते और उसका नाश भी करते हैं, जिसको तूने ही अवतार ग्रहण करने के सङ्कट में डाल रक्खा है, तुम इन दुष्टात्मा मधु कैटभ राक्षसों को मोहित करो, ये बड़े दुःखदाई दुष्टात्मा हैं, मारे जाने लायक है, इस लिये विष्णु को ऐसा ज्ञान दो, पहले जन्म में इन्होंने आलस्य छोड़कर मेरी आरा-धना की थी, मैंने इनको वर दे दिये, अब मैं इनको नहीं मार सकता, इस लिये मैंने इनके गाली गलोज वगैरह बहुत कुछ सहा, मुझको ही मारने को तैय्यार होगये, मैं अनेक प्रकार से इनकी स्तुति कर चुका, तो भी दुष्टभावों से मुझे मारने से पीछे नहीं हटते, हे देवि ! इस लिये तुमसे मैं प्रार्थना करता हूं, कि तुम विष्णु को जगादो । २६ । १६ ।

---

# सत्रहवां अध्याय ।

( मंत्रोपदेश )

मुनि बोले—जब तक विष्णु नहीं उठे उसके पहिले ही उन्होंने तीनों लोक

स्वर्ग और कुबेर की नगरी पर धावा कर डाला, उनको देखकर सब जगह से देवता भागने लगे, कई एक गिरपड़े, कई घूमने लगे, कई मूर्छित हो गये कई घबड़ागये फिर निद्रा देवीने विष्णु को छोड़ा तो उन्होंने सब देवोंको तसल्ली दी और उन राक्षसों के साथ युद्ध किया उनसे बचाने के लिये उन्होंने सब देवताओं को दबा रक्खा, शेषादि सब नागों को मुनियों को यक्ष और राक्षसों को भी वहां श्रीघनश्याम विष्णु शंख, चक्र और गदा हाथों में लिये मुकुट और कुंडल धारण किये हुए प्रगट हुए, फिर उन्होंने बड़े ज़ोर से शंख बजाया, उसकी आवाज़ से आकाश, पाताल सब हिल गये ऐसे पांच जन्य शंख की आवाज़ सुनकर उनके कलेजे हिल गये और वे दोनों आपस में बातें करने लगे, हमने पृथ्वी, पाताल और २१ इक्कीस स्वर्गों पर हमले किये, पर ऐसी आवाज़ कभी नहीं सुनी जिससे वज्र के समान अपने ऐसे कलेजे हिल गये तो ऐसे बली पुरुष से युद्ध करना चाहिये युद्ध के गर्व की शान्ति के लिये लड़ना चाहिये, हारैं या जीतैं ऐसे शत्रु को मारैं या दूसरे लोक में जावैं इस प्रकार पक्का विचार करके लड़ने को तैय्यार जो विष्णु थे उनसे बोले, कि हे पुरुषोत्तम ! हमको आप लड़ने के लिए बड़े अच्छे दिखाई देते हो हमारी दृष्टि में आकर कैसे उत्तमता को प्राप्त होसकते हो। उनके ऐसे वचन सुनकर विष्णु ने कहा बहुत अच्छा मुझसे शौक़ से लडो, कोई अपनी मौतको इस तरह नहीं बुलाता है। मधुकैटभ ने कहा—हे विष्णु तुम्हारे चार हाथ हैं एक बार हम दोनों से कुश्ती ठहर जाय। मुनि बोले—उनके ऐसा कहने पर प्रसन्न होकर विष्णु ने कहा, कि बहुत अच्छा और अपने हथियारों को अलग रखकर चार भुजाधारी विष्णु भगवान् एक बार में दोनों से कुश्ती करने लगे उन दोनों के शिर से शिर टकराये, जांघों से जांघें, पैरों से पैर, कोहनी से कोहनी, हाथों से हाथ, कमर से कमर और नाकों से नाक, मुक्कों से मुक्के, पीठ से पीठ भिड़गई, अब मुक्के चलाने और आपस में खैंचने लगे और ताल फटकारने लगे और हाथों का चक्कर चला इस प्रकार बड़ी देर तक युद्ध होता रहा सर्व समर्थ विष्णु पांच हज़ार वर्ष तक उनको न जीत सके तो उन्होंने बहुत होशियार गवैये का रूप धारण किया और दूसरे वन में जाकर बीन पर गाना आरम्भ किया, हरिण और दूसरे

वनमें रहने वाले जानवर मनुष्य देव गंधर्व राक्षस सब अपने अपने कामों को छोड़कर उस गाने में लीन होगये, उसकी आवाज़ कैलाश में भी बार बार पहुँची तो शिवजी ने निकुंभ और पुष्पदंत अपने गणों से कहा, कि जो इस वन में गा रहा है, उसको यहाँ लेआवो वे दोनों वहां जाकर उसके दर्शन करके कहने लगे, कि आपका गाना सुनकर शिवजी प्रसन्न होरहे हैं. आपका गाना सुनने को आपको बुला रहे हैं, हमारे साथ आप उनके पास चलो, उनके यह वचन सुनकर गन्धर्व रूपी विष्णु वहां को चल दिये, जहां शिवजी थे, वहां उन्होंने जाकर पार्वती पति अर्द्धचन्द्र मस्तक पर रखने वाले को गजचर्म ओढे रुंडमाला पहिने पीली जटायें जिनके लटक रही हैं, सर्प का जनेऊ है ऐसे शिवजी को देखा, शरणागत की रक्षा करने वाले शिवजी को साष्टांग नमस्कार की उन्होंने अपने हाथों से उठाकर उन्हें छाती से लगाया और उनको आसन पर बिठाकर उनकी पूजा की विष्णु ने कहा कि आज मेरा जन्म धन्य है, कि धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के देने वाले आपके दर्शन हुए, उस गंधर्व रूपी हरिने बीन की आवाज़ नानाप्रकार की आलाप कर शिवजी गणेशजी स्वाम-कार्तिक और पार्वतीजी आदि देवताओं को और ऋषियों को प्रसन्न किया तो शिवजी प्रीति से शंख, चक्र, गदा, पद्म धारी पीताम्बर पहिने हुये विष्णु के लिपट गये और कहने लगे, कि हे विष्णुजी ! मैं आपके गाने से बड़ा प्रसन्न हुआ जो कुछ मांगना हो वह सब मांगो। तो विष्णुने उन दोनों दैत्यों का वृत्तांत सुनाया, विष्णुभगवान् ने कहा कि जब मैं क्षीर सागर में सो रहा था तो मेरे कान के मैल से मधु और कैटभ नामक दो दैत्य पैदा होगये और ब्रह्माजी को खाने को दौड़े उन्होंने निद्रादेवी की स्तुति की उसने मुझे जगाया उन दोनों के साथ मैंने कुश्ती लड़ी, उनको मैं नहीं जीत सका तो मैंने यह किया। हे कृपा निधान ! उनके मारे जाने का उपाय बतावो ।

शिवजी बोले, कि आप विना श्रीगणेशजी की पूजा किये युद्ध करने चले गये, इसलिये शक्ति हीन रहे और दुःख पाया, अब श्रीगणेशजी का पूजन करके युद्ध में जावो, वे अपनी माया से उनको मोहित करके आपके वश कर देंगे, मेरी कृपासे आप दोनों दुष्टों को मारेंगे इसमें संदेह नहीं ।

विष्णु ने कहा—हे शिवजी ! मुझे यह बताओ, कि श्री गणेशजी की उपासना कैसे करूं।

शिवजी ने कहा—श्री गणेशजी के सात करोड़ मंत्र बताये गये हैं, उनमें महामन्त्र और उनमें भी एकाक्षर मंत्र बड़ा है और षडक्षर मंत्र भी बड़ा है, उनमें से मैं एक तुमको बताता हूं, एकाक्षर को छोड़कर शत्रुके चक्र को योग से सिद्ध करके ऋण और धन अर्थात् हानि, लाभ का विचार करके षडक्षर मन्त्र उनको दिया, जो सब सिद्धि का देने वाला श्री गणेशजी का महामंत्र है और कल्याणकारी है, जिसके अनुष्ठान से आपका काम सिद्ध होगा तब विष्णु भगवान् फौरन अनुष्ठान करने लग गये। ४२। १७।

---

# अठारहवां अध्याय।

॥ सिद्धि क्षेत्र की उत्पत्ति की कथा ॥

राजा सोमकान्त पूछने लगा, कि–विष्णु ने कैसे और कहां उस उत्तम मंत्र का जप किया और कैसे सिद्धि प्राप्त की, यह सब मुझे विस्तार पूर्वक कहो तो ?

भृगुजी ने समझाया, कि–पृथ्वी पर सिद्धि देने वाला, सिद्धिक्षेत्र नाम का स्थान विख्यात है, वहां जाकर विष्णु ने घोर तप किया, षडक्षर मंत्र का जप विधि पूर्वक करते हुये, श्री गणेशजी का ध्यान किया, यत्न पूर्वक इन्द्रियों को जीतकर श्री गणेशजी की आराधना की, बाणास्त्र मंत्र से पूर्व दिशा को बाँधा, भूत शुद्धि करके प्राणस्थापन किया, अन्तर्मातृकाओं का न्यास आधारादि क्रम से करके बहिर्मातृकाओं का न्यास मस्तक से आरंभ करके क्रमसे किया, मूल में प्राणों को रोककर श्री गणेशजी का ध्यान करके चित्त को प्रसन्न करने वाली आवाहन आदि मुद्राओं से पूजा करके नानाप्रकार के मनोमय द्रव्यों से षोडशोपचार पूजन करके योगेश्वर विष्णु ने परम मंत्र का जप किया, सौ वर्ष पूरे होने पर करोड़ सूर्य के से और अग्नि के से तेज वाले श्री गणेशजी प्रगट हुए और बहुत प्रसन्न मन से विष्णु से कहा, कि हे विष्णु ! जो जो वर तुम चाहते हो मुझसे वर मांगो, वह सब मैं तुमको दूंगा, मैं तुम्हारी इस तपस्या से प्रसन्न हूं, जो तुम पहले ही मेरी पूजा करते तो अवश्य तुमको विजय प्राप्त होती।

## ॥ हरि ने कहा ॥

ब्रह्मेशानाविन्द्र मुख्याश्च देवा यं त्वांद्रष्टुं नैव शक्ता स्तपोभिः ।
तं त्वां नानारूप मे कस्वरूपं पश्ये व्यक्ता व्यक्त रूपं गणेशं ॥१॥
त्वं योणुभ्योणुस्वरूपो महद्भ्यो व्योमादिभ्य स्त्वंमहान्सत्वरूपः ।
सृष्टिं चांतं पालनं त्वं करोषि वारं वारं प्राणिनांदैवयोगात् ॥ २ ॥
सर्वस्यात्मा सर्वगः सर्वशक्तिः सर्वव्यापी सर्वकर्त्तापरेशः ।
सर्वद्रष्टा सर्वसंहारकर्त्ता पाता धाता विश्वनेतापितापि ॥ ३ ॥

ब्रह्मा, शिवजी, इन्द्र को आदि लेकर सब देवता जो आपको तपस्या करके भी नहीं देख सके, ऐसे नानारूपी और एक रूपी आपको व्यक्त और अव्यक्तरूप में देख रहा हूँ । आप छोटे से छोटे आकाश से भी बड़े सत्वरूप हैं, आपही प्राणियों को वार २ दैवयोग से उत्पन्न करते हैं, नाश करते और पालन करते हैं, आप सब की आत्मा हैं, सब स्थान पर आपकी गति है, आप सर्व शक्तिमान हैं, सर्व व्यापी हैं, सब के कर्त्ता और बड़े ईश हैं, सब के देखने वाले सब के संहार करने वाले, सब की रक्षा और पालन करने वाले, सब संसार के नायक भी हैं और पिता हैं । हे देव ! ऐसे आपके दर्शन से मेरी सब जगह सिद्धि होगी, तौ भी मैं एक बात कहता हूँ, मेरी योगनिद्रा के समय, मेरे कानके मैल से मधु और कैटभ नामा दो महा पराक्रमी दैत्य उत्पन्न होगये और वे ब्रह्माजी को खाने को तैयार होगये, उनके साथ मैं बहुत दिन तक युद्ध करता रहा, जब कमज़ोर होगया तो आपकी शरण आया हूँ, अब जिस प्रकार वह मारे जावें उसका उपाय बताइये और दूसरे दैत्यों को जीत कर भी मैं यश प्राप्त कर सकूं, ऐसा वर दें और आपकी पवित्र भक्ति भी मुझे दें, जिससे मेरी कीर्ति तीनोंलोक को पवित्र करें ।

श्री गणेशजी ने कहा, कि–हे विष्णु ! जो जो तुमने मांगा वह सब तुम्हारे अवश्य होगा, यश, बल और बड़ी कीर्ति होगी और विघ्न नहीं होंगे । विष्णु को ऐसा कह कर श्री गणेशजी अन्तर्ध्यान होगये, फिर आनंदित हुए और उन राक्षसों को जीता और वहां सिद्धौर का मंदिर बनाया

जिसमें बहुत से जवाहरात जड़ाये, उसके सोने का शिखर चमकता था और उसके बड़े सुन्दर चार दरवाज़े थे, उसमें गंडकीय पाषाण की मूर्ति स्थापित की देव और मुनियों ने इसका नाम सिद्धि विनायक रक्खा, यहां सब से पहले विष्णु ने सिद्धि प्राप्त की। इस लिए इसका नाम सिद्धक्षेत्र कहलाया। फिर विष्णु मधु कैटभ के पास गये तो उन्होंने विष्णु को आते देखकर उसकी हंसी की और गालियां देकर कहा, कि क्या फिर अपना मेघवत् श्याम मुख हमको दिखलाने आयो है, हम तुमको फिर मुक्ति को पहुँचा देंगे, पहले तुम हारकर भाग ही गये थे, फिर लड़ने आये हो क्या?

विष्णु ने कहा, कि–हलकीसी अग्नि सबको आसानी से जला डालती है, छोटासा दीपक रात्रि में बड़े अन्धकार का नाश करता है। हे मदान्धो! मैं आज ही तुम्हारा नाश कर सकता हूं। उनके ऐसे बचन सुनकर मधु कैटभ बड़े गुस्से हुए और अचानक विष्णु की छाती में मुक्के मारने लगे, फिर उनकी कुश्ती छिड़ गई, उनसे बहुत दिन तक लड़ते लड़ते विष्णु उनको वर देने को तैयार होगये और उनसे मीठे शब्दों में कहने लगे, कि मेरे प्रहार तुमने बहुत वर्षों तक सहे मैं तुम्हारे पुरुषार्थ से प्रसन्न हुआ, तुम्हारा जैसा न कोई हुआ न होगा।

मधु कैटभ बोले–हे हरि! तुम हमसे वर मांगो, हम तुमको बहुत से वर देंगे, हम भी तुम्हारे युद्ध से बहुत संतुष्ट हुए।

मुनि ने कहा–इस प्रकार माया से मोहित उन दोनों के बचन सुनकर विष्णु ने कहा, कि यदि तुम भी मुझे वर देने को तैयार हो तो मैं यह वर मांगता हूँ, कि तुम दोनों मेरे हाथ से मारे जावो, फिर सब संसार को जलमयी देखकर मधु कैटभ ने बड़ी प्रीति से कहा, कि आपके हाथ से मारे जाने में हमारा कल्याण है। अन्त के समय आपके ध्यान से मुक्ति होती है, जहां पृथ्वी और जल न हो, वहां हमको मारो। हम सब कुछ छोड़ते हैं, सत्य को नहीं छोड़ते, सत्य में ही सब कुछ स्थित है। उनके ऐसे बचन सुनकर उनको जघन पर रक्खे और तेज धार वाला चक्र उठाकर उन दोनों के शिर काट डाले, जिससे देवता प्रसन्न हुए और फूल बरसाने लगे, सब गंधर्व और अप्सराएं नृत्य करने और गाने लगीं, फिर अत्यन्त प्रसन्न होकर विष्णु ने ब्रह्माजी को यह सब वृत्तान्त सुनाया। जब मैं उनको नहीं

जीत सका, तो कैलाश गया, शिवजी के उपदेश से षड्क्षर मंत्र का जप करके श्री गणेशजी को पूजा, उन्होंने मुझको अनेक कामना और फल देने वाले वर दिये, जिनके प्रभाव से मैंने दुष्ट मधुकैटभ को मारा है । श्रीगणेशजी की स्तुति और पूजा होने के पश्चात् अंतर्ध्यान हो गये । मैंने श्रीगणेशजी की महिमा जानी, अब मैं शिवजी की कृपा से दैत्य और दानवों का नाश करूंगा, सब देवता और मुनि श्रीगणेशजी की, ब्रह्माजी की, शिवजी की और मेरी तारीफ़ करते हुए, अपने अपने स्थानों को विदा हुए, जो कोई इस पापों के नाश करने वाले महात्स्य को नित्य सुनता है, उसे किसी से भी डर नहीं और सब कुछ मनोवांछित फल पाता है ॥ ४५ ॥ १९ ॥

## उन्नीसवां अध्याय ।

( कमला के पुत्र की कथा )

भृगुजी बोले, कि व्यासजी इस कथा को और षड्क्षर मंत्र की विधि को सुनकर तृप्त न हुए और ब्रह्माजी से कहा, कि सिद्धिक्षेत्र का और श्रीगणेशजी के महात्स्य का जो पाप के नाश करने वाला और सब कामनाओं का देने वाला और पुण्य को बढ़ाने वाला है, वो मैंने सुना, फिर भी मुझे श्रीगणेशजी की कथायें सुनाइये । ऐसे श्रेष्ठ कथा रूपी अमृत को पीकर मैं तृप्त नहीं होता ।

ब्रह्माजी बोले कि—हे व्यासजी ! सब देवों के स्वामी श्रीगणेशजी की बड़ी कल्याणकारी कथा मैं तुमको सुनाता हूं, विदर्भ देश में एक भीम नामी बड़ा पराक्रमी वीर और दानी राजा था, उसका निवास कौंडिन्य नगर में था उसको कर देने वाले मातहत और भी बड़े बड़े राजा थे, उसके बहुत से हाथी, घोड़े और दशकरोड़ पैदल फौज थीं, उसके आगे और पीछे बहुत से रथ चलते थे, हजारों ब्राह्मण उसके आश्रित थे और प्रसन्नतापूर्वक उसको आशीर्वाद देते थे, उसकी रानी चारुहासिनी बड़ी भाग्यशालिनी थी, खिले हुए कमल के से चहरे वाली, हिरण के बच्चे के से नेत्र वाली, ब्राह्मण और देवताओं की पूजा में प्रेम रखने वाली पतिव्रता और अपने पति को ही प्राण समझने वाली, पति की आज्ञा में रहने वाली थी । दैवयोग से यह श्रेष्ठ रानी पुत्र रहित थी, सर्वांग सुन्दर रानी को देखकर राजा पुत्र न होने का

फ़िकर करने लगा और कहने लगा, कि सब राजपाट छोड़कर वन में चलो, विना पुत्र वाले की गति नहीं होती, उसको न स्वर्ग मिलता है, न सुख मिलता है, उसके हाथ से न तो देवता हव्य लेते हैं न पितृ लोग कव्य लेते हैं, मेरे माता पिता और मेरा जन्म, घर, धन, कुल सब वृथा हैं विना पुत्र के सब सुकर्म निष्फल हैं, यह निश्चय है, यह समझकर अपने दोनों मुसाहिब मनोरंजन और सुमंत नाम वाले जो नीति को और तीनों विद्याओं को तथा सोलह कलाओं को जानते थे, उनको बुलाए, उन्होंने आते ही राजा को नमस्कार किया, राजा भीमने उनसे कहा, कि मेरे अथवा मेरी रानी के पूर्व जन्म के पाप हैं, जिससे हमारे इस लोक तथा परलोक में सुख देने वाली संतान न हुई, तुम मेरे राज्य का पालन करो, मैं पीछे आजाऊं तो मुझे दे देना, नहीं तुम दोनों आपस में बांटकर इसे भोगना। रानी समेत वह राजा इस प्रकार निश्चय करके ब्राह्मणों को बहुत दान देकर स्वस्तिवाचन कराके नगर से बाहर चला गया। नगर के लोग उसे पहुँचाने गये, दो कोस चलकर सबको वापिस करने लगा, तो मुसाहिबोंने कहा, कि हे राजा! हम आपके साथ चलेंगे, नगर वाले और मित्र बुरी तरह रोने लगे, उनको राजा ने कहा, आप लोग न घबड़ावें मैंने मुसाहिबों को मालिक कर दिया है, जैसे अब तक मैं तुम्हारा पालन करता था, वैसे ही अब यह दोनों तुम्हारा पालन करेंगे, इस तरह नगर के लोगों को आश्वासन देकर राजा ने मुसाहिबों से कहा, कि मैंने तुम दोनों को राज्य दिया है, नगर की पूरी तौर से रक्षा करना, इस तरह सबको विदा करके नगर से रानी समेत चल दिया। घूमते घूमते एक तालाब उसकी निगाह में आया, जहां कमल खिल रहे थे, वृक्षों में फूल खिल रहे थे और बहुत से जलके पक्षी भी थे, उसके पास ही एक रमणीय आश्रम था, राजा और रानी ने सबके आनंद को बढ़ाने वाले इस आश्रम को देखा, जहां जाति बैरी गज, सिंह, नौल्या, सर्प, बिल्ली, चूहे भी आपस में बैर नहीं रखते थे, वहां विश्वामित्र मुनि को डाभ के आसन पर बैठे देखा, उनके चारों ओर शिष्य बैठे थे, वे शान्त स्वभाव से वेद पढ़ा रहे थे, राजाने दोनों हाथ जोड़ कर उनको बारंबार साष्टांग प्रणाम किया और उनके चरणों में गिर गया, मन की बात जान कर तपस्या के निधि मुनियों में श्रेष्ठ विश्वामित्रजी ने राजा को उठाकर मधुर वाणी से कहा।

हे राजा तुम्हारे गुणवान् और बड़ा यशस्वी पुत्र उत्पन्न होगा तुम कहां से आये, तुम्हारा नगर कौनसा है और क्या नाम है, सो बतलाओ। उसके बाद में तुम्हारे पापों के नाश के निमित्त यत्न करूंगा।

भीम ने कहा—महाराज विदर्भ देश में कौंडिन्य नाम का मेरा नगर है, भीम मेरा नाम है, यह चारुहासिनी मेरी पत्नी है, मैंने पुत्र के निमित्त तपस्या की दान दिये, व्रत रखे और भी बहुत से यत्न किये, पहिले जन्म के पापों से ईश्वर प्रसन्न न हुआ, राज्य छोड़कर वन में आया हूँ. आपके चरणों के दर्शन हुये, बहुत से वनों में विचरता हुआ अब आपकी सेवा में आ पहुँचा हूं, साधुओं की संगति शीघ्र ही उत्तम फल को देती है इसलिये आपके आशीर्वाद से मेरे अवश्य पुत्र होगा, विद्या जानने वाले व्रत, तप, यज्ञ, स्वाध्याय, सब दान करने वाले, हे महाराज! आप दयावान हैं और जितेन्द्रिय हैं, आपका आशीर्वाद व्यर्थ नहीं जा सकता, परन्तु मेरे पूर्व जन्म के पाप हैं उनका प्रतिकार बताओ, आप सर्वज्ञ हैं।

ब्रह्माजी ने कहा—इस तरह उसके वचन सुनकर बड़े मुनि विश्वामित्रजी ने राजाको उसके पूर्व जन्म की कथा सुनाई। हे राजा! पहिले जन्म में तुम बड़े मालदार थे, तुम्हारे बुजुर्ग नित्य श्रीगणेशजी का पूजन किया करते थे, तुमने धन के अभिमान में वेद, शास्त्र, पुराण में जो कुल के धर्म बतलाए हैं उन सबको छोड़ दिये और लौकिक धर्म भी छोड़ दिये, श्रीगणेशजी की नाराज़ी से तुम्हारे संतान नहीं होती, श्री गणेशजी जैसे तुम्हारे कुलदेव हैं, मैं तुम्हें आदि से वह सब कथा सुनाता हूँ, आदर पूर्वक सुनो, तुमसे पहले सातवीं पीढ़ी में बड़ा पराक्रमी वल्लभ नाम का राजा हुआ था, वह बड़ा धनवान् और रूपवान् तथा श्रेष्ठ और बड़ा पराक्रमी था, बहुत दिनों पीछे उसके एक लड़का हुआ, वह गूंगा, बहरा था, कोढ़ी भी था, उसके कोढ़ टपकता था और बड़ी दुर्गन्ध उसके शरीर से निकलती थी, कुबड़ा भी था, उसकी माता कमला उसे देखकर बड़ी दुःखी हुई और सोचती थी कि ऐसे पुत्र से तो पुत्र न होता वह ही ठीक था, ऐसे पुत्र से क्या प्रशंसा हो सकती है, ईश्वर मुझे मौत ही क्यों नहीं देता अथवा इसे क्यों नहीं मार डालता, मैं लोगों को कैसे मुंह दिखलाऊं, ऐसे विलाप करती वह ज़ोर २ से रोने लगी, उसकी आवाज़

सुनकर राजा जच्चा के मकान में आया, ऐसे बालक को और उसकी मा को रोते देखकर उसे शान्ति दी और मृदु वाक्यों से समझाने लगा। हे कल्याणी! दुःख मत पावो, यह कर्मों की गति ऐसी ही है पूर्व जन्म के पापों से मनुष्य दुःख का भागी होता है, दुःखी को सुख मिलता है, और सुखी फिर दुःख पाता है, इसका शोच मत करो, यह बालक अच्छा हो जावेगा, जैसा इसका पहले का आचार धर्म है वैसा ही यह हो जावेगा, हम भी मणि, मंत्र और दवा करेंगे, तपस्या, जप, देवपूजा, यात्रादि करेंगे, बच्चे के अच्छे होने के लिये सब उपाय करेंगे, इस तरह राजा के समझाने पर वह नहाई, बच्चे को स्नान कराया और मित्रों के पास प्रसन्न होकर राजा रानी बैठे, पुत्रोत्पत्ति के समय के योग्य अभ्युदयादिक कर्म करवाये गये और जो आभ्युदयिक श्राद्ध होता है वह भी किया गया, बहुत से वेदपाठी ब्राह्मणों को राजा रानी ने जोड़े से पूजे। ४२।१९

---

# बीसवां अध्याय।

॥ दक्ष की स्तुति ॥

फिर राजा बल्लभ ने ब्राह्मण, साधू, ज्योतिषी और वेदपाठियों को बुलाकर रत्न, वस्त्र और धन वगैरह से उनका सत्कार करके पूछा, उनके कहने के अनुसार उसका नाम दक्ष रक्खा, जप कराये, मंत्रों के प्रयोग किये और औषधियों का संचय किया और स्वयं भी पुत्र की रोग निवृत्ति और अपने संतान वृद्धि के निमित्त १२ वर्ष तक तपस्या की, जब वह पुत्र रोग से मुक्त नहीं हुआ, तो राजा ने दुःखी होकर क्रोध से अपनी रानी कमला से कहा, कि तुमको और तुम्हारे इस पुत्र को नहीं देख सकता, मेरे घर से अपने पुत्र को लेकर तुम चली जावो। इस प्रकार पति के फटकारने पर कमला अपने पुत्र को लेकर नगर छोड़कर रोती हुई, आंसू डालती हुई, बहुत दुःखी होकर वन को चली गई। भूख, प्यास और थकान से दुबली होगई और उसको पीठ पर लाद कर गांव २ में भीख मांगती, बहुत दुःख पाती फिरती थी, उसके गहने, कपड़े चोरों ने लूट लिए तो दूसरे गांव में जाकर शिवालय में अपने पुत्र को रख नगर में राजा की वह प्यारी भीख मांगने निकली,

कभी बच्चे को साथ लेकर मांगने निकली तो एक श्रेष्ठ ब्राह्मण की हवा लगने से श्रीगणेशजी की अधिक भक्ति से वह बालक आंख वाला होगया, सुनने भी लगा और उसका शरीर दिव्य होगया, सब दुःख को भूल कर कमला बार २ मीठे बचन बोलते हुए उसे देखकर खुश हुई और कहने लगी, कि मणि मंत्र और औषधियों से, अनुष्ठानों से बड़े २ होमों से जो अच्छा न हुआ, वह केवल हवा लगने से बिल्कुल अच्छा होगया, पापों के नाश करने वाले उस पुरुष के दर्शन मैं कहां करूंगी, ऐसा कह कर पुत्र को अपनी छाती से लगाकर बड़ी प्रसन्न हुई फिर उसे लेकर नगर में भिक्षा मांगने जाती तो लोग उन दोनों को आदर पूर्वक नौंतकर जिमाने लगे और अनेक पकवान, साग, खीर आदि बनाते, इस तरह नित्य भोजन करते २ उसके पास अच्छे नये कपड़े भी हो गये, एक नगर वाले ने एक दिन उससे पूछा, कि तुम्हारे पिता का क्या नाम है, किस देश के, किस नगर के हो, तुम्हारी जाति क्या है और पेशा क्या है तो उसने कहा, कि मेरा नाम दक्ष है और माता के पास आकर अपने पिता, नगर और कुल के हालात पूछे और फिर उससे जाकर कहा, कि कर्नाट देश में भानु नगर में बल्लभ नामक मेरे पिता हैं, क्षत्रिय हैं, बड़े बलवान् हैं, बड़े नामी हैं, शत्रु को जीतने वाले हैं, यह उनकी पत्नी कमला है और मैं दक्ष उनका पुत्र हूँ । हे ब्राह्मण मैं अंधा, बहरा पैदा हुआ और मेरे बहुत से घाव थे, तो मेरी माता मुझे छोड़ने को तैयार होगई, पिता के मना करने पर बहुत से उपाय किये, बारह वर्ष तप करने पर भी जब मेरा शरीर ठीक नहीं हुआ तो मेरे पिता ने मुझको और मेरी माता को घर से निकाल दिया, यह सब वृत्तान्त जैसा मा से सुना था वैसा उसको दक्ष ने कहा और यह भी कहा,कि यहां आने पर किसी की हवा लगने से मैं अच्छा होगया, यह सुनकर उस नगर के रहने वाले पुरुष के चले जाने पर जल्दी से जाकर दक्ष ने मा को यह खुशी सुनाई तो उस ब्राह्मण ने उन दोनों को दया करके यह उपदेश दिया, कि श्रीगणेशजी की पूजा बड़ी भक्ति से करो, फिर कमला और दक्ष ने परम निर्वाणपद को प्राप्त करके एक अंगूठे के बल खड़े रह कर तपस्या करते हुए श्रीगणेशजी के ध्यान में लगे । ॐकार पल्लवों समेत अन्त में चतुर्थीयुक्त अष्टाक्षर परम मंत्र का बड़ी भक्ति से जप किया, निराहार रहे, सूखकर कांटे होगये, यह देखकर भगवान् कृपा के सागर

श्रीगणेशजी उनके सामने प्रगट हुए, जिनके चार भुजा बड़ी देह हाथी का सा चेहरा अति सुन्दर अनेक सूर्य के समान जैसे रात्रि में दूसरा सूर्य ही निकल आया हो रत्न, सोना, मोती, मुकुट में जड़े हुए हैं ऐसा मुकुट मस्तक पर शोभायमान हो रहा है, पीले रेशमी वस्त्र पहिने हैं, सोने के भुजबंद हैं बड़े आसन पर एक घुटना मोड़े विराजे हैं सोने की कणगती और जड़ाऊ अंगूठियां पहिने हुए हैं, पेट पर बड़ा सर्प खेल रहा है एक दन्त और हाथी का सा आधा शरीर है उन्होंने ऐसा रूप देखा और फिर ब्राह्मण का रूप नज़र आया, उस ब्राह्मण ने कहा, कि मैं तुम्हारे निर्वाण से प्रसन्न हुआ मैं।तुमको वर देने आया हूं जो चाहो सो मांगो।

विश्वामित्र ने कहा—इस प्रकार श्रीगणेशजी को ब्राह्मण के रूप में प्रत्यक्ष और प्रसन्न देख कर बड़ी भक्ति से हाथ जोड़ कर दक्ष ने नमस्कार किया और हाथ जोड़ कर प्रार्थना की, कि हे द्विजोत्तम पहले जन्म के किये हुए पुण्य मेरे आज फले जो मैंने आपका दो प्रकार का परम रूप देखा, श्रीगणेशजी के और ब्राह्मण के रूप के दर्शन करके मेरा जन्म सफल हुआ आप कारणों में मुख्य हैं और छन्दों के परम कारण हैं जानने के योग्य श्रेष्ठ आप ही हैं वेदों से आप ही को ढूंढ़ते हैं,सनातन हैं,सबके साक्षी हैं, सबके भीतर बाहर हैं कार्यों के कर्ता हैं, छोटे बड़े प्राणियों के भी आप ही कर्त्ता हैं। नाना रूपियों के एक रूप हैं रूप से रहित और बिना आकार के हैं, आप ही शंकर, विष्णु, इन्द्र, अग्नि और यमराज हैं, पृथ्वी, वायु, आकाश स्वरूपी हैं, जल चन्द्रमा ऋक्ष ( तारे ) रूप हैं संसार के करने वाले तथा रक्षा करने वाले और उसके संहार करने वाले हैं, चर और अचर गुरू की रक्षा करने वाले हैं ज्ञान और विज्ञान रूप हैं, भूत भविष्यत् और वर्तमान रूप हैं, आप ही इन्द्रियों के अधिष्ठाता हैं कला काष्टा और मुहूर्त्त लक्ष्मी, धृति कान्ति रूप भी आप ही हैं सांख्य योग, वेद, शास्त्र, पुराण और ६४ कलायें और उपनिषद् यह सब आप ही हैं। आप ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र हैं, देश विदेश आप हैं, क्षेत्र और पुण्य क्षेत्र आप हैं। आपका परिमाण हो भी सकता है और नहीं भी हो सकता। योगी ज्ञान द्वारा आपको देखते हैं, आप ही स्वर्ग, पाताल, बन और उपवन हैं, औषधियां लता, वृक्ष, कंद,मूल, फल भी आप ही हैं अंडज, जारज, जीव

पसीनों से पैदा होने वाले उद्भिज काम, क्रोध, भूख, लोभ दंभ, दर्प, दया क्षमा नींद, तंद्रा, विलास, हर्ष, शोक यह भी सब आप ही हैं।

विश्वामित्र बोले–इस प्रकार दक्ष के वचन सुनकर श्री विनायकजी प्रसन्न होकर मेघ के समान गंभीर वचन से हंसते हुए बोले कि हे महा भाग ! मैं तुम्हारी इस गंभीर शक्ति से प्रसन्न हुआ वर देने को उत्सुक हूं, पर तुझे नहीं दूंगा। जो मैं तुमको वर देदूं, तो मेरा भक्त मुझ पर नाराज हो जावे, जिसके अङ्ग की हवा से तुम्हारा शरीर दिव्य होगया और आंख कान होगये वह ही तुझे वर देगा, उसका नाम मुद्गल है ब्राह्मणों में श्रेष्ठ, वह ध्यान करते ही अपना रूप तुमको दिखावेगा जो जो तेरी इच्छाऐं होंगी वह सब पूर्ण करेगा। ऐसा कह कर परमात्मा श्रीगणेशजी अन्तर्ध्यान होगये। उनके अन्तर्ध्यान होने पर बहुत दुःख पाकर दक्ष रोने लगा, जैसे किसी दरिद्री को खज़ाना मिल जावे और फिर जाता रहे जैसे किसी गऊ का बछड़ा बिछड़ जावे, इस प्रकार आंखों से आंसू डालता हुआ बार २ यह कहता हुआ, कि हे विनायक कहां गये ! हे विनायक कहां गये !! पृथ्वी परलोटने लगा। ५६

---

# ❀ इक्कीसवां अध्याय ❀

## ॥ मन्त्रोपदेश ॥

तब राजा वल्लभ का पुत्र इधर उधर घूमता, दौड़ता फिरा न उसे गहने, कपड़े की सुध रही, बड़ा हैरान होगया, रास्ते में ब्राह्मण या वृद्ध जो मिलते, उनको पूछता कि क्या आपने श्रीविनायकजी को देखा है मुझे बतलाओ, श्री विनायकजी कहां गये, क्या तुमने उन्हें कहीं देखा है, इस तरह उसका चित्त चिल्ले से उतर गया, आंखें फिर गईं, मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। इस अवसर पर स्वप्न में अपने सामने एक ब्राह्मण को देखा, उसने कहा कि जो जो तूने श्रीगणेशजी से जब वे तेरे समक्ष प्रगट हुए थे उनसे पहिले मांगा था, वह सब मुद्गल मैं तुझे देता हूँ, इस प्रकार कह कर वह ब्राह्मण तो चला गया और वह ऐसे उठ खड़ा हुआ जैसे कोई सोकर उठता है और बड़ा प्रसन्न हुआ, फिर किसी ब्राह्मण से जल्दी ही जाकर पूछा, कि क्या आपने

श्री गजानन के परम भक्त मुद्गल मुनि का आश्रम देखा है. उस ब्राह्मण ने मुद्गल मुनि का परम दिव्य आश्रम जो कि समीप ही था, बतलाया। वहां बहुत से शिष्य पढ़ रहे थे सब जीवों को अभय दान देने वाला है मुद्गल मुनि का मनमें ध्यान करता हुआ वह स्वयं ही उस आश्रम में पहुँच गया, वहां नाना प्रकार के आश्चर्ययुक्त पदार्थों से सुसज्जित अलकापुरी और नन्दनवन से भी बढ़ कर रमणीय था, वहां मुद्गल मुनि को आसन लगाये बैठा देखा, वेद और वेदान्त के तत्त्वों को जानने वाले थे और सब शास्त्रों के पूर्ण विद्वान् थे, योगाभ्यास के बल से अनेक रूप धारण कर सकते थे सूर्य के से तेज वाले थे, श्री गणेशजी की बहुत बड़ी मूर्ति रत्न और सुवर्ण की बनी हुई चार भुजा वाली, तीन नेत्र वाली, अनेक आभूषणों से सुशोभित उनका षोडशोपचारों से, वेद मन्त्रों से पूजन मुद्गल मुनि कर रहे थे,उनके दर्शन करके दक्ष ने साष्टांग प्रणाम की। बार २ आंखों से आंसू डालता हुआ स्वास लेने लगा ॥११६॥

मुद्गलजी ने पूछा, तुम कौन हो और यहां क्यों आये, मुझे कहो,तुमको क्या दुख है। इस प्रकार ब्राह्मण के वचन सुन कर कमला का पुत्र दक्ष साव-धान होकर ब्राह्मण से कहने लगा।

हे ब्राह्मण! मैं आपके पास आने का कारण सत्य ही कहता हूँ। कर्नाट देश में भानु नामक नगर में वल्लभ नाम वाला राजा था। वह बड़ा दानी, ज्ञानी और नीतिज्ञ था और दयावान् भी था, जब उसकी रानी कमला के मैंने जन्म लिया तो मेरे शरीर में बहुत से घाव थे,वह झरते थे,नाक में से खून गिरता था, अन्धा,कुबड़ा, बहरा, गूंगा था और बहुत सांस लेता था, नगर के लोग देखकर कहने लगे इसे छोड़ दो। मेरे पिता ने बारह वर्ष तक कई यत्न किये, पर ईश्वर की कृपा नहीं थी। इस कारण कोई सफल नहीं हुआ तो उसने निर्दय होकर मुझको और मेरी मा कमला को बाहर निकाल दिया, फिर मेरी मा बड़े खेद से नगर २ में घूमती फिरी, मेरे साथ भूख से पीड़ित हो कौंडिन्य नगर में पहुँची,भीख के वास्ते फिरते २ पुर्वपुण्य के प्रभाव से आपके दर्शन हुए जैसे अंधे को आंखें मिल गईं। आपके शरीर का स्पर्श करके जो हवा मेरे शरीर का स्पर्श करती थी उससे मेरे सारे दोष जाते रहे जैसे पहिले श्रीरघुनाथजी के चरण छूने से अहिल्या के सब दोष चले गये थे,

हे महाराज! अच्छे व्रत के धारण करने वाले, आपकी कृपा से मेरा शरीर दिव्य होगया और मुझको कुछ नहीं मालूम पड़ा, यह समाचार मैंने अपनी मा से कहा, मैं अचम्भे में आया और मैंने यह निश्चय किया, कि जिसके अङ्ग की वायु के स्पर्श से मैं दिव्य देह वाला होगया, या तो ऐसे महात्मा के दर्शन होजाँय, नहीं तो मैं शरीर को धारण नहीं करूंगा, इस प्रकार बहुत दिन तक घूमता रहा, फिर वह करुणानिधान करोड़ सूर्य के से तेज वाले देवों के देव श्री गजाननजी मेरे सामने प्रगट हुए और कहा, कि मैं तुम दोनों की तपस्या से प्रसन्न हुआ, उनके दर्शन करके मेरी मा कमला के मनमें जो जो इच्छाएं थीं, पूरी हुईं। भगवान् ने प्रसन्न होकर मुझसे मीठे बचनों में कहा, जिसके निमित्त नियम करके घूमते फिरे और दुःख उठाया, वह मैं ब्राह्मणों में श्रेष्ठ मुद्गल तुमको दर्शन देता हूं, उनके वचन सुनकर मैं प्रसन्न हुआ, फिर मैंने बहुत से स्तोत्र पढ़ कर श्रीगणेशजी की स्तुति की बहुत प्रसन्न होकर उन्होंने कहा, वर मांगो। जो कुछ मेरी इच्छाएं थीं, वह सब मैंने कहीं, फिर ब्राह्मण रूप को छोड़कर वे दूसरे रूप में होगये, चार भुजा वाले बड़ा शरीर, मस्तक पर बड़ा मुकुट, हाथों में परशु, कमल, माला और लड्डू लिये हुये दिव्य वस्त्र धारण किये हुये, हस्ति दांत से और सूंड जिनके शोभित हो रहे हैं, दोनों कुंडलों से जो कानों में पहिने हुये थे, ऐसा तेज समूह निकल रहा था, जैसे दो सूर्य बिंबहों दिव्य आभूषणों से सुशोभित थे, सर्प कंकण था और उदर पर सर्प लिपट रहा था, देव, ऋषि, गंधर्व, किन्नर भी वहां बैठे हुए थे, ऐसे रूप को देखकर मैं आनन्द में मग्न होगया, जैसे पूर्ण चन्द्र को देखकर समुद्र पूर्ण हो जाता है, उन्होंने कहा, कि तुम्हारी सब कामनाएं मुद्गल पूरी करेगा, फिर अन्तर्ध्यान होगये, जिस पीछे आज तक उस रूप के दर्शन मुझे नहीं हुए, जैसे स्वप्न में देखा हुआ, जागने पर नहीं दिखाई देता, फिर मैं बहुत दुःखी होकर मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा, फिर जब चेत हुआ तो याद आया, कि वर मांगो, ऐसा फरमाया था, तो मैंने देवों के देव सर्व व्यापी ईश्वर श्रीगणेशजी से मांगा, कि मेरे घर में लक्ष्मी स्थिर हो और आपकी ऐसी ही भक्ति हो जिससे आपने दर्शन दिये हैं, यह दोनों वर प्रदान करें, तो मैंने यह आकाशवाणी सुनी कि दिये, तो

मैं प्रसन्न चित्त होकर आपके पास आया हूं, हे मुद्गल जी! आप साक्षात् श्री गणेशजी हो और वह श्री गणेशजी मुद्गल रूप हैं, यह मेरे चित्त को स्पष्ट मालूम देता है।

इस प्रकार उसके वचन सुनकर मुद्गल ने कहा, हे भक्त! कमला के पुत्र तू बड़ा भाग्यवान् है और तेरा जन्म सफल है, तेरी भक्ती की महिमा कोई वर्णन नहीं कर सकता। मैं दश हज़ार वर्ष से घोर तप कर रहा हूँ, ऐसे दर्शन मुझे कभी नहीं हुए, जो सब जगत् के स्वामी चर और अचर गुरू के भी गुरू जो रजोगुण सत्वगुण और तमोगुण के चलाने वाले, नित्य और गुणों के आश्रय जो ब्रह्मा, विष्णु, शिव के शरीरों को बनाते हैं, जो भूत और विभूतियों की इन्द्रियों की और बुद्धि की मात्रा हैं, जिनका वर्णन न देवता कर सके, न ऋषि न वेद कर सके, उन श्रीगणेशजी के दर्शन तुमको इस प्रकार प्रगट रूप से हुए, मैं तुम्हारे चरणों में नमस्कार करता हूँ, तुम बड़े भक्त हो, इस प्रकार कहते हुये, दोनों एक दूसरे को दण्डवत् करके लिपट गये, जैसे कोई बड़े गाढ़े मित्र, बन्धू, बहुत दिनों में मिले हों और ऐसा प्रेम उत्पन्न हुआ, कि एक चित्त होगये, फिर उसने ध्यान पूर्वक एकाक्षर मन्त्र का जप किया, मुद्गल ने राजपुत्र को जो नम्र हो रहा था, इस ही का उपदेश दिया और यह भी फिर कहा था, कि तुम इसका नित्य अनुष्ठान करना, श्रीगजानन तुम पर प्रसन्न होंगे और जो जो मन में तुम इच्छा करोगे वह सब तुमको देवेंगे और जो इस मन्त्र को तुम छोड़ दोगे, तो हर तरह तुम्हारा बिगाड़ होगा और जो हमेशा इसकी भक्ति करोगे तो इस लोक में खूब विचरोगे, इन्द्रादि लोकपाल तुम्हारे वश हो जावेंगे, यहां के सब भोगों को भोगकर अन्त में मोक्ष पावोगे। ५६। २१।

---

# बाईसवां अध्याय।

॥ बल्लाल विनायक की कथा ॥

राजा बोला–हे मुनि! दक्षपुत्र की कथा बड़ी आश्चर्यजनक आपने सुनाई, मुझे बड़ा अचम्भा हुआ, कि कैसे केवल मुद्गल के शरीर से उठी हुई हवा के लगने से वह अन्धा कुबड़ा, गूंगा, बहरा और ऐसा कोढ़ी, कि

जिसके देह से लोहू झर रहा है और बड़ी दुर्गंध निकल रही है. केवल श्वास मात्र ही जिसके शरीर में रह गया है। वह कैसे मुद्गल के शरीर से निकली हुई हवा से दिव्य देह वाला होगया, अथवा किस पुण्य के प्रभाव से पापों से मुक्त होगया, जिसने एक हज़ार दिव्य वर्ष तक घोर तप किया और श्रीगणेशजी के दर्शन न हुए और बिना क्लेश के ही कैसे वल्लभ के पुत्र को श्रीगणेशजी ने दर्शन दे दिये, पूर्व जन्म में वह कौन था, मुझको इसका सन्देह है, इसे आप मिटाइये। हे सर्वज्ञ! मैं आपको नमस्कार करता हूँ, नित्य इस कथा रूपी अमृत को पीकर मैं तृप्त नहीं होता।

विश्वामित्र ने कहा–हे राजा! तुमने खूब पूछा, मैं तुम्हारे सन्देह मिटाने के लिये सब भली भांति कहूँगा, एक चित्त होकर सुनो! सिंधु देश में पल्ली नाम की एक नामी पुरी थी, उसमें एक धनवान सेठ था, जिसका नाम कल्याण था, वह बड़ा दानी, चतुर, बुद्धिमान, देवता और ब्राह्मणों की सेवा करने वाला था, उसके इन्दुमती नाम की सुन्दर मुख वाली पतिव्रता पति को ही प्राण समझने वाली और पति के वाक्यों पर ही विश्वास करने वाली स्त्री थी, उनके कुछ समय पीछे गुणवान उत्तम पुत्र उत्पन्न हुआ, कल्याण ने ब्राह्मणों को गौ वस्त्र,गहने,रत्न और सुवर्ण और बहुतसी दक्षिणाऐं दीं,ज्योतिषियों से कहा, कि इसका क्या नाम रक्खा जावे, तो उन्होंने बलवान होने से इसका शुभ नाम बल्लाल रक्खा, जब वह कुछ काल में बड़ा होगया, तो अपने बराबर के मित्रों के साथ देव पूजा के लिये गांव के बाहर खुशी से जाने लगा, ऐसा करते करते वे एक दिन बन में चले गये, वहां अनेक प्रकार की क्रीडायें करते रहे,नहाये। एक सुन्दर उपल( बिल्लौर ) पत्थर को स्थापित करके उसको श्रीगणेशजी मानकर दुर्वाङ्कर और मन्दार के पत्ते चढ़ाते रहे, कई ध्यान में मग्न होकर नाम का जप करने लगे और कई भक्ति से यथेष्ट नृत्य करने लगे, कई जो गाने में चतुर थे, श्रीगणेशजी को प्रसन्न करने के निमित्त गाने लगे, कई ने लकड़ी और पत्तों से मंडप बनाया, कई भीत बनाकर मन्दिर बनाने लगे, कई मानसिक पूजा से, कई फूल और बेलों से पूजने लगे, धूप, दीप, नैवेद्य, फल, तांबूल और दक्षिणा चढ़ाने लगे। इस प्रकार बड़े प्रेम से पूजा करने लगे, कई पंडित बनकर पुराण सुनाने लगे,

कई धर्मशास्त्र और दूसरे दूसरे ग्रंथों की व्याख्या करने लगे, इस प्रकार श्रीगणेशजी में उनका मन लग गया। बहुत दिन हो गये, देव भक्ति से उनको भूख प्यास का भी विचार नहीं था, उन लड़कों के पिता एक दिन कल्याण सेठ से आकर कहने लगे, कि अपने वल्लाल को रोकले, नित्य हमारे लड़कों को लेकर वन में चला जाता है वे सुबह शाम वा दोपहर में भी भोजन के लिये नहीं आते हैं हमारे बच्चे दुबले हो गये, तुम उसे शिक्षा दो, नहीं तो हम उसको बाँध कर मारेंगे। अथवा राजा के पास जाकर तुमको नगर से निकलवा देवेंगे, कल्याण ने पहले भी सुन ही रक्खी थी, यह बात सुनकर बड़े क्रोध में लाल नेत्र करके अपने लड़के को बड़ी सी लकड़ी लेकर मारने चला, लकड़ी मार कर, मंडप को तोड़ डाला, सब बालक इधर उधर भाग गये, एक वल्लाल ही दृढ़ भक्ति से बैठा रह गया, खूब ज़ोर से उसको लकड़ी से मारा तो उसके शरीर से खून की पिचकारियां ऐसी छूटीं, जैसे वर्षा में पहाड़ से जल बहता है, फिर दूर से सिन्दूर लगे हुए श्रीगणेश जी को फैंका, फिर अपने लड़के को वृक्ष या रस्सियों और बेलों से खूब गाढा बांधा, पुत्र स्नेहको छोड़ कर यमदूत की तरह ऐसा बांधा, कि हाथों से और दांतों और पैरों से फिर वह अपने को खोल न ले और बोला कि गणेशजी ही तुझे खोलेंगे। वह ही तुझे खाने पीने को देवेंगे, वह ही तेरी रक्षा करेंगे, घर आया तो सच्चे ही मार डालूँगा।

मुनी ने कहा—इस प्रकार देवालय को तोड़ कर कल्याण वैश्य अपने पुत्र को वन में बांध कर अपने घर पहुँचा, दैवयोग से वह ऐसा दुष्ट हुआ था, उसके गये पीछे वैश्य पुत्र सोच करने लगा और उसने मन में श्रीगणेशजी का ध्यान किया, कि हे महाराज! आपको गीतों में, विघ्नों के शत्रु कैसे गाये हैं। दुष्ट और विघ्नों का नाश आप नहीं करते हैं आप फिर भी दुष्टान्तक नाम से कैसे प्रसिद्ध हैं, वेद और शास्त्रों में यह कैसे प्रसिद्ध, कि जैसे शेष पृथ्वी को सूर्य, प्रकाश को चन्द्रमा, अमृत को और अग्नि गरमी को नहीं छोड़ते, इसी ही प्रकार आप भी अपने भक्तों को नहीं छोड़ते, इस प्रकार रोरोकर अपने कल्याण नामी दुष्ट पिता को शाप देने लगा और कहने लगा कि जिसने मेरा उत्तम देवालय फोड़ा, श्रीगणेशजी की मूर्ति को फैंकी और मुझे

मारा है वह अवश्य अंधा, बहरा कुबड़ा गूंगा होवे, अगर श्रीगणेशजी में मेरी दृढ़ भक्ति है तो यह मेरा कहा सच हो, भक्ति और मन नहीं बांधा जा सकता। चाहे शरीर को बांध देवे, अनन्य भक्ति से श्रीगणेशजी का ध्यान करके मैं इस निर्जन वनमें देह छोड़ दूंगा। यहां से नहीं भागूँगा, इस लिये यह शरीर श्रीगणेशजी की भेंट है, उस बल्लाल का यह निश्चय जान कर उसके प्रभाव से ब्राह्मण के रुप में श्रीगणेशजी प्रगट हुए। सूर्यनारायण के उदय होने से अन्धकार के नष्ट होने पर जैसे रात चली जाती है वैसे ही उनके तेज से उसके बंधन ढीले पड़ गये, तो उसने साष्टांग नमस्कार किया, देह अच्छा हो गया न नहीं घाव न कहीं लोहू झरता था श्रीगणेशजी के दर्शन से निर्मल ज्ञान उत्पन्न हो गया, अपनी बुद्धि के अनुसार अनेक वाक्यों से श्रीगणेशजी की स्तुति करने लगा।

बल्लाल बोला, बल्लाल की स्तुति—आप ही चराचर के माता हैं, पिता हैं, बन्धु हैं और कर्ता हैं। दुष्टों को और सज्जनों को आप ही पैदा करते हैं, योनी और वियोनि में भेजते हैं, आप ही दिक् मंडल, आकाश, पृथ्वी, समुद्र, पर्वत, इन्द्र काल, अग्नि, वायु रूप हैं, सूर्य, चंद्रमा, तारागण, ग्रह लोकपाल, वर्ण, इन्द्रिय औषधि और धातु रूप आप ही हैं।

मुनि ने कहा—ऐसी स्तुति सुनकर श्रीगणेशजी प्रसन्न हो गये और अपने भक्त को आलिंगन करके बादल की गर्जना की आवाज सदृश्य शब्दों में बोले। जिसने मेरा मंदिर तोड़ा है वह नरक में पड़ेगा मेरी आज्ञा से तेरा शाप भी उसके ऐसा ही होगा, वह अंधा होगा, बहरा होगा, कुबड़ा होगा, गूंगा होगा और उसके शरीर से लोहू बहता रहेगा। अवश्य मेरे शाप को भोगेगा और उसको उसका पिता उसकी माता समेत घर से निकाल देगा तू और कुछ मांग दुर्लभ हो वह भी तुझे दूं।

मुनिने कहा—बल्लाल ने श्रीगणेशजी से प्रार्थनाकी, कि आपकी भक्ति मुझे दृढ़ होजावे और इस क्षेत्र में आप उपस्थिति होकर लोगों को विघ्नोंसे बचावें।

श्रीगणेशजी ने कहा-मेरे नाम से पहले तेरा नाम लगेगा और इस नगर में बल्लाल विनायक के नाम से गणपति विख्यात होंगे, मेरे में तेरी अनन्य भक्ति होगी। जो लोग भादवा सुदी ४ को पल्लि नगरी में मेरी यात्रा करेंगे,

उनकी मनोकामना मैं पूरी करूंगा ।

भृगुजी ने कहा–इस प्रकार वर देकर श्रीगणेशजी वहां ही अंतर्ध्यान हो गये, फिर वल्लाल ने ब्राह्मणों से श्रीगणेशजी की प्रतिष्ठा कराई और अनेक शोभायुक्त मंदिर बनवाया ।

विश्वामित्र ने कहा–मैंने तुमको वल्लाल विनायक की वह कथा सुनाई है, जिसको सुनकर मनुष्य सब पापों से मुक्त हो जाता है और मनोवांछित फल पाता है ॥ ५७ ॥

---

# तेईसवां अध्याय ।

॥ भविष्य की कथा ॥

भृगुजी बोले-विश्वामित्र के वचन सुनकर भीम ने उनको फिर पूछा, कि जिसका ज़िक्र है, उस वैश्य से किये हुये वृत्तांत के सुनने की मेरी परम इच्छा है । हे राजाओं में श्रेष्ठ सोमकांत राजा ! मैं तुमसे कहता हूं सुनो ।

भीम ने कहा–दक्ष के चरित को सुनकर मेरे चित्त को तसल्ली हुई, अब आप यह कहो कि कल्याण वैश्य की क्या गति हुई ।

विश्वामित्रजी बोले–हे भीम! एकाग्रचित्त होकर सुनो, यह कथा मैं तुमसे कहता हूं, वल्लाल के शाप से कल्याण के शरीर से लोहू झरने लगे । बहुत से घाव होगये और झरने लगा, कानों से सुनना बंद हो गया और अंधा हो गया, गूंगा हो गया और उस दुरात्मा के शरीर से दुर्गंध निकलने लगी, इंदुमती अकस्मात् उसकी ऐसी दशा देखकर यह सोचने लगी, कि यह क्या हुआ और कैसे हुआ, ज्ञानी दाता, देवद्विज की सेवा करने वाले धर्म और शास्त्र में निष्ठा रखने वाले, अपनी स्त्री पर ही सब्र करने वाले, पाप रहित मेरी पति की यह क्या दशा होगई ।

[illegible]–इस प्रकार अनेक प्रकार से रुदन करती हुई और बार बार निश्वास [illegible] गई, जानकर कि इसने बेटे को वन में बांधा है, बहुत रोती हुई जह[illegible] जन्म था, नगर वालों को साथ लेकर वहां पहुँची, वहां [illegible] हुई चार भुजा वाले तीन नेत्र वाले सिंदूर से रक्त जिनका

देह है उनके दर्शन किये अपने पुत्र वल्लाल को देखा, जिसके शरीर पर कोई घाव नहीं है, श्रीगजानन जी की पूजा कर रहा है तो क्रोध में लाल होकर धमकी देती हुई इन्दुमती ने नगर वालों को कहा, कि तुमने मेरे पति के सामने झूठ कहा, जिससे मैं पुत्र स्नेह से ऐसी दशा में उसे छोड़कर यहां आई, इस प्रकार देव भक्ति करते हुए मेरे पुत्र को देखो।

वे सब चकित होगये, कुछ कह न सके, कई ने कहा, कि महाभक्ति की महिमा कौन जान सकता है, देखो जिसका शरीर सिन्दूर से लाल हो रहा है, जिसके शरीर में लाल चन्दन का लेप हो रहा है, रक्तवस्त्र पहिने हुए हैं, लाल पुष्पों की माला पहिने हुए हैं, ममता त्यागे हुए, अहंकार जिसके नाम मात्र भी नहीं। साक्षात् बिना सूंड़ का दूसरा गणेश जी है, ऐसे अपने पुत्र को देखा तो शोक छोड़कर आनन्द को प्राप्त हुई, उसको पुत्र में प्रेम होने से बोबो से दूध टपकने लग गया और वह उसके लिपट गई और उससे बोली, बेटा घर चलो। तुम्हारे पिता पर बड़ी आपत्ति आगई है। हे महाबुद्धे! कुछ उपाय करो, जिनके तेरा सा पुत्र है जिसके कारण लोक में हम दोनों धन्य हैं, तुम्हारे पिता के सारे शरीर में घाव पड़ गए लोहू झरते हैं और बहुत दुर्गंध निकलती है, चहरा काला पड़ गया, दुबला होगया, बहरा होगया और अंधा भी होगया तुम्हारे पिता की ऐसी दशा है तुमको यह कहने के लिए ही मैं यहां आई हूं तो उसने पिता होकर अगर तुम्हें बहुत बुरी तरह मारा तो वेद और पुराणों में इसको अपराध क्यों नहीं बताया तुम पुत्र के धर्मों को देखो और विचारो, और उसका इलाज करवाओ, तुम पिता के प्यारे हो, लोक में तुम्हारी बदौलत पिता की प्रशंसा होरही है, सपूत और यशस्वी सन्तान को चाहिए, माता पिता का कहना मानें, उनका सत्कार करें और पालन-पोषण करें और पूजन करे, हे पुत्र! मेरी तरफ देखकर दवाओं से, मन्त्रों से, देवता की प्रार्थनाओं से भी इसका उपाय करो। हे बालक! तेरा यश होगा और मेरा सौभाग्य बढ़ेगा, उसके ऐसे वचन सुनकर। ...र्फ मुझे ...घ्नों से बचावें।

वल्लाल ने कहा--कौन किसकी माता है, कौन ... लगेगा और इस किसका पुत्र है और किसका मित्र, सब कुछ श्री विघ्न... गे, मेरे में तेरी अनन्य यह सब प्रसंग से, उनकी कृपा से मिला है, इसलिए ... मेरी यात्रा करेंगे,

श्री गणेशजी हैं, जो जैसा करता है वह वैसा ही फल पाता है। मैंने अपना जीव श्री गणेशजी के भेंट कर दिया था, उन्होंने भक्ति देखकर मुझे जीव दान दिया है और ज्ञान दिया है. मन्दिर तोड़ कर मूर्ति को फेंक कर और गणेश जी के भक्त मुझको मार कर उसने जैसा किया, उसका वैसा ही फल पाया। विचार करने पर न तुम मेरी मा हो, न वह मेरा पिता। सबका पिता माता श्री गजानन जी हैं और वे ही उनको ज्ञान देने वाले, रक्षा करने वाले और नाश करने वाले हैं, श्री गणेशजी देवेन्द्र, ब्रह्मा विष्णु, और शिवजी के स्वरूप हैं, जिस दुष्ट ने वृथा मुझको निर्दयता से मारा, देवता को फेंका और मन्दिर को तोड़ा, ऐसे नीच पापी के मुख देखने का धर्म नहीं, बड़ा पाप है। तुम मेरा स्नेह छोड़ कर अपने पति की सेवा करो।

विश्वामित्र ने कहा—पुत्र के ऐसे वचन सुन कर माता ने फिर पुत्र से कहा, कि कृपा से, स्नेह से, अनुग्रह से इस शाप का असर मिटादो। तो पुत्र ने कहा, कि अगले जन्म में तू इसकी माता होगी और यह ऐसा ही तुम्हारा पुत्र होगा। कल्याणकारी क्षत्रियों में श्रेष्ठ वल्लभ नाम राजा होवेगा, तुम्हारा नाम कमला होगा, पुत्र का नाम दक्ष होगा। बारह वर्ष तक वल्लभ इस वास्ते तपस्या करेगा, कि उसके पुत्र दक्ष का अन्धापन, बहरापन, घाव, गूंगापन, यह सब मिट जावें और बड़े नियम से भी रहेगा, जब यह देखेगा, कि उससे कुछ नहीं हुआ तो हे शुभानने! तुमको तुम्हारे पुत्र समेत घर से निकाल देगा, तुम विदेश में चली जावोगी। श्री गणेशजी के परम भक्त श्रेष्ठ ब्राह्मण के स्पर्श से अकस्मात् तुम्हारा पुत्र अच्छा हो जावेगा, तब ही तुमको श्री गणेशजी के दर्शन होवेंगे और उनकी कृपा से दिव्य शरीर हो जावेगा। मैंने शाप के दूर होने की सारी बात कहदी, होने वाली बात कहदी, जहाँ चाहो जावो।

विश्वामित्र ने कहा—इस प्रकार उसके तिरस्कार करने पर उसकी माता दुःख और शोक से युक्त और कुछ हर्ष युक्त होकर वहाँ से निकल गई और [illegible] के कारण श्री गणेशजी के दिये हुए दिव्य विमान में बैठ [illegible] गया, जो कुछ तूने पूछा सो सब मैंने कह सुनाया, जो गति [illegible] जन्म में पाई और जैसा बल्लाल ने कहा, वह सब वैसे ही [illegible] हुई और वह श्रेष्ठ क्षत्रिय हुआ ॥ ४५ ॥

# चौबीसवाँ अध्याय ।

## स्वप्न की कथा ।

भीम बोला—हे मुनिवर ! बुद्धिमान् राजपुत्र दक्ष ने कहा, किसका और कैसे अनुष्ठान किया, यह आप विस्तार पूर्वक कहो, मैं सुनते सुनते तृप्त नहीं होता।

विश्वामित्र ने कहा—उस कौंडिन्य नगर के पास एक सुन्दर वन था, जहाँ नाना प्रकार के वृक्ष वेल थे, और नाना प्रकार के जानवर और पक्षी उसमें बिहार करते थे, उसमें अनेक बावड़ी और सरोवर थे, एक जीर्ण मन्दिर में श्री गणेशजी विराजमान थे, वहाँ बैठ कर उसने गणेशजी को खुश करने वाला तप किया। मुद्गल ऋषि से उपदेश दिये हुए एकाक्षर मन्त्र का बारह वर्ष तक जप किया और गणेशजी को प्रसन्न किया, स्नान कराया, वस्त्र पहना कर सुगन्ध पुष्प चढ़ा कर, माला पहना कर, धूप देकर और दीपक जोड़कर, श्री गणेशजी को प्रसन्न किया और कन्दमूल जो भोजन के योग्य थे, उनका नैवेद्य चढ़ाया, क्षत्रियों में श्रेष्ठ उसने मानसिक दक्षिणा चढ़ाई, इस तरह उसे इक्कीस दिन बीत गये, तो सवेरे समय अपने आप उसे इस प्रकार के दर्शन हुए, कि एक बड़ा मतवाला हाथी जिसके सिंदूर लगा हुआ बड़ी शोभा वाला, जिसके गण्डस्थलों से मद झर रहा था, ऐसा सुन्दर जान पड़ता था जैसे पर्वत से जल बह रहा हो, बड़ा प्रसन्न उसका मुख है, दिखाई दिया। बड़े सुन्दर दाँत से श्री गणेशजी की यह मूर्ति बड़ी अच्छी जान पड़ती है, भौंरे चौतरफ उड़ रहे हैं मानो दूसरे गणेशजी ही हैं। उसने रत्नों की माला गले में पहनाई तो उसे उठा कर हाथी ने अपने कन्धे पर बिठा लिया और फिर वह हाथी पताका और ध्वजाओं से सुशोभित नगर की ओर चल दिया, फिर उसके जागने पर अपनी मा से पूछा, कि हे माता ! इसका मतलब मुझे समझावो, हाथी के कन्धे पर बैठना शुभ है या अशु[illegible] मुझ[illegible]

[illegible]से बचावें।

कमलाने कहा—तुम धन्य हो ! तुमको गजरूपी श्री वि[illegible] हुए हैं, कन्धे पर चढ़ने का फल राज्य मिलता है, इसमें स[illegible] और इस

दक्षने कहा—कि जो मुझे राज मिलजावे तो तुमको पा[illegible] तेरी अनन्य [illegible]त्रा करेंगे,

और मोती की माला दूंगा। और गौ तथा सुवर्ण दान करूंगा, व्रतादि करूंगा और अनेक प्रकारके दान दूंगा, ऐसा सुनकर कमला प्रसन्न हुई और बेटे से बोली, कि हे पुत्र ! तुम्हारे राजा होने से मुझे बड़ी खुशी होगी, ईश्वर तेरा चित्त धर्म में लगावे, यह ही सार है, तू चिरंजीव हो और तेरी बुद्धि देवता और ब्राह्मणों की सेवा में तथा पूजन में रहे ॥ १७ ॥

---

## ❀ पच्चीसवां अध्याय. ❀

विश्वामित्रने कहा-हे राजा ! बड़ी आश्चर्यवान् एक कथा दैव की कही हुई सुनो, कौंडिन्य नगर में बड़ा बुद्धिमान् चन्द्रसेन राजा था। वह अपने कर्म पूरे होने पर कालवश हुआ, धर्म्म की अधिकता से दिव्य विमान में बैठकर स्वर्ग में गया, यह बात नगर वालों ने सुनी तो हा हा कार करते हुए अपने सब कामों को छोड़कर वहां पहुँचे, हाथों से अपने शिर को पीटते, दुःख युक्त हुए, गिरते, पड़ते राजा के शवको देखा, दुःख और मोह के वश होकर चरण छूकर नमस्कार किया, कई एकने उसके हाथ उठा उठाकर अपने शिर पर रक्खे, कई हाथ पीठ और मुखके शब्द करके अच्छे स्वर से रोये, कई स्नेह की अधिकता से मुर्दे की तरह पड़ गये, उसकी पत्नी सुलभा करुणा के वचन कह कहकर रोने लगी, बहुत दुःखी होकर हाथों से अपनी छाती पीटती जाती थी, उसके आभूषण बिखर गये थे और मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर पड़ी थी, जो दूसरी नगर की स्त्रियां रो रहीं थीं, उन्होंने उसे पकड़ रक्खी थी, चन्द्रसेन की सुन्दर स्त्री लज्जा को त्यागकर अनुक्रोश रहित, हे नाथ! हे नाथ!! इस प्रकार कहती हुई हे विधाता ! तुझको दया नहीं है, तेरा बालकों का सा चरित्र है, पूलमें स्नेह भावसे हम दोनों का जोड़ा बना दिया, फिर अलग सटियामेट कर दिया, हे करुणा निधान राजा मुझे बिना पूछे रोज पूछकर कचहरी जाया करते थे, आज मेरे कौन से अपराध [illegible]षी होगये, बिलकुल छोड़कर चले गये, मुझे क्षमा करो। मैं लज्जा [illegible] लोगों के बीच में तुमको नमस्कार करती हूं, तुम्हारी प्रियकारिणी

मुझ प्यारी को उस स्थान में ले चलो, जहां तुम गये हो, बिना पुत्र वाली मैं पतिके बिना तीन लोकों को शून्य देख रही हूँ ।

मुनिने कहा—उसके सुमन्त और मनोरञ्जन नामी दोनों मुसाहिबों ने कहा, कि अब राज्य का क्या होगा । हे राजा ! बिना हमसे सलाह किये कहां चले गये, आप हमसे क्यों नहीं बोलते हो, चुप कैसे होरहे हैं, अनाथ की तरह विह्वल अपनी प्यारी रानी को नहीं देख रहे हैं । हे राजा ! हम भी अपने घरबार छोड़कर आपके साथ चलैंगे, तुम्हारा नगर आज अनाथ है, राज्य का पालन कौन करैगा । इस ही अवसर में एक बुद्धिमान् ब्राह्मण जो वेद और शास्त्र के तत्त्वों को जानता था, निठुर बचन से बोला, कि आप लोग सब स्वार्थ परायण हैं, कोई शास्त्र और धर्म को नहीं जानते । मित्रों के रोने के आंसू प्रेत के मुखमें जाते हैं प्राण-हीन जो शरीर है, वह पृथ्वी पर भार होता है, ब्रह्मांड लोक में दूसरा मनुष्य मरे हुए के पीछे जाता है, यह रानी सुलभा इस आशा से रो रही है कि शायद फिर जी जावैं, जिसका मन उसके पीछे जाने को तैयार हो रहा है, वह क्यों रोती है, आप सब नगर के लोगों को अपने अपने काम करते हैं, इस लिये आकुल हैं, सूर्यवंश और सोम वंशमें जो राजा पहले होगये, वे क्या मरे नहीं, इस लिये सब उठकर राजा का मृतक संस्कार करो, जो मरे हुए का संस्कार करता है, वह ही आप्त है और नहीं, अब यह ही काम है, दूसरा नहीं । इसके लिये संसार की यह रीति है, कि पुत्र होना चाहिये, इस लिये किसी धर्म के पुत्र को लावो, अथवा और किसी को लावो, वह क्रिया करैं और सब तिलांजलि देवैं, मुनि कहने लगे, कि इसके पश्चात् सारे नगरके मनुष्य स्त्रियां और दोनों मुसाहिबों ने ब्राह्मण के ज्ञान देने से उसकी और्ध्व देहिक क्रिया की और सुमन्त मुसाहिबने सब क्रिया की और सब नगर वालों ने राजा को तिलां-जलि दी, फिर सब लोग नहाकर नगर में गये, ईश्वर को नमस्कार करके सब लोगों ने पहले नींम के पान खाकर फिर भोजन किया, सुल[illegible] दिलाकर अपने अपने घरों को गये, तेरहवीं होने के पीछे रानी फिर नित्य प्रीति से भोजन करते रहे, एक बार सब नग[illegible] मुसाहिब और रानी को प्रजा पालन की चिन्ता हुई, इसही अव[illegible]

[illegible]सि बचावें ।
[illegible]ा और इस
[illegible]ं तेरी अनन्य
[illegible]ात्रा करेंगे.

मुनि आ पहुँचे । सब की मनसा जानकर बोले, कि गहन नाम वाला राजा का बड़ा हाथी कमलों की माला सभा के बीच में जिसके गले में डाल देवै, वह ही राजा बना दिया जावे, अतीन्द्रिय ज्ञानवान् मुद्गल ब्राह्मण के वचन सुनकर सब ने अच्छा है, अच्छा है, कह कर उनका सत्कार किया ॥ ३३ ॥

---

## छब्बीसवां अध्याय

### परस्परा वर्णन ।

विश्वामित्र ने कहा—एक दिन शुभ ग्रह, शुभ लग्न, शुभ वार, शुभ योग, शुभ नक्षत्र युक्त एक दिन में नाना प्रकार के ग्रहों के योग मिलने पर सारे नगर निवासियों के मौजूद होने से रानी ने रत्नों की माला हाथी की सूँड में रखकर उससे प्रार्थना की, कि इन लोगों में से जिसको तुम मुनासिब समझो राजा बनादो । उस आज्ञा को पाकर अनेक आभूषणों से सजा हुआ गजराज तथा ब्राह्मण, वंदीजन और चारण जिसके चारों ओर जय शब्द कर रहे हैं और आशीर्वाद देरहे हैं, वह चारों ओर घूमा, अनेक बाजे बजते जारहे थे, राज्य की इच्छा करने वाले लोग, नृप, योधा, खड़े थे, सबको सूँघता हुआ सभा से निकल कर नगर के बाहर गया । स्त्रियाँ अपने अपने पति वा पुत्र को भीड़ में से राज्य की इच्छा से आगे ढकेल रहीं थीं । राज्य के वास्ते बहुत से लोग श्रेणी बांधे खड़े थे, उस गहन नामी हाथी के आगे पढ़ने पर वे सब निराश हो हो कर अपने घर लौट गये, कुछ शहर को लौट आये और कुछ शहर से बाहर चले गये, हाथी वहां पहुँचा, जहां कमला का पुत्र द्विरदानन की पूजा कर रहा था, उसको देखकर उस पर सब लोगों के देखते-देखते और स्वर्ग में देवताओं के देखते-देखते माला डाली, फिर लोगों ने दक्षको वस्त्र, मालाएँ, गहने यह जानकर भेंट किये, कि नगर वालों की यह ही राय थी और राजाके दोनों मुसाहिबों की यह ही राय थी, कि ऐसे को राजा बनाया जावे, फिर बहुत से दिव्य और पृथ्वी के बाजे बजे, देवताओं ने प्रसन्न होकर फूल बरसाये । फिर दरबार हुआ, लोग जहां जिसका उचित स्थान था, वहां बैठे और सब ने राजा की और दोनों मुसाहिबों समेत सलामी उतारी । राजा ने लोगों को

पान बांटे और सिरोपाव दिये, ब्राह्मणों की पूजा करके उनको अनेक प्रकार दान दिये और उस माता को वस्त्र और अलङ्कारों द्वारा सत्कार करके, ब्राह्मणों को विधि पूर्वक दान दिलाये, पालकियों में बैठाकर आप सजे हुए हाथी पर सवार हुआ, सवारी जो लगी तो दोनों ओर दोनों मुसाहिब घोड़ों पर सवार थे, अप्सराएं नृत्य करती जा रहीं थीं, बंदीजन बिरदावली पढ़ रहे थे, गान में कुशल कत्थकलोग आगे २ चलते थे, नगर में पताका, ध्वजा लगी हुई थीं, जय शब्दों और नमः शब्द से और बाजों के शब्द से आकाश गूंज रहा था, जब ये ड्योढ़ी पर पहुँचे तब कुछ लोग प्रणाम कर करके अपने २ घरों को चले गये, असंख्य राजा दरबार में आये, फिर उस बुद्धि-मान् राजा ने मुद्गल जी को बुलाने के लिये पालकी, छत्र, चँवर, ध्वजा भेजीं और अपने सुमन्त मुसाहिब को भेजा. मुद्गलजी को आते देखकर आसन से उठकर पेशवाई की मुकुट समेत शिर से उनके चरणों में पड़ गया, उनको अपने आसन पर बिठाकर उनके बताये आसन पर आप बैठा, राजाके लोग उनके बिराजने पर उनकी सेवा शुश्रूषा करने लगे और उस ब्राह्मण को गोदान दिया, राजा दक्ष बोला। हे महा मुनि मुद्गल जी ! आज इन सब लोगों ने आपकी बड़ी महिमा जानी, आपकी कृपा से मेरा दिव्य शरीर वाला हुआ और कैसे यह राज्य पाया, पहले मेरी हालत क्या थी और दशा क्या थी और अब यह राज्य कैसा है, हे मुनि ! मैं आपही को श्रीगणेश जी जानता हूं। हे ब्रह्मन्! मेरे शिर पर फिर हाथ रक्खो, जिससे मैं इच्छाओं का पात्र बहुत दिनों तक बना रहूँ।

विश्वामित्रजीने कहा—उसके वचन सुनकर मुद्गलजी ने कहा, कि तुमको शत्रुओं से कभी भय नहीं होगा, जो जो तुम्हारी इच्छा होगी, वह सब प्रकार से पूरी होगी, फिर उनको ग्राम, वस्त्र, धन, रत्नादि भेंट किये और दूसरे ब्राह्मणों को गोधन, वस्त्र दिये, ब्राह्मण आशीर्वाद देकर अपने २ घर गये, मुसाहिबों को और गृहस्थियों को अनेक गाँव दिये, कुण्डिन नगर में पुराना और छोटा सा मन्दिर था, उसको श्री गणेशजी का बड़ा विशाल मन्दिर बनवाया, फिर सभा विसर्जन कर वह राजा घरको गया, लोगों से यह समाचार सुनकर वल्लभ नामक राजा विवाह की इच्छा रखती हुई वीरसेना

नाम वाली अपनी लड़की को साथ लेकर आया, श्री गणेशजी की जैसी उस राजा को स्वप्न में आज्ञा हुई थी वैसेही अपनी पुत्री को उस राजा दक्ष को दी जिसकी कीर्ति तीनों लोकों में विख्यात थी, उन दोनों के बृहद्भानु नामका लड़का हुआ, उसके खड्गधर उसके सुलभ फिर सुलभ के पद्माकर उसके वपुर्दीप्त उसके चित्रसेन, फिर चित्रसेन से तुम हुए।

ब्रह्माजी ने कहा! विश्वामित्र के मुख से वंश परंपरा सुनकर वह भीम नामी राजा मुनि को संतोष दिलाकर उनकी प्रार्थना की और विप्रवर से पूछने लगा।

भीम बोला हे मुनि! मुझपर श्री गणेशजी कब प्रसन्न होंगे,इसका उपाय बतलाओ कि जिससे मेरे ऊपर उनकी कृपा हो,मैं श्री गणेशजी के दर्शन करके कब कृतार्थ होऊंगा ॥ २१ ॥

---

# ❋ सत्ताईसवां अध्याय ❋

## रुक्मांगदका अभिषेक।

व्यासजी ने कहा—हे ब्रह्माजी! बुद्धिमान विश्वामित्रजी ने कृपा करके भीम को क्या उपाय बताया,मुझे कहो, जैसे किसी के मरे हुये बाप दादों की उनकी कथा रूपी अमृत के पीने से मुक्ति होजाती है, वैसे ही मेरे मन का अज्ञान मृत्यु के भय से हट गया है।

ब्रह्माजी ने कहा! जो उपाय भीमको बताया वह सुनो! वह एकाक्षर मंत्र था, जो मुनिने भीमको कहा हे व्यासजी! वह ही सुनो, मैं तुमको कहता हूँ, विश्वामित्र जी जो अच्छे धर्म के जानने वाले थे, उन्होंने प्रसन्न होकर उस मंत्र का उपदेश दिया।

विश्वामित्रजी ने कहा, इसही से श्री गणेशजी की आराधना करो, दक्षके बनाये हुए मन्दिर में अनुष्ठान करो, श्री विनायकजी प्रसन्न होकर सब कामनाएं तुम्हारी पूरी करेंगे, धर्म, अर्थ, काम तो क्या मोक्ष भी मांगोगे तो देवेंगे, और भी जो कुछ चाहोगे, देवेंगे। हे भीम! तुम अपने नगर को जावो, कुछ चिन्ता मत करो।

ब्रह्माजी ने कहा, उनके ऐसा कहने पर राजा उनको नमस्कार करके अपनी पत्नी समेत अपने नगर को चला गया, दोनों अपने मन में बहुत प्रसन्न थे, दोनों मुसाहिब सेना लेकर और नगर वालों के समेत पेशवाई को आये बहुतों ने राजा का आलिंगन किया, बहुतों ने दूर से ही नमस्कार किया, सब के साथ राजा नगर में दाखिल हुआ, जहां ध्वजायें फहरा रहीं थी, सड़कों पर छिड़काव लगा हुआ था, सुगन्ध उड़ रही थी और बाजे बज रहे थे, आपस में लोग बात कर रहे थे, यह पुरी अब ऐसी शोभायमान दीख पड़ती है, जैसे कोई स्त्री पति को पाकर अन्धा आंखे पाकर, ऐसे सुनती सुनती चारुहासिनी भी पालकी में बैठी हुई नगर में प्रवेश कर रही थी, दोनों वस्त्र और आभूषणों से शोभायमान थे, लोग उनकी तारीफ़ कर रहे थे और वे बड़े प्रसन्न थे, उस ऋद्धिवाले रमणीय नगर में दोनों ने प्रवेश कर के सब लोगों को वस्त्र, आभूषण और मोती देकर विदा किये और पान बांटे, उन लोगों के जाते ही वे भी अपने महल में गये, फिर एक शुभ दिन राजा दक्ष के मन्दिर में गये, जिसको दक्ष ने कौंडिन्य नगर में निर्माण कराया था, वहां सदा विनायक जी का पूजन किया, उपवास रखते हुए उसने उनका मंत्र जपा, भोजन करते समय, सोते समय, सवारी में बैठते, चलते, बोलते और सांस लेते समय उसही मंत्र को जपते रहे और कहीं मन नहीं लगाया, जल में, स्थल में, आकाश में, रास्ते में, स्वर्ग में, देवताओं में, मनुष्यों में और वृक्षों में, खाद्य पदार्थों में, पीनेकी वस्तुओं में भी राजा को श्रीविनायक जी ही दिखाई पड़ते थे, जो जो मिलता उसे नमस्कार करता और उसका आलिंगन करने को तैयार हो जाता नगर में लोग उसे पिशाच समझने लगे। फिर श्रीगणेशजी ने पधार कर उस राजा के सिर पर हाथ रखकर कहा, कि तू मुक्त हुआ। क्या चाहता है, कह, तो राजा ने अर्ज़ किया, कि आपके चरण कमलों के अतिरिक्त और कुछ नहीं, जानता, तो श्री गणेशजी ने फरमाया, कि मेरी कृपा से तुम्हारे बड़ा सुन्दर पुत्र होगा, वह बड़ा गुणी सुवर्ण के समान देह वाला होगा, अपने घर जाकर ब्राह्मणों की पूजा करो, राजा ने अपने महल में जाकर, श्री गणेशजी प्रसन्न होवें, इस निमित्त सारे भाव से वैसे ही देव ब्राह्मणों को पूजन करके प्रसन्न किया, थोड़े दिन पीछे उसके शुभ पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसके जन्म के निमित्त उसने अनेक दान दिये, ब्राह्मणों ने उसका नाम रुक्मांगद

रक्खा,जिस प्रकार शुक्ल पक्ष में चन्द्रमा बढ़ता है, वह बालक भी दिनों दिन बढ़ने लगा फिर पुत्र को राजा ने गुरू के पास पढ़ने बैठाया,जो कुछ गुरू कहते थे, वह उसे सुनते ही उसे याद होजाता था, सब विद्या के निधान कपिल मुनि ने उसे ऐसा विद्या निधान बना दिया,जैसे श्री गणेशजी सब शास्त्रों में चतुर हैं, बड़े बलवान रुक्मांगद को उसके पिताने युवराज बना दिया और ब्राह्मणों को वस्त्र,रत्न,धन,दान में दिये। उसने भी पिता से एकाक्षर मंत्र लेकर श्रीगणेश जी की बड़ी भक्ति की । एक दिन युवराज वनमें गया,वहां शिकार करके बहुत से हिरण और रोझ मारे, बहुत थक गया, तो एक मुनि का आश्रम दिखलाई दिया, उसमें अनेक लताऐं और वृक्ष लगे हुए थे, हरिणादि, वैर भाव से मुक्त उस वन में निवास कर रहे थे ॥ २६ ॥

---

# अट्ठाईसवाँ अध्याय ।

## प्रायोपवेशन ।

ब्रह्माजीने कहा–रुक्मांगद ने वाचक्रवि मुनि तथा उनकी सुन्दर और मधुर बोलने वाली स्त्री मुकुन्दा को देखा,अत्यन्त थके हुये राजा ने उनको नमस्कार किया,स्नान के लिये मुनि के चले जाने पर राजा ने मुकन्दा से जल मांगा,कि हे माता ! मुकुन्दा मैं प्यासा हूँ, मुझे ठंडा पानी दो, विना जल के मेरे प्राण निकले जाते हैं, वह मदन से पीड़ित थी, उसके वाक्य सुनकर बोली तुम्हारे जैसा सुन्दर पुरुष मैंने देव, नाग, यक्ष, गन्धर्वों में कहीं भी नहीं देखा, मुझे तुम बड़े सुन्दर जँचते हो, मैं तुम्हारे ऊपर आसक्त होगई,मुझे अपने होठों का अमृत पिलावो ।

नारदजी बोले–ऐसी खराब बात सुनकर थका हुआ तो था ही और दुःखी हुआ और उस तिलोत्तमा जैसी सुन्दरी को जितेन्द्रिय होने के कारण बोला, कि अपनी इस इच्छा को छोड़ो, मेरा चित्त पर स्त्री सेवन में नहीं है, श्रीविनायक जी की कृपा से कहीं भी मेरा मन आशक्त नहीं होता है, तुझ दुष्टा का दिया हुआ जल भी मैं पीना नहीं चाहता । ऋषि का आश्रम जानकर मैं यहां आगया था।उसको जाता देख कर आतुर होकर उसने उसका हाथ पकड़ लिया।

जो कोई मनुष्य ज़बरदस्ती किसी दूसरे की स्त्री को बिगाड़ना चाहता है, वह नरक में जाता है। स्वयं आई हुई स्त्री के विषय में नहीं जाता, सतयुग और त्रेतायुग में ब्रह्माजी ने स्त्रियों को स्वतन्त्रता दी है, जो मेरा कहना नहीं मानेगा तो भस्म होजावेगा। अथवा तुझे राज्यसे भ्रष्ट कर दूंगी, तू वन वन में मारा मारा फिरैगा।

नारदजी ने कहा—इस प्रकार कहती हुई वह दौड़ी और काम के बाणों की पीड़ा के ज़ोर से उसके लिपट गई और जबरदस्ती उसका मुंह चूम लिया तो रुक्मांगद ने जोर से उसे हटाकर दूर फेंकदी, मूर्च्छित होकर ऐसी ज़मीन पर पड़ी, जैसी मारुत की मारी हुई रंभा। उसके उठने पर पर स्त्री सेवन से जिसका मन बिलकुल हटा हुआ था, रुक्मांगद ने कहा, हे विवेक-हीन मुनि पत्नी! तेरा मन परपुरुषों में क्यों लगा, तू ही नरक की भागिनी हुई, जो समुद्र भी सूख जावे तो मेरा मन चलायमान नहीं हो सकता इस प्रकार उसके फटकारने पर इसने भी क्रोध करके शाप दिया, कि जैसा मैंने कष्ट पाया है, तू भी कोढ़ी होजा, जो वज्र से भी कठोर तेरा हृदय नहीं पिघला। इस तरह कह रही थी, राजा इसको फटकारता हुआ बहुत दुःखी होकर आश्रम के बाहर आया तो देखता है, कि अपना शरीर बगुले का सा सफेद होगया, कोढ़ का रोग होगया, कांति जाती रही, सब कुछ बुरा दीखने लगा, चिंता में पड़ कर श्रीगणेश जी से प्रार्थना करने लगा। हे भगवान्! मैंने क्या अपराध किया था, जिससे मैं यहां चला आया और दुष्टा मुनि पत्नि से मेरा समागम होगया, हे सिद्धिनाथ! अवश्य आपने ही दुष्टों को बढ़ाया है, आप साधुओं की रक्षा के निमित्त अवतार लेते हैं, रूप के गर्व से युक्त पापिनी स्वेच्छाचारिणी का नाश कैसे नहीं किया और सुवर्ण के समान मेरा शरीर किस दुष्ट कर्म से इस दशा को प्राप्त हुआ, आपकी भक्ति विधि पूर्वक पहले की तरह सदा करूंगा। हे नाथ! गजानन आपके सिवाय दूसरे की शरण नहीं जाऊंगा। दुनिया में अपना मुंह नहीं दिखलाऊंगा न यह शरीर दिखलाऊंगा। अनशनादिक से इस शरीर को सुखा दूंगा। इस प्रकार निश्चय करके राजा वड़ के वृक्ष के पास जा बैठा, नौकर चाकर

इधर उधर दौड़ रहे थे, इनको राजा नहीं दिखाई देता था । रात्रि होने पर अपने अपने घर चले गये । स्वामी और सेवकों की दशा ऐसी होगई, जैसी चकवा चकवी की होती है ।

---

## उन्तीसवां अध्याय

### नारदजी का आना ।

मुनि बोले—एक दिन उस बड़के नीचे बैठे २ राजानेदेखा, कि नारदजी आ रहे हैं, दूर से ही देखकर नमस्कार किया और प्रार्थना करते हुए बोला, कि कुछ देर यहां ठहरिये । करुणानिधान नारदजी आकाश मार्ग से नीचे उतरे, यथाशक्ति उनकी पूजा करके उनसे आदर पूर्वक पूछा, कि मैं महाबली भीम का पुत्र रुक्मांगद हूं, शिकारके लिए आया हुआथा, कि वाचन्कवि मुनि के आश्रम में जा पहुँचा, प्यासा था, मैंने जल मांगा, उनकी पत्नी ने जो बहुत नष्टा थी, काम से पीड़ित थी, मुझे चूम लिया, उस समय मुनि स्नान को गए थे, उसने दुष्ट भाव युक्त चित्त से कहा, कि कामदेव के बाणों से पीड़ित हूँ, मेरा उपभोग करो, दैव की कृपा से मैं जितेन्द्रिय था, मैंने उसको हटादी, उसने अत्यन्त दुःखी होकर निष्ठुर होकर मुझे शाप दिया, कि हे दुष्ट ! मुझ कामवती को तू छोड़ता है इसलिये कोढ़ी होजा, इस प्रकार उसके खोटे वचन सुनकर जब मैं आश्रम से बाहर आया तो मैं सफेद कोढ़ वाला होगया, इससे निकलने का उपाय बताओ, मेरे वियोग से मेरे पिता भीम भी दुःख सागर में पड़ गये होंगे, इस प्रकार उसके वचन सुनकर संसार की सब बातें जानने वाले नारदजी ने कृपा करके उसे कोढ़ के नाश का उपाय बताया ।

नारदजी ने कहा—आते हुए मैंने रास्ते में उत्तम आश्चर्य देखा है, विदर्भ-देश में कदंब नाम का एक विख्यात नगर है, उसके महलों में मैंने एक शुभ श्री विनायक की मूर्ति देखी है, वह चिन्तामणि विनायक के नाम से प्रसिद्ध है, वह मूर्ति सबको सब कामनाओं की देने वाली है, उसके ८०।मने एक

बड़ा कुंड है, उसमें श्रीगणेशपद है। कोई शूद्र बड़ा कोढ़ी बुढ़ापे से जर्जरित शरीर जिसका हो रहा है तीर्थ यात्रा करता करता कदंब नगर में आगया, श्रीगणेशकुंड में नहाते ही उसका शरीर दिव्य होगया, विनायक स्वरूपी-गण आकाश से आकर उसे विमान में बैठाकर लेगये। वह ऐसे उत्तम स्थान पर जा पहुँचा, जहां जाकर सोच जाता रहता है और फिर वहाँ से कोई पृथ्वी पर नहीं आता है, हे राजा! मैंने स्वयं यह देखा है. अब तुम वहां जाकर स्नान करो, फिर श्रीचिन्ततार्थ के देने वाले प्रभु श्री गणेशजी का पूजन करो और ब्राह्मणों को दान दो, बहुत जल्दी पवित्र होजाओगे, जैसे पुरानी काँचली को डालकर सर्प अच्छा रूपवान होजाता है।

ब्रह्माजी ने कहा—इस प्रकार नारदजी की वाणी सुनकर राजा आनन्द समुद्र में मग्न हुआ और नारदजी से कुछ भी नहीं बोला, जब मुनिवर नारदजी जाने के लिये तैय्यार हुए, तब उनको साष्टांग प्रणाम करके, पूजा करके, मुनि से पूछने लगा, कि उस क्षेत्र में पहले किसने सिद्धि प्राप्त की है और मणि रत्नों की श्रीविनायक जी की मूर्ति किसने पधराई है, यह आप मुझसे कहो मुझे इसका बड़ा शौक है, आप जैसे श्रेष्ठ लोगों की इच्छा परोपकार करने में रहती है और कोई काम आपको लोक में भ्रमण करने का नहीं है, मेघ लोक में वर्षा करता है, शेषजी पृथ्वी के भार को धारण करते हैं, सूर्य भी उपकार के लिये ही रात दिन घूमता है, आप सब जीवों पर समभाव रखते हैं. सर्वज्ञ हैं। मैं नावाकिफ हूं, मूर्ख हूं, आपसे क्या प्रार्थना करूं तो भी अपने सन्देह निवारण के निमित्त पूछता हूं।

नारद जी बोले—हे लोगों पर अनुग्रह करने वाले राजा! तूने खूब पूछा, मैं तुम्हारे वाक्य से तृप्त हुआ, सब तुमको कहता हूँ॥ २९॥

---

# तीसवां अध्याय।

## अहिल्या का पतिव्रत भंग किया जाना।

नारद जी ने कहा—एक बार मैं इन्द्र से मिलने को अमरावती में गया था, उसने मेरा सत्कार किया और बड़ी नम्रता से बोला, कि कोई आश्चर्य

की बात कहो, जिससे मुझे सन्तोष होवे, आप सब जगह घूमते हैं, आपको सब मालूम है, तब नारदजी बोले, कि मृत्यु लोक में मैंने गौत्तम ऋषि का बड़ा आश्रम देखा, वहां कई प्रकार के वृक्ष लगे हुए थे और कई प्रकारके पक्षी थे, वहां अहिल्या समेत गौत्तम को देखा, उसका रूप देखकर मैं काम से पीड़ित होगया, जिसके रूप के सामने सावित्री, इन्द्राणी, लक्ष्मी, पार्वती, उर्वशी, मैनका, रम्भा लोक में प्रसिद्ध तिलोत्तमा, केशा, बाला और इनको पैदा करने वाली अनुसूया, अरुन्धती सूर्य के स्त्री छाया और संज्ञा कश्यप की स्त्री अदिती कोई भी कुछ नहीं, नाग पत्नियों में ऐसी कोई नहीं है, तब से मुझे गाना, पूजा, भोजन कुछ अच्छे नहीं लगते न मेरा ब्रह्मचर्य रहता है न मुझे निद्रा आती है इसलिये मैं जल्दी से अमरावती को देखने आया हूँ यह इन्द्राणी भी मुझे तुच्छ जान पड़ती है। यह अमरावती उसके बिना कुछ नहीं, इस प्रकार जब इन्द्र से नारदजी कह कर चले गए तो इन्द्र मन ही मन नारदजी के वाक्य को स्मरण करता हुआ कामदेव के बाणों से पीड़ित होकर मूर्च्छित होगया और यह सोचने लगा, कि कब गौत्तम मुनि की स्त्री को देखूं और उसके अधरामृत को पीकर कामाग्नि को शान्त करूं। उसको आलिंगन किये बिना जीना ही वृथा है। यह निश्चय करके इन्द्र गौत्तम मुनि बना और उसका विचार करता करता गौत्तम के आश्रम में आया, गौत्तमजी स्नान करने गये थे, उसने अहिल्या के पास जाकर कहा। हे प्रिये! पलंग के लिए तैय्यार होजाओ, उसने कहा, आप जप छोड़कर आज घर को कैसे आये और दिन के समय ऐसी निंद्य मैथुन की इच्छा कैसे हुई, गौतम ने कहा, कि मैं नहाने को गया तो मैंने नंगी अप्सरायें देखीं, बिंबाफल के समान जिनके होठ हैं. श्रेष्ठ जिनके अङ्ग हैं, सुन्दर पीन कुच हैं. काम के बाणों से पीड़ित होगया और मेरा मन जप में नहीं लगा, इसलिए मैं आश्रम में आया हूं, मुझसे भोग करो, नहीं तो कामाग्नि से जल जाऊंगा, फिर तुम किसे देखोगी, ऐसा नहीं करोगी तो मैं तुमको शाप दूंगा या घर से निकल जाऊंगा, इस समय मेरा मन बड़ा दुःखी है।

अहिल्या ने कहा—कि हे ब्रह्मर्षि! स्वाध्याय और देव पूजा को छोड़कर आप कैसे रति की इच्छा करते हैं, यह आपको उचित तो नहीं है. तौ भी मैं

आज्ञा पालन करूंगी, स्त्री के लिये पति की सुश्रुषा से अधिक कोई धर्म नहीं है। आवाज़ सूरत और स्वभाव से उसने इन्द्र को गौत्तम ही समझा। इसलिए अहिल्या इन्द्र के साथ सोई और रमण किया। शङ्का छोड़कर चुम्बन, आलिंगन, नीवी, विस्रंसनादि सब कुछ हुआ। इन्द्र आकृतिसे गौत्तम ही जंचता था, इससे अहिल्या के साथ क्रीड़ा कर सका, फिर जब दिव्य गन्ध आई तो अहिल्या को शङ्का हुई और वह चौंकन्नी हुई और मन में सोचने लगी, कि यह बनावटी रूप में कौन है, चन्द्रमा की तरह कहीं मेरे कलङ्क तो नहीं लग जावेगा, इस दुष्ट के संगम से मेरे दोनों कुल नष्ट हुए, मैं अपयश से काले अपने मुंह को कैसे दिखाऊंगी, मेरे प्रियपति मुझे किस गति को पहुँचावेंगे, उस मूर्ख को क्रोध करके पूछने लगी, कि तू कपटी रूप धरे कौन है, मैंने स्वामी के रूप से विश्वास कर लिया, अपना असली रूप बतला, नहीं तो शाप देती हूँ, ऐसा कहने पर शाप के डर से उसने अपना रूप दिखाया तो दिव्य आभूषणों से युक्त मुकुट और कड़े पहने कुंडलों की अद्भुत कांति से मुख शोभायमान हो रहा था, उसने कहा कि, मैं इन्द्र तेरी सुन्दरता को देखकर मैं कामाग्नि से विह्वल होगया और जब कहीं मुझको आराम नहीं मिला तो मैंने ऐसा किया, इसलिये आजसे मुझको त्रिलोकी का स्वामी समझकर आदर पूर्वक मेरी सेवा करो, उसके ऐसे वचन सुनकर अहिल्या क्रुद्ध हुई, मुखसे ज्वाला फैंकती हुई इन्द्र से बोली। हे मूर्ख इन्द्र ! जब मेरे पति आवेंगे तब तेरे इस शरीर की क्या दशा होगी, यह मैं नहीं जानती, हे पापी ! तूने मेरा पतिव्रत भंग किया है गौत्तम के वचनों के शाप से मेरी क्या दशा होगी॥ ३२॥

---

# इकत्तीसवां अध्याय।

## इन्द्र के शाप का वर्णन।

रुक्मांगद ने कहा—हे मुनि गौत्तम के आने पर क्या हुआ, सब कहो, मैं यह सुनने की इच्छा रखता हूं।

नारदजी बोले – नित्य कर्म समाप्त करके, जब गौत्तम मुनि, अपने आश्रम पर आये, तो अपनी स्त्री को बुला कर कहा, पैर धुलावो। पहिले की तरह, तू मेरे सामने, क्यों नहीं आई, आसन आज क्यों नहीं लाई, अच्छी तरह क्यों नहीं बोलती, ऐसे वचन सुन कर, वह बेल की तरह कांप उठी. और कुछ देर बाद नीचा मुंह किये, बाहर आकर, मुनि के चरणों पर मस्तक, रखकर पृथ्वी पर साष्टांग गिर पड़ी, घबराई हुई शाप से, डरी हुई धीरेसे, मुनिसे बोली, आप अन्धेरे ही उठकर स्नान और पूजादि, करने चले गये. तब आपका रूप धर कर दुष्ट इन्द्र आया, और मुझसे कहने लगा, कि मुझे सुन्दर अप्सरायें, निगाह आईं, जप, पूजन, नित्य नियमादि में मेरा मन नहीं लगता। इसलिये मैं वापिस आगया हूँ, मुझे रति दे. मैंने आपको ही जान कर मैंने वैसेही किया, दिव्य गन्ध आई, तब मुझे शंका हुई, तो मैंने उससे कहा, कि दुष्ट तू कौन है, कह नहीं तो भस्म होजावेगा. इस, आपके डरसे इन्द्र प्रगट हो गया, जब आपकी आवाज, सुनी तो शर्म के मारे बाहर जल्दी नहीं आई, मेरा अपराध क्षमा करो, मन्त्र, आयु, गृह के छिद्र, लक्ष्मी, रति और दया मान और अपमान दान, इनको स्वयं कहने में भी दोष है और दूसरा कहे तो भी दोष है, इनको प्रगट नहीं करना चाहिये। यह सुनते ही मुनिकी इन्द्रियां, क्रोध से व्याकुल हो गईं और अपनी स्त्री, को शाप दिया, कि दुष्टा तू शिला होजा, तू मेरे उस स्वरूप को नहीं जान-सकी न स्वभाव को पहिचाना, न चेष्टाएँ जान सकी, जो तू पर पुरुष के साथ काममें मन लगा बैठी, जब दशरथ जी के पुत्र, महाराज, रामचन्द्रजी घूमते घूमते वन में आवेंगे, तब उनके चरणों के छूने से तू अपने रूप में आजावेगी।

नारदजी बोले–मुनि के वचन से वो फौरन शिला होगई, उसके शाप को सुनकर इन्द्र कांपने लगा, जैसे जोर की हवाके चलने से हिमालय पर्वत भी कांपने लगे, मनमें सोचने लगा, मैं अब क्या करूं, समुद्र में, कुवे व बावड़ी, तालाब में, कमल में छिपजाऊं, तो भी मुनि जान जायगा, इस वास्ते बिल्ली के रूप से इन्द्र बाहर निकला गौत्तम ने जब घर में दरवाजे पर और आश्रम में इन्द्र को नहीं देखा, तो कहा राक्षसों के शत्रु जिसने मेरी स्त्री के कलंक,

लगाया है, कहां गया । क्षण भर में मुनि ने उसको ध्यान से देख लिया और कहा, कि तुझे भस्म कर डालता, लेकिन तू देवताओं का स्वामी है, इस लिये छोड़ता हूं और शाप देता हूँ, कि तू हज़ार भग वाला होजा । मुनि के ऐसे क्रोध के वचन सुनते ही इन्द्र को दीखा, कि मेरे शरीर में हज़ारों भग के चिह्न हो गए, तव उसे वड़ी चिन्ता हुई, वह सोचने लगा, कि मुझको वुड्ढे लोगों ने अनेक धर्म सिखाये, मैंने आदर पूर्वक उनके वचनों पर विचार नहीं किया, अपनी ही वुद्धि से काम किया जावे तो वह अच्छा होता है और दूसरे के कहने में आजाने से हानि होती है, वड़ों का कहना भला होता है और मन माना स्त्रियों के कहने आदि से नाश, मैं क्यों नारद के कहने में आगया, जो इस वुरी दशा को प्राप्त हुआ, मैं देवताओं का राजा हूँ, संसार को मुंह कैसे दिखाऊं, मेरा दिव्य शरीर कहां गया, मेरी स्त्री से मैं क्या कहूंगा, धिक्कार है मुझको और इस कामदेव को, जिसके कारण मेरी यह दशा हुई, प्राणी शुभ और अशुभ सव कर्मों के फल भोगता है, कव मैं नीचोंकी योनि ग्रहण करके अपने पापों से छुटकारा पाऊंगा, यह कह कर जुगनूं वन कर कमल की डोंडी में घुस गया ॥ २८ ॥ ३१ ॥

---

## बत्तीसवां अध्याय

### मन्त्र वताना ।

नारदजी ने कहा—इन्द्र जव कमल की नाल में छिप गया, तो मैं अमरावती में पहुँचा और वहां जाकर वृहस्पति को आगे करके जो देवता वैठे थे, उनको देखा और उनसे दोनों के शाप दिये जाने का कारण कहा, अहिल्या के और इन्द्र का संयोग और इन्द्र के विरूप होने की वात कही, कि वह गौत्तम के शाप से हज़ार भग वाला हो गया है, अहिल्या के साथ जवरन करने के कारण ऐसा हुआ है और अहिल्या भी उसके संग शिला होगई ।

ब्रह्माजी ने कहा—नारद के कहने पर सव देवताओं को शोच हुआ और वे दुःख के मारे हवस-हवस कर रोने लगे।

देवताओं ने कहा—कि जिसने सैकड़ों यज्ञ किये, राक्षसों को जीते, त्रिलोकी का पालन किया, इन्द्र पद भोगा, बहुत से देवता और ब्रह्म के जानने वाले ब्राह्मणों का पूजन सत्कार किया, जो भोग दूसरों को दुर्लभ हैं, वे भोग, वह देव कहां ठहरेगा। क्या खावेगा, कैसे सोवेगा, उसका किया हुआ अपराध हो अथवा हमारा किया हुआ अपराध हो, अब हमारी रक्षा कौन करेगा, इन्द्र पद को कौन भोगेगा और इंद्राणी को कौन भोगेगा, हम किसकी शरण जावैं, मुनिवर गौत्तम कैसे प्रसन्न होवें, जिन्होंने उसके अपराध के कारण क्रुद्ध होकर अपनी स्त्री को भी छोड़ दिया, गौत्तमजी के प्रसन्न करने के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं सूझता। इस लिये हे नारद जी! गौत्तम जी की खुशामद करने को चलेंगे, इस प्रकार नारद जी को साथ लेकर सब देवता वहां से चल कर गौत्तम के पास आये और हाथ जोड़कर मुनिसे नाना प्रकार के मीठे वचन करके गौत्तम ही की शरणली।

देवताओं ने कहा—हे मुनि! हम लोग आपका प्रभाव बयान नहीं कर-सकते। सुमेरु पर्वत और हिमालय की गुरुता का कौन वर्णन कर सकता है। मेरु और हिमालय से भी अधिक है, वर्षा की धाराओं को, पृथ्वी की धूलि को और गंगा जी की रेणुकाओं को, समुद्र के जल को और विष्णु के गुणों को, कोई जैसे नहीं गिन सकता। वैसे ही आपके गुणों को कोई नहीं गिन सकता, सुबह बीज बोया गया दोपहर में धान्य वगैरह, उत्पन्न हो गये और ऋषियों की आपने पहिले रक्षा की है, वालखिल्य ऋषियों के साथ यज्ञ करके दूसरा इंद्र बना डाला, पहिले उनको ब्रह्मा आदि से प्रार्थना करने पर उन ऋषियों ने पक्षी से नाश बतलाया, समुद्र की एक चुल्लू कर गये, बुद्धिमान् गाधि पुत्र ( विश्वा मित्र ) ने दूसरी सृष्टि बनाना आरम्भ कर दिया, महात्मा च्यवनने इन्द्र के हाथ पकड़ लिये। इस लिये सब प्रकार के लोगों को आपकी सेवा और आप को नमस्कार करना, आपके दर्शन, आपके साथ बात चीत, पूजन करना तथा स्पर्श करना, यह सब पापों को नष्ट करने वाले हैं, जो लोग परोपकार में लगे रहते हैं और गरीबों पर कृपा किया करते हैं, ऐसे आपके पास हम लोग इंद्र के निमित्त शरण आये हैं, आपको कृपा करनी चाहिये।

गौत्तम जी ने कहा—चर्म चक्षु वाले अर्थात् मनुष्यों को आप लोगों के दर्शन नहीं होते, मेरे पुण्य के प्रभाव से आपको दर्शन हुए हैं, जिसको मनुष्य की इच्छा पूर्ण होना माना जाता है। मेरा जन्म, आश्रम, तप, दान, देह, आत्मा, व्रत, नेत्र सब सफल हुए, अब आप क्या चाहते हैं, वह फरमाइये, जो मुझसे वा मेरी बुद्धि के बल से हो सकेगा सो करूंगा।

मुनि ने कहा—ऐसे उनके वचन सुनकर देवता प्रसन्न हुए, जैसे चन्द्रमा के उदय होने पर समुद्र और बालकों की तोतली बोली से उनके मा व बाप प्रसन्न होते हैं, फिर उन्होंने गौत्तम मुनि से प्रार्थना की, कि कामदेव ने शिवजी का अपराध किया था, तो उसको उन्होंने भस्म कर दिया, परन्तु पाप करने वाले इन्द्र को प्राणों से पृथक् नहीं किया, अब हमारे कहने से इन्द्र के सब अपराध क्षमा कीजिये और उसको अपने स्थान पर भिजवाइये, उस पर आपकी कृपा होगी तो हमने सब कुछ भर पाया।

नारदजी बोले—गोत्तमजी देवताओं की बात सुनकर मुसकराये और देवताओं को उत्तर दिया, कि उस पापी का नाम भी मतलो, कपटी है, मूर्ख है, दुष्टात्मा है और विना विचारे काम करने वाला है, जो पश्चाताप भी नहीं करता, उसका निकास पापसे कैसे हो, तौ भी आपके कहने से वह ही करूंगा, जो आपको प्रिय हो, जो आप नाराज हो जावें, तो शाप उलटा मेरे ऊपर पड़े, जिसके ऊपर बहुतों की कृपा हो, वह मनुष्य पवित्र हो जाता है, इस लिये मैं एक मन्त्र बतलाता हूं, आप उसे वह बतावो। सब के करने वाले, सबके हरने वाले, सबकी रक्षा करने वाले, कृपा के खजाने ब्रह्मा, विष्णु और शिव स्वरूप देवों के देव श्री विनायकजी हैं, उनका षड़क्षर मन्त्र सिद्धि देने वाला है, उसको उस मन्त्र का उपदेश करने पर वह दिव्य शरीर का हो जावेगा, जितने उसके भग हैं, उतने ही नेत्र हो जावेंगे और वह इन्द्र अपना राज्य पालेगा, यह मैं आपसे सच कहता हूँ. देवताओं को ऐसा कह कर गौत्तमजी चुप होगये, उन्होंने उनकी पूजा करके हर्ष से नमस्कार किया और फिर प्रदक्षिणा करके आज्ञा लेकर मुनि की प्रशंसा करते हुए वहां गये, जहां पर इन्द्र मौजूद था और यह कहने लगे, कि ज्ञान युक्त गौत्तम जी के सिवाय और कोई सात्विक नहीं है॥ २४ ॥ ३२ ॥

# तेतीसवां अध्याय।

देवताओं ने इन्द्रसे कहा—कि हे इन्द्र बाहर निकलो ! नारद मुनिके साथ हम गौत्तम मुनि के पास जाकर उनको प्रसन्न करके यहां तुम्हारे पास आये हैं, उन्होंने उपाय बताया है और तुमको वर भी दिया है, सज्जन लोग अपराध बन भी पड़े, तो लोगों में उसे प्रगट कर देते हैं, और फिर उसके हटाने का उपाय भली भांति करते हैं, उससे वह बेकार हो जाता है, छिपाने में दोष बढ़ता है, विख्यात् कर देने से वह लुप्त हो जाता है, इस वास्ते, हे इन्द्र ! तुम बाहर निकल कर उसको नारदजी से कहो और वह जो उपाय बतलावें उसे करो और श्रीगणेशजी का षडक्षर मन्त्र लो, शिवजी और पार्वती जी के विवाह में ब्रह्माने पार्वती जी का केवल एक अंगूठा देखा था, उससे उसका वीर्य स्खलित होगया तो वह शर्मिन्दा होकर नीचा मुख किये हुए गया। तो शिवजी ने यह जानकर उसे उपाय करके दोष रहित किया, यह बचन देवताओं के सुनकर कमलिनी की डोड़ी से इन्द्र बाहर आया और आदर पूर्वक देवताओं के बचन सुने, उस समय उसके शरीर से राध, लोहू, टपक रहे थे और बड़ी दुर्गंध आती थी, ऐसी दशा में देखकर भी देवताओं ने अपने २ नाकों के रूमाल लगाकर उसे नमस्कार किया, फिर नहाकर और आचमन करके इन्द्र पवित्र हुआ, तब बृहस्पति ने श्रीगणेशजी का षड्मन्त्र उसे दिया, उसे उपदेश करते ही वह दिव्य देह होगया, हज़ार नेत्र वाला मानों दूसरा सूर्य होगया, फिर बाजों के शब्दों से और देवताओं के जय शब्दों से आकाश गूंज उठा गंधर्वों के गाने की आवाज़ से दशों दिशाऐं गूंज गईं, सब देवता प्रसन्न होकर फूल बरसाने लगे, नारदादि सब मुनियों ने आशीर्वाद दिया, बहुत से देवताओं ने उसको हर्ष से आलिंगन किया और कई ने उसकी स्तुति की और बहुत से देवताओं ने कहा, कि हम आपसे स्वामि युक्त होगये, जैसे चन्द्रमा के बिना आकाश अच्छा नहीं मालूम होता, वैसे हम भी तुम्हारे बिना अच्छे नहीं लगते थे, जैसे बिना मा, बाप के बालक सुख नहीं पाते, वैसे ही तुम्हारे बिना, हमको कल्याण कहां था।

देवताओं के ऐसे वचन सुनकर इन्द्र प्रसन्न हुआ और उसकी आत्मा को तसल्ली पहुँची, तो देवताओं से सच्ची २ कहदी।

इन्द्र बोला—मैंने जो बड़ा कुकर्म्म किया था, वह नारद जी के वचन से मोहित होकर किया था, उसका बड़ा बुरा फल पाया, उस महापाप से आप सबने मेरा उद्धार किया है, आप बड़े प्रभावशाली हैं, मैं सब देवताओं और ऋषियों को नमस्कार करता हूँ। क्यों कि आप लोग मेरी आत्मा का उद्धार करने और मेरी रक्षा करने के लिये, गौत्तम की शरण गये. आप लोगों ने गौत्तम मुनि को प्रसन्न करने का क्या उपाय रचा, उन्होंने मेरे लिये परम मन्त्र कैसे बताया, यह सब कहो।

देवताओं ने कहा—कि नारद जी और बृहस्पति जी के पीछे २ हम सब उस मुनि के पास पहुँचे और बड़े नम्र भाव से उनको नमस्कार किया और उनको तरह २ की मीठी बातों से प्रसन्न किया, जब उनसे सवाल किया, तो उन्होंने यह अपना मन्त्र भी बताया, जिसके उपदेश करने से ही तुम्हारे हजार नेत्र होगये और इनसे तुमको सुख मिलेगा। हे देव! अब तुम अपनी अमरावती नगरी को चलो और सब लोकों और देवताओं पर राज करो।

इन्द्रने कहा—हे देवता और ऋषियो! श्री गणेशजी की कृपा के बिना मैं अपनी नगरी को नहीं जाऊंगा, आप लोग अपने अच्छे काम में सफल होगये। आप बड़ी खुशी से अपने दिव्य स्थानों को जाकर आराम करें, यह ही काफी है, कि मेरा यह भेद खुल गया। मैं मारे शरम के नीचा पड़ गया था मेरी बड़ी दुर्गति हुई थी, बड़े तेज वाले मुनि ने आप लोगों की कृपा से मुझे क्षमा किया और मेरे बहुत से नेत्र होगये॥ २४॥

---

# ❀ चौतीसवाँ अध्याय ❀

## चिन्तामणि तीर्थ वर्णन।

नारद जी बोले—कदम्ब वृक्ष के नीचे बैठकर नासाग्रदृष्टि रख कर परमासन बैठ कर मनको रोक कर इन्द्रने षडमन्त्र का जप किया, केवल हवा ही खाकर अर्थात् निराहार बैठा रहा, एक हजार वर्ष बीत गये, पहाड़ की तरह ऐसा स्थिर होकर बैठा, कि उसके शरीर पर बम्बियें और झाड़ियें उत्पन्न होगईं, फिर श्रीगणेशजी सब जगह जिनकी गति है, सब कुछ जानने वाले,

उग्रतेज वाले हैं, प्रसन्न हुए, अपने तेज से, अग्नि,चन्द्रमा, सूर्य इनके तेजों को ढकते हुए और सबके नेत्रों को चका-चौंध करते हुए चार भुजा धारी रत्नों का मुकुट जिनके मस्तक पर शोभायमान है, हाथों में अंगद, कानों में कुंडल जिनसे गंडस्थल शोभायमान हैं, मोतियों की माला पहने अमूल्य नूपुर पहिने हुये कमर में जड़ाऊ घूंघरों की करणगती थी, जो बड़ा शब्द. कर रही थी. कमल के से नेत्र वाले,कमल की माला,सूंड़ पर धारण किए और बहुत से कमल मस्तक पर धरे हुए उनके दर्शन करके इन्द्र डर गया और यह सोचने लगा, कि यह क्या है, क्या आगया, मेरे शरीर में हड्डियां और प्राण ही रहगये हैं, मैं बचूंगा, कि नहीं न जाने आज किस देव ने यह बड़ा विघ्न मेरे लिए पैदा कर दिया, मेरे शरीर में एक दम से पसीना आगया, पीतल के पत्ते की तरह हिलता है उसको इस प्रकार घबड़ाया हुआ, जानकर जिनकी दृष्टी सब जगह पड़ती है,ऐसे श्री गणेशजी इंद्र को मीठे बचन बोले। हे इंद्र ! डरो मत क्या तू मुझे नहीं जानता जो निर्गुण हूँ, निर्विकार हूँ, चिदा नंदन हूं, सनातन हूं. कारणों से दूर हूँ, अव्यक्त हूं, जगत्के कारणों का कारण हूं, जिस देव का तू निश्चल मन होकर ! इस मंत्र से ध्यान कर रहा है, तुझे बहुत दिन हुए तू थक गया, इस लिये प्रत्यक्ष हुआ हूं। मैं इस तपस्या से प्रसन्न हूँ, वर देने को यहां आया हूं, अनंत ब्रह्मांड की उत्पत्ति, प्रलय और रक्षा करने वाले मुझको ही मान, जो कुछ चाहता है सो माँग। उन के ऐसे मीठे वचन सुन कर इन्द्र को ज्ञान हुआ। जल्दी से उठकर बड़ी भक्ती से, बड़े शरीर वाले देवों के देव प्रत्यक्ष में ब्रह्मरूप भगवान् ! श्री गणेशजी से प्रार्थना करने लगा। हे बड़ी भुजा वाले गणेशजी, ब्रह्मादि सब लोकपाल भी आपको नहीं जान सकते, जगत् का उत्पन्न करना, क़ायम रखना और प्रलय करना आपका काम है, उनके गुणों को मैं कैसे जान सकता हूँ, सौ यज्ञ करने से उत्पन्न होने वाला कृत्रिम पद आपने मुझको बख्श ही दिया, उसमें भी नाना प्रकार के विघ्न पैदा हो जाते हैं। हे गजानन ! मैं आपकी महिमा कैसे जानूं। हे महेश्वर ! जिसपर आपकी पूरी कृपा होती है,हे विघ्नों के कारण गणेशजी ! वह ही आपकी महिमा को जान सकता है और तब ही आपके गुण और रूप के वर्णन करने की शक्ति हो सकती है।हे भगवन् ! आप

आधार रहित और सबके आधार हैं, नित्य हैं, ज्ञान स्वरूप हैं. अजर हैं और अमर हैं, नित्यानन्द से भरे हुए हैं, मायावी हैं और ऐसे हैं जो छीजते नहीं, आप अक्षर परमातमा हैं संसार रूपी हैं और सब के स्वामी हैं। सनकादि मुनि ने बड़ी तपस्या करके आपको पहचाना और वे मुक्त होगये। हे महाराज! इस षड्क्षर मंत्र के प्रभाव से मुझे आपके दर्शन हुए हैं. जिसको कृपा करके मुझे दिया गया, पहले ब्रह्मा ने इसका उपदेश किया है और ब्रह्मा ने मुझको यह भी कहा है, कि जब तुम इसको भूल जावोगे, तो तुम्हारी दुर्दशा हो जावेगी और तुम अपने स्थान से गिरा दिये जावोगे तो मैंने लोभ में पड़कर और दुर्भाग्य के वश होकर गौत्तम मुनि की स्त्री की इज्जत बिगाड़ी और मेरी दुर्गति हुई। फिर जब बृहस्पति से इस मन्त्र की शिक्षा मिली तो अब उसके प्रभाव से हजार नेत्रों से आप के स्वरूप के दर्शन हुए, आप मनकी इच्छाओं के देने वाले हैं, इस लिये एक वर और मांगता हूँ, वह यह है, कि यह कदंब नगर चिन्तामणिपुर हो जावे, अनुष्ठान का फल मैंने पालिया यदि आपके चरण कमलों में मेरी दृढ़ भक्ति है, तो हे विघ्नों के स्वामी! एक वर और मांगता हूं, वह भी मुझको प्रदान करें और वह यह है, कि हे देव! मैं आपको कभी नहीं भूलूँ और मेरा मन सदा आपके चरण कमलों में रहै। हे गजानन! आज ही से लोक में यह क्षेत्र चिंतामणि तीर्थ, के नाम से विख्यात् होवे और हे जगत् गुरु! यह सरोवर इस वास्ते विख्यात् हो, कि इसमें स्नान, करने से अथवा, इसके निकट दान देने से. आप की कृपा से धर्म, अर्थ, काम और मुक्ति और सिद्धियें, लोगों को होवें। जब इन्द्र का मेघ के समान, गंभीर शब्द, जगत् के स्वामी, विघ्नेश ने सुना तो मीठे शब्दों में कहने लगे, कि हे इंद्र! जो तुमने मांगा, वह सब तो होहीगा, एक वर और देता हूं, कि तुम अपने पद पर स्थिर रहोगे और मुझे कभी नहीं भूलोगे, और जब जब तुम्हारे ऊपर कोई संकट पड़े तो मुझे याद कर लेना, मैं प्रगट होकर सदा तुम्हारे काम करता रहूंगा। यह लोक में चिंतामणि पुर के नाम से विख्यात होगा, यह कदम्ब पुर चिंतामणि तीर्थ भी होगा, जो कोई यहां स्नान करेगा, सिद्धियां उसके हस्तगत होंगी। मैं चिंतामणि, विनायक, जो कुछ वह विचार करेगा, सो ही उसे दूंगा। इस प्रकार वर पाकर फिर इंद्र

स्वर्गङ्गा को ले आया और उस से अभिषेक कराकर परिवार समेत श्री गणेशजी का पूजन किया, इन्द्र से पूजा कराकर आपतो अंतरध्यान होगये और वहां इन्द्र ने सर्वांग सुन्दर, शुभ और दिव्य श्री गणेश जी की स्फटिक मूर्ति स्थापित की, रत्न और सुवर्ण से बड़ा मन्दिर बनवाया, नमस्कार करके और प्रदक्षिणा करके तब इन्द्र अपने स्थान को चला गया, तब से यह पृथ्वी पर बड़ा चिंतामणि सर कहलाता है, आज भी श्री गंगाजी इन्द्र के कहने से इस मूर्त्ति को स्नान करा कर अपने घर जाती हैं। हे राजा! तुझको जिसके देखने से आज आश्चर्य होता है। मैं उस क्षेत्र की महिमा सुनाता हूं, यह क्षेत्र, सब दोषों का हरने वाला है और लक्ष्मी देने वाला है और सब कामनाओं का देने वालाहै और शुभ फल देने वाला है। हे राजा! वहां जाकर, विधि पूर्वक स्नान करो. तो तुम सब दोषों से छूट जाओगे, इसमें कोई संदेह नहीं, इसके अनन्तर मुनिराज रुक्मांगद सहित उस राजा को आशीर्वाद देकर उससे आज्ञा लेकर अपने स्थान को चले गये ॥ ४३ ॥

---

# पैंतीसवां अध्याय।

## कदंबपुर जाने का हाल।

नारद जी के गये पीछे राजा रुक्मांगद ने क्या किया, इसकी मनोहर कथा सुनाइये।

व्यास जी के यह पूछने पर, ब्रह्मा जी ने कहा—कि जिस वक्त हमारा नारद नामी पुत्र इस प्रकार बड़ा उपदेश करके गया, तो रुक्मांगद को अपनी चतुरंगिणी सेना दिखाई पड़ी, जिसको देखकर वह बड़ा प्रसन्न हुआ. सेना ने भी उस राजा को बद शकल देखा, जो पहिले सोने की सी कांति वाला, कामदेव के समान रूप वाला था, इस नगर में आकर यह ऐसा कैसे होगया, ऐसी शंका करके उन्होंने पूछा, कि हे राजन्! हम पहाड़ों, वनों, नदियों पर घूमते हुए, आपसे मिलने की इच्छा से भूखे प्यासे चले आ रहे हैं, आपके चरण कमलों को क़दम-क़दम पर देखते हुए यहां आये हैं, आपको इस अवस्था में देख-

कर, हम बड़े दुखी हुए, आपकी यह अवस्था कैसे हुई, कृपा करके हमको कहिये ! राजा बोला, कि तुम्हारे पहिले मैं यहां आ पहुंचा था, भूखा, प्यासा था, मुझे जल्दी ही वाचक्नवि मुनि का आश्रम दिखाई पड़ा, वहां जाकर मैंने उनकी स्त्री मुकुंदा को देखा। मैंने उसे माता कह कर जल मांगा, वह दुष्टा स्वेच्चाचारिणी मुझसे बेजां बात बोली, कि मेरे साथ भोग करो। नहीं तो मैं शाप दूंगी, मुझ शुद्ध चित्त वाले ने उसको फटकारा, उसने मुझे शाप दिया। उस समय उसके पति स्नान करने गये थे, तब से मैं दुखी होकर वृक्ष के नीचे बैठा हूं, पूर्व जन्म के पुण्यों के प्रताप से मुझे नारद मुनि दिखाई दिये, उन्होंने मुझे अरिष्ट नाश की उत्तम विधि बताई, चिंतामणि क्षेत्र पहुँच कर श्री गणेशजी के तीर्थ का आश्रय लो, उन्होंने विस्तार पूर्वक उस तीर्थ की महिमा कही, दिव्य दृष्टि मुनि ने उस तीर्थ में स्नान करने को कहा है। इस लिये अपने दोष निवारण के निमित्त वहाँ स्नान करने मैं जाऊंगा, आप लोग भी वहां स्नान करना चाहो तो मेरे साथ आजावो। वहां स्नान करके और यथा शक्ति दान देकर और श्री विनायकजी का पूजन करके, उनके प्रभाव से पवित्र होकर। फिर अपने नगर को चलेंगे।

ऐसा विचार कर वे सब लोग राजा के साथ वहां गये और श्री गणेश तीर्थ को देखा, राजा देखते ही दिव्य शरीर होगया, तपे हुए सोने की सी कान्ति वाला जैसा पहिले था वैसा होगया, तो राजा ने नारदजी के वचन को सत्य समझा। राजा ने स्नान करके बड़ी खुशी से ब्राह्मणों को दान दिये, श्री गणेशजी का पूजन किया। इससे उसको तेज पुंज दिखाई दिया. सूर्य के समान तेज वाला विमान जिसमें ब्राह्मण और नौकर थे, श्री गणेशजी के गण थे और अप्सरा और किन्नर उसमें नृत्य गान करते हुए आये, राजा ने उनको नमस्कार करके पूछा, कि आप लोग कौन हैं ? और कहां से आये हैं, किसके दूत हैं और यहाँ किस काम आये हैं, कृपा करके कहिये।

राजा के मीठे वचन सुनकर विमान वालों ने कहा. कि हम श्री गणेश जी के दूत हैं। हे राजा ! तू धन्य है, जो तैंने बड़ी भक्ति से श्री चिन्तामणि विनायक का पूजन किया, भली भांति तीर्थ यात्रा की और यथा विधि दान दिया और श्री चिंतामणि विनायक का पूजन करने से अब तू कृत कृत्य

हुआ, मनोवांछित फल देने से यह चिंतामणि कहलाता है, अच्छे व्रत रखने वाले हे राजा ! हम भी तेरे दर्शन करके कृत्य कृत्य हुए । हे राजा ! हम तेरी भक्ति की महिमा नहीं जानते हैं । जो मन वचन काय से और अपना जीव भी अर्पण करके तूने सब ब्रह्माण्ड के स्वामी श्री विनायक जी की आराधना की, हम उनके दूत हैं और उन ही के भेजे हुए आये हैं वे तुमको देखने के लिये उत्सुक हैं । हमको हुक्म दिया है, कि तुम मेरे भक्त रुक्माङ्गद को विमान से मेरे पास लावो, यह हुक्म पाकर ही हम रवाना होगये हैं । तुम इस आकाश-गामी सवारी पर बैठ जावो, हम तुमको जल्दी से जल्दी श्री विनायक जी के पास ले चलें ।

उनके ऐसे वचन सुनकर राजा रुक्माङ्गद ने कहा, कि कहां तो मन्द बुद्धि वाला मैं और हे दूतो ! कहां अखण्डित विग्रह अप्रमेय । अप्रतर्क्य चिन्मात्र अव्यय व्यापक सृष्टि पालन संहार इनके कारण और कारणों का भी उल्लंघन करने वाले ऐसे स्वामी श्री गणेशजी का मेरे में आदर कैसे हुआ । यह मैं नहीं जानता यह तीर्थ करने का फल है, अथवा पूर्व जन्म के किसी उत्तम पुण्य का फल है, जिससे आप लोगों के दर्शन हुए । आप लोग मुझसे भी अधिक धन्य हैं, जो रात दिन उनकी सेवा में रहते हैं, यह कह कर उनके चरण छूकर उनको प्रसन्न किया और कहा, कि मेरे पिता भीम ब्रह्मणीक हैं, सत्यवादी हैं और बड़े पराक्रमी हैं । उनके विना और अपनी माता चारुहासिनी विना मैं कैसे चलूं, वह भी श्री गणेशजी का पूजन जन्म से करती है, कभी किसी दूसरे देवता का पूजन नहीं किया ।

दूत ने कहा—यह ही बात है तो इस तीर्थ में उनको भी स्नान करावो और यह कल्याण माता-पिता दोनों का करो, तो उनको भी विमान में बैठा कर ले चलें ।

उनके ऐसे वचन सुनकर उनकी मूर्ति डाभ की बनाई, यह कह कर, कि कुश है । कुश का पुत्र है, ब्रह्मा ने पहले तुमको रचा है, तुम्हारे स्नान करने से वह ही स्नान कर लेगा । जिसके नाम की गांठ इसमें लगाते हैं इस प्रकार मंत्र पढ़ कर नाम से सब गांव वालों के सब लोगों के नाम ले लेकर यथा

विधि चिंतामणि क्षेत्र के श्री गणेशतीर्थ में स्नान किया, तो राजा रुक्मांगद उन दूतों के कहने के अनुसार फौज समेत उस श्रेष्ठ विमान में बैठकर कौंडिन्य नगर में आया, बाजे बजते आ रहे हैं और वेद ध्वनि हो रही है, गंधर्व और अप्सराएँ गा रही हैं, उस विमान से दशों दिशायें गूंज उठीं। राजा रुक्मांगद ने माता पिताओं का कल्याण किया और इस श्री विनायक तीर्थ का स्नान सबसे अधिक कल्याणकारी है। केवल कुशा की पुतली बनाकर स्नान कराने से ही अवश्य कल्याण होता है। श्री विनायकजी की आज्ञा से और भी विमान आगये, सब अलहदा-अलहदा विमानों पर सवार हुए, इस प्रकार रुक्मांगद भीम और रुक्मांगद की मा चारुहासिनी और सब लोग वहाँ पहुँचे, जहाँ श्री गणेशजी थे। इस प्रकार बालक से लगाकर चाण्डाल तक उस नगर के सब श्री गणेश तीर्थ के स्नान से उत्पन्न फल से स्वर्ग को गये, अच्छी गति पाई।

हे मुनि! जो जो तुमने पूछा, वह सब मैंने चिंतामणि क्षेत्र के श्रीगणेश तीर्थ का महात्म्य कहा, जो मनुष्य भक्ति-पूर्वक इस कथा को सुनता है, वह संगति को पाता है ॥ ४७ ॥

---

# छत्तीसवां अध्याय ।

## ॥ गृत्समद का उपाख्यान ॥

व्यासजी ने कहा–हे ब्रह्मा जी! श्री गणेश तीर्थ का महात्म्य सुना। रुक्मांगद का चरित्र और कौंडिन्यपुर वासियों का भी चरित्र सुना, कृपा करके मुकुन्दा का भी चरित्र कहो।

ब्रह्माजी ने कहा–रुक्मांगद के चले जाने पर वह कामाग्नि से जलने लगी, जैसे गरमी के दिनों में दावाग्नि से अनेक वन भूमि जल जाती है, वन में ठण्डी हवा चलती थी तौ भी उस मुकुंदा को आराम नहीं मिला, वहां लताओं में फूल भी खिल रहे थे, चन्द्रमा की किरणें आती थीं, चन्दन के वृक्ष भी थे, हँसना, गाना, नाच या कोई कथा भी उसे कुछ अच्छी नहीं

लगती थी, अन्न जल भी अच्छे नहीं लगते थे, उसका मन तो रुक्मांगद में लगा हुआ था, इससे विकल थी। भूख प्यास से थक जाने के कारण कुछ देर निद्रा आई. इन्द्र को मालूम होगया, कि निर्जन वन में मुकुंदा काम से आतुर रुक्मांगद के विरह में पड़ी है। वह रुक्मांगद का रूप धर कर उसने कामवती का आलिगन किया और उसके साथ भोग किया, तो मुकुंदा भी प्रसन्न होगई, उसने रुक्मांगद समझ कर उसका चुम्बन किया और उसने भी उसके पुष्ट कुचों का खूब जोर से मर्दन किया और नग्न हुई, उसके साथ नग्न होकर उस विगत वस्त्र वाली से और शंका छोड़ कर खूब ही रमण किया, फिर वह शरमा कर अपने घर को लौट गई, इन्द्र जो रुक्मांगद बना था, अन्तर्ध्यान होगया। उसने जाना कि रुक्मांगद ने भोग किया, उसको गर्भ रह गया, ठीक नवें महिने अच्छे मुहूर्त्त में लड़का पैदा होगया, वड़ा सुन्दर रूप में, कामदेव को भी मात करने वाला ज़मीन पर पड़ते ही जो वह रोया तो उसकी आवाज आकाश, पाताल, पृथ्वी और दशों दिशाओं में फैल गई, पत्ती इधर उधर उड़ने लगे, अपने नित्य कर्म को छोड़ कर वाचक्नवि मुनि भी आगये, मुकुन्दा का चरित्र उनको मालूम नहीं पड़ा, वड़े प्रसन्न होकर जात कर्मादि सब संस्कार किये, ब्राह्मणों को जो जिस लायक था, यथा शक्ति दान दिये। दस दिन होने पर मुनि ने नाम करण संस्कार किया, ज्योतिषियों ने गृत्समद नाम निकाला. पांचवे वर्ष व्रत-बंध किया, उस बच्चे को चारों वेद पढ़ाये, वह फौरन पढ़ते ही ब्रह्म तेज प्राप्त करके वेद और शास्त्रों का पूरा ज्ञाता वन गया और अपने कर्मों में भी कुशल होगया, एक दिन अच्छे मुहूर्त्त में उसके पिता वाचक्नवि ने गणानात्वादि ऋग्वेद के वड़े मन्त्र का उसको उपदेश दिया और यह कहा, कि यह वेद का बड़ा मंत्र है और सब सिद्धियों का देने वाला है, जो मन्त्रशास्त्रों में बताए गये हैं, उनमें सबसे श्रेष्ठ है। श्री गणेशजी का ध्यान करके स्थिर चित्त होकर इसको जपना, वड़ी सिद्धि प्राप्त करके दुनिया में नाम पावेगा। फिर गृत्समद ने पिता के मुख से मंत्र लेकर अनुष्ठान करना आरम्भ कर दिया, जप और ध्यान में निमग्न होगया। इस प्रकार बहुत दिन बीत गये, मुनि भी कहीं चले गये, उस मगध देश में जो मगध नामी राजा था, वह वड़ा सुन्दर बड़ा मानी दानवीर शत्रुओं का नाश

करने वाला, अनेक आभूषणों से सुशोभित, बड़े बढ़िया आसन पर बैठा हुआ मानो देवताओं की सभा में आसन पर बैठा हुआ दूसरा इन्द्र ही था, जिसके चतुरंग सेना थी, ज्ञानी और पंडितों का सत्कार करने वाला था। उसके दो मुसाहिब थे, जो गुणों में बृहस्पति को भी मात करते थे, उसके अम्बिका नाम की स्त्री थी, जो बड़ी सुन्दर और बड़ी गुणवती थी, पतिव्रता थी, बड़ी भाग्यवान थी और शाप देने और उसको उठा लेने की शक्ति रखती थी। उस राजा के पिता के श्राद्ध में भोजन के लिये वसिष्ठ अत्रि को आदि लेकर वेद पाठी महर्षि बुलाये गये थे, शुद्ध हृदय तपस्वी गृत्समद भी बुलाये गये थे, वहाँ शास्त्र की बात चीत होते होते गृत्समद ने कुछ जोर की बात कह डाली। इस पर अत्रि ने सब मुनियों के सामने धिक्कार देकर कहा, कि तू अपने को मुनि समझता है, तू मुनि नहीं है। जन्म तेरा राज पुत्र रुक्मांगद से है, इसको विचार हमारे सामने तू पूजा के योग्य नहीं है, इस लिये अपने आश्रम को लौट जा। अत्रि के ऐसे वचन सुनकर क्रोध में जलने लगा। मानो तीनों लोकों को भस्म कर डालेगा, और मुनियों को खा ही जावेगा। दूसरे मुनि तो उसे देखकर भाग छूटे, जैसे सिंह को देखकर हिरण भागते हैं और वशिष्ठादि मुनियों को उस सभा के बीच में बोला कि:-

हे मुनियो! जो मैं रुक्मांगद से पैदा हुआ न साबित होऊंगा; तो शाप से जला कर तुम सबको भस्म कर दूंगा।

ब्रह्माजी ने कहा-इस तरह सब मुनियों से कह कर वह अपनी मा के पास गया और उससे पूछा, कि हे दुष्टा कामिनी! मेरे बाप का नाम सच्चा बता, नहीं तो तुझे भस्म करता हूँ। उसके वचन सुनकर वह बड़ी घबड़ाई और ऐसी कांप उठी जैसे डोडी निकलती हुई केली जोर की हवा से कांप उठती है और हाथ जोड़ कर दीन वचन बोली।

तीनों लोक में सुन्दर रुक्मांगद राजा को मैंने उस दिन देखा था, जब वह शिकार को यहाँ आया था। अपने साथियों से वह बिछुड़ गया था, मेरे प्रियभर्ता वाचक्नवि तो अनुष्ठान में लगे हुए थे, स्त्रियां आज़ाद हैं। यह वेद वाक्य याद करके उस राजा पर मैं आशक्त होगई, वह तेरा पिता है। उसके ऐसे वचन सुनकर वह मुनि लज्जित होकर चुप होगया और नीचा मुंह

कर लिया और मा को शाप दे डाला।

हे दुष्टा मूर्खा ! पाप में तेरा मन आशक्त रहा, इस लिये वन में कांटों का वृक्ष होजा। ... में वहुत से फल आवेंगे, पर तुझे कोई पसन्द नहीं करेगा, इसने गुस्से होकर वेटे को शाप दिया। तूने माता का निरादर करके शाप दिया है। हे पुत्र ! इस लिये मैं भी तुझे शाप देती हूँ, कि तेरे से भी बड़ा डरावना तेरे पुत्र हो और वह दैत्य होकर तीनों लोकों को डरावेगा, वड़ा वली होगा। इस तरह मा वेटे दोनों ने आपस में एक दूसरे को शाप दिया।

ब्रह्माजी ने कहा—वह उसी समय शरीर छोड़कर वन में वेर का वृक्ष होगई। जारज और अण्डज पक्षी भी उस पर नहीं वैठते थे। फिर आकाश-वाणी हुई, कि गृत्समद का जन्म इन्द्र से है, गृत्समद भी अनुष्ठान करने चला गया, जो मनुष्य इस गृत्समद की कथा को सुनेगा वह कभी तकलीफ नहीं पावेगा और सब वांछित फलों को पावेगा।

———

## सैंतीसवां अध्याय

## श्रीगणेशजी नाम वर देने वाला होने की कथा।

ब्रह्माजी ने कहा—घूमते २ गृत्समद मुनि को पुण्यक नाम का वन सामने दिखाई पड़ा, उसमें नाना प्रकार के वृक्ष और लताऐं थीं और उनमें खूब फूलों के झूमके लटक रहे थे, जगह जगह जल के झरने जारी थे और ऐसे मुनि थे जो बुड्ढे नहीं जंचते थे। गृत्समद जी ने उनको नमस्कार किया और उनकी आज्ञा से वहां रहने लग गये। वहां स्नान करके जप करने लगे, पैर के अंगूठे के वल खड़े रहे, मनको स्थिर करके भगवान् श्री विघ्नेश्वर जी का ध्यान किया, नाक की नौक पर अपनी दृष्टि जमाई और दस दिशाओं में देखना वन्द किया, अपनी इन्द्रियों को जीत लिया, श्वास को रोका, अपनी आत्मा को जीत लिया, केवल वायु का ही सेवन किया। एक हजार दिव्य वर्ष तक घोर तपस्या की। जब इस प्रकार अधखुले नेत्रों से गृत्समद मुनि देखते थे, तो उनके नेत्रों से उत्पन्न होने वाली अग्नि ने देवताओं को डरा दिया और उनको शंका हुई, कि न जाने उनमें से किसका स्थान वह छीन लेगा,

फिर एक गला हुआ पत्ता खाकर पचास हज़ार वर्ष तक यत्न पूर्वक बिलकुल ठूँठ की तरह निश्चल होकर मन को रोक कर जो तप किया, तो उसके इस दुर्घट तप को देखकर श्री गणेश जी उस पर कृपा करके एक दम क़ान्तिमान प्रगट हुए, जैसे कोई लवारी गौ बच्चे की आवाज सुनकर जल्दी से दौड़ कर आती है वैसे ही श्री विनायक जी महाराज जल्दी से गृत्समद के पास आये, जिस प्रकार हजारों सूर्यों का प्रकाश होता है। ऐसे तेज से संसार में उजाला करते हुए पधारे। कानों के फटकारे होते आ रहे हैं। बड़े हाथी की सी लीला वाले हैं, बड़ी प्रसन्नता से खेलते हुए आरहे हैं, ललाट में चन्द्रमा शोभायमान है, बड़ी कमलों की माला जो जगत् के कामों की जड़ है, पहिने हैं, सूंड़ में बिना खिले कमल की डांडी लटक रही है और हिलती जाती है, सिंह पर सवार हैं। दस भुजाधारी सर्प का जनेऊ है. जिनके रोली अगर कस्तूरी और चन्दन का लेप हो रहा है, सिद्धि और बुद्धि समेत हैं, लक्ष्मीवान हैं, करोड़ सूर्यों से भी विशेष उनकी द्युति है. जिनके स्वरूप का कोई वर्णन कर ही नहीं सकता। लीला से ही आकर मुनि के सामने खड़े होगये, जिस प्रकार सूर्य के उदय होते ही नक्षत्रों की और चन्द्रमा की ज्योति मलिन हो जाती है उसी तरह उस महात्मा के तेज से मुनि का तेज जाता रहा और बन्द आंखों से ही घबड़ा कर कांप उठा। मंगलीक ध्यान को भूलकर मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा, फिर मनमें रोग रहित श्री गणेशजी का ध्यान करके विघ्न समझ कर घबड़ाया हुआ मुनि मनमें सोचने लगा, यह आफत अचानक कहाँ से आन पड़ी, आज तक जो तपस्या की, वह कैसे वृथा गई। हे स्वामी सर्वात्मा! इस भयानक विघ्न से मुझे बचाओ। आपके सिवाय और किसकी शरण लूं। हे भगवान! हमेशा के लिये यह बड़ा दुःख किस कारण मुझ पर पड़ा। कि ब्राह्मणों की पांति में बिठाकर मेरा सत्कार क्यों नहीं होता, इससे मैं जला जाता हूँ।

उसकी बात सुनकर श्री गणेशजी बोले—तुझ पर प्रसन्न होकर मैं आया हूं, मुझे श्रीगणनायक जान, बड़ी नियमपूर्वक तपस्या करने पर भी सनकादि मुनियों को मेरे दर्शन नहीं होते, डर छोड़ कर तुझे चाहिये सो मांग जो तू अंगूठे के बल बहुत दिन तक खड़ा रहा, उससे मैं बहुत प्रसन्न हुआ हूँ।

ऐसे प्रिय वचन देवों के देव श्री गणेशजी के सुनकर,गृत्समद आनंद में मग्न होकर, साष्टांग दण्डवत् की और बड़ा प्रसन्न होकर वर देने वाले श्रीगणेश जी से अर्ज़ करने लगा, कि आज मेरा जन्म सुफल है, तपस्या और नियम सब सुफल हैं, जो अखंड आनंद रूप, वेद रूप, निराकार आपने आज दर्शन दिये आंखों से प्रेम के आंसू डालता हुआ, आनन्द से नृत्य करने लगा, जो चिदानन्द घन हैं, वेद और शास्त्र, जिनका पार नहीं पासके वे जल्दी ही मुझे साक्षात् होगये, इससे अधिक मैं क्या मांगू तौ भी आपकी आज्ञा से हे गणेश जी महाराज ! एक बात यह मांगता हूं, कि चौरासी लाख योनियों में मनुष्य ऊंचा है, उन में वर्णाश्रम को मानने वाले उन में ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं, और उनमें भी ज्ञानी, फिर उनमें भी अनुष्ठान करने वाले उन में ब्रह्म को जानने वाले, हे जगत् के स्वामी ! ऐसा ब्रह्म ज्ञान मुझको दो और आपमें दृढ भक्ति दो और यह भी दो, कि मैं आपको कभी न भूलूं और आपके भक्तों मैं सब में श्रेष्ठ माना जाऊं। हे कल्याण करने वाले श्री गणेश जी ! एक और वर मांगता हूँ, कि आपकी भक्ति का एक स्थान मेरा हृदय ही हो, तीनों लोकों के आकर्षण करने की शक्ति मुझ में हो जावे, तीनों लोकों, से विख्यात हो जाऊं,देवता और मनुष्य मुझे नमस्कार करैं। हे सब अर्थों के करने वाले विघ्नेश ! यदि आप प्रसन्न हैं, तो ऐसा करें और यह पुष्पक वन मशहूर होजावे, यहां विराजकर, आप भक्तों की कामनाओ कों, सदा पूरी करैं यह पुष्पकपुर चारों दिशाओं में विशेष कर गणेशपुर के नाम से प्रसिद्ध हो। उसके ऐसे वचन सुन कर श्री गणेश जी बोले-हे बली ! बहुत अच्छा, बहुत अच्छा। मेरे प्रसन्न होने पर भक्तों को तीनों लोकों में कुछ भी दुर्लभ नहीं है। हे विप्र! जो कुछ तूने पहिले मांगा, वह सब होगा, प्रसन्न हो कर मैंने तुझको विप्रत्व जो बड़ा दुर्लभ है, दिया। तूने ( गणानांत्वा ) इस मन्त्र का जप किया है, इसलिए तू इसका ऋषि होगा, ब्रह्मादि देवों में और वसिष्ठादि मुनियों में सब जगह तू विख्यात होगा और परमश्रेष्ठ होगा, जो कोई कार्य आरम्भ करनेसे पहले तेरा और मेरा स्मरण करेगा,उसकी सिद्धि होगी, जिन छन्दों में देवता और ऋषि न होंगे, उनका फल कुछ नहीं होगा, तेरे बलवान् पुत्र होगा और सब देवताओं को भय उपजाने वाला होगा,

तीनों लोकों में बड़ा प्रसिद्ध होगा, सिवाय शिवजी के किसी देवता से जीता नहीं जासकेगा, मेरा भक्त होगा तेरे प्राण मुझमें ही रहेंगे, मेरे में निष्ठा होगी और मुझको ही मानैगा, सतयुग में इस पुर का नाम पुष्पक होगा, त्रेता में मणिपुर, द्वापर में भानक और कलियुग में भद्रक नाम होगा, इनही नामों से यह लोकों में विख्यात होगा, यहां स्नान करने और दान देने से मनुष्य सब कामनाओं को पावेगा । उसको ऐसे वर देकर श्री गणेश जी वहां ही, अंतर्ध्यान् होगये, उन के अंतरर्ध्यान होने पर मुनिने वहां श्री गणेश जी की मूर्त्ति स्थापित की और बड़ा सुन्दर मन्दिर, बनाया और उनका नाम वरद रक्खा गया, श्री गणेश जी की कृपा से वह सिद्धि स्थान हुआ, सब लोगों की कामनाएं पूरी करैगा । इस लिये यह पुष्पक क्षेत्र भी कहलावेगा, भक्तिभाव से उस मूर्त्ति की पूजा की । हे मुनीन्द्र ! जो कोई श्री विघ्नराज की इस वर प्रकाश कथा को सुनैगा, वह सब कामनाओं को पावेगा और श्री गणेश जी की दृढ भक्ति पावेगा, जो संसार से जन्म मरण, को छुड़ाने वाली है ॥ ४६ ॥

---

# अड़तीसवां अध्याय ।

## वर देना ।

व्यासजी ने कहा–हे ब्रह्मा जी ! फिर गृत्समद जी की क्या वृत्ति रही, श्री गणेश जी पर श्रद्धा रखने वाले मुझसे यत्न पूर्वक कहो ।

ब्रह्मा जी ने कहा–मुनिवरों में श्रेष्ठ गृत्सामद जी को फिर मुनि लोग सत्कार पूर्वक मानने लगे, नमस्कार करने लगे, श्री गणेश जी के वर देने से उन्हें यज्ञ कार्यों में बुलाने लगे, सब कामों के पहिले श्री गणेश जी के पूजन से पहिले उनको याद करते थे, वह मुनि इस प्रकार विख्यात् होगया, निश्चल मन से वह मन्त्र का जाप करके श्री गणेश जी का परम भक्त बन-गया। हे व्यास ! एक बार उसने अपनी ताकत आज़माई । पृथ्वी, आकाश, दसों दिशाएं और पहाड़ों की गुफ़ाएं गूंज उठीं, सामने क्या देखता है, कि

एक भयंकर बालक बड़ा शब्द करता हुआ केसूला के पुष्प के समान, लाल रंग का तेज का समूह बार बार नेत्रों की ज्योती के मार्ग को रोकता हुआ दिखाई दिया, उसे देखते ही मारे डर के वह कांप उठा और मनमें सोचने लगा, कि क्या विघ्न आया, न जाने श्री गणेशजी ने मुझको अद्भुत पुत्र दिया है, फिर जो देखता है तो वह बालक सुन्दर बदन, सुन्दर नेत्र सोनेके बाजू हाथ में पहिने हुये सुन्दर मुकुट और बड़े प्यारे नूपूर, पैरों में झनक रहे हैं एक बढ़िया कणगती से उसकी कमर शोभायमान है, तो मुनिने उससे पूछा, तुम कौन हो और क्या चाहते हो, हे ओजस्वी बालक ! तुम्हारे, माता पिता कौन हैं, मुझे बतावो। उस के ऐसे वचन सुनकर बालक ने मुनि से कहा ! भूत, भविष्यत, वर्तमान को जानने वाले होकर तुम मुझ से क्या पूछते हो, तौ भी मैं आपकी आज्ञानुसार उत्तर देता हूँ, कि मेरा जन्म तुम्हारी छींक से है,तुमही मेरे माता पिता हो, मेरे ऊपर कृपा करो, कुछ दिन मेरा पालन करो। मैं त्रिलोकी पर आक्रमण कर सकूंगा, इसमें कोई सन्देह नहीं, कि इन्द्र को भी वश कर सकूंगा, मेरा पुरुषार्थ देखना। उस के ऐसे वचन सुनकर गृत्समद कुछ डर कर और कुछ प्रसन्न होकर मीठी वाणी से कहने लगा, कि जो यह पैदा होते ही ऐसा है, कि तीनों लोक को खैंचता है तो मैं इस अपने पुत्रको अपना मंत्र दूं, जिससे जगत् के स्वामी श्री विनायक जी इस पर प्रसन्न होकर जो कुछ यह मांगेगा, वह देंगे और मेरा यश बढैगा। इस तरह मनमें विचार करके उसको अपने मन्त्र का उपदेश दिया और उसको यह कहा, कि ( गणानांत्वा )इस मंत्र का आदर पूर्वक अनुष्ठान करो, श्री गणेश जी में मन लगाकर इस वैदिक मंत्र का जप करो, तब वे प्रसन्न होकर सब कामनाएं देवैंगे। इस प्रकार महा मंत्र पाकर वह तपस्या करने को बन में चला गया, एक अंगूठे के बल निराहार इन्द्रियों को अपने वश करके मन में श्री गणेश जी का ध्यान करता हुआ खड़ा रहा, जब उसको तपस्या करते पन्द्रह हज़ार वर्ष होगये तो उसके मुखसे ज्वाला निकलने से दशों दिशाएं जलने लगीं, देवताओं को और पाताल वासी दैत्यों को इससे भय हुआ, फिर श्री गणेश जी की तपस्या से प्रसन्न होकर दिशाओं को अन्धकार शून्य करते हुए, सूर्य मंडल को ढकते हुए खुशी से सुन्दर दांत वाली

सूँड़ को घुमाते हुये प्रगट हुए, उनकी चीत्कार की आवाज सुनकर वह बालक घबड़ा गया, अपने नेत्रों को खोलकर श्रीगणेशजी को सामने खड़े देखा, चार भुजा, बड़ा शरीर,अनेक आभूषणों से सुशोभित,परशु कमल माला लड्डू हाथों में लिये हैं उनके तेज से घबड़ा गया, परन्तु धीरज धर कर उसने नमस्कार किया और हाथ जोड़कर अर्ज की ।

हे देव ! मुझ अपने भक्त को क्यों डराते हैं,मैं आपकी शरण आया हूँ। आप मेरे ऊपर सौम्य दृष्टि रक्खें, मेरी सब इच्छाओं को पूरी करें । उसकी ऐसी बात सुनकर श्री गणेश जी ने अपने तेज को समेट लिया और बहुत प्रसन्न होकर बोले, कि बच्चे सावधान हो, जिनका तू रात दिन ध्यान करता है, वह मैं आज तुझे वर देने आया हूं, यह मेरा परम रूप है स्वप्रकाशवान है, जगत्मय है, ब्रह्मा, रुद्रादि ही जिसको नहीं जान सकते, मनुष्य तो क्यों कर जान जकते हैं,सब देव मुनि, राजर्षि, राक्षस,सिद्ध,गंधर्व,नाग, दानव कोई नहीं जान पाते वह मैं तुम्हारे तप से बंधा हुआ वर देने को यहां आया हूं, जो जो तू चाहे सो मुझसे मांगले, उस बालक ने कहा, कि मैं आपके दर्शन से कृतार्थ हुआ, मेरा पिता धन्य है, मेरा जन्म और मेरा तप धन्य है । हे महाराज ! मैं बालक हूं, स्तुति करना नहीं जानता, आपतो सब जगत् के कर्त्तापालनकर्त्ता और संहार कर्त्ता हैं, आपके ही प्रकाश से सूर्य, अग्नि और चन्द्रमा प्रकाशमान हैं और प्रकाश करते हैं । हे महामते ! आप अपने महात्म्य से ही चराचर में चेतना पैदा करते हो, आपकी बड़ी महिमा को देवता भी नहीं जानते, अगर आप मुझे वर देते हैं तो यह दीजिये, कि तीनों लोकों के आकर्षण करने की विशिष्ठ शक्ति मुझको प्राप्त होवे, देवता राक्षस, गंधर्व, मनुष्य और सर्पादि,मुनि,किन्नर और चरण सदा मेरे वश रहैं, जो जो मैं मनमें विचारूं, वह सदा सिद्ध हो, इन्द्रादि, लोकपाल सदा मेरी सेवा करें, इस जन्म में सब भोग भोगकर अन्त में मैं मुक्ति पाऊं । आपकी आज्ञा से एक वर आपसे और मांगता हूँ, जहां मैंने तपस्या की है, वह पुर प्रसिद्ध हो, सब लोक में यह नगर गणेशपुर के नाम से विख्यात हो ।

श्रीगणेश जी बोले- कि तू तीनों लोकों का आक्रमण करेगा, तुझे किसी से भय नहीं है, सदा सब तेरे वशीभूत होंगे, १ लोहे का, १ सोने का और

१ चांदी का, यह तीन नगर मैं तुझे देता हूं, शिवजी के सिवाय कोई देवता इनको नहीं तोड़ सकेगा। दुनिया में तू त्रिपुर कहलावेगा, जब एक ही बाण से शिवजी तेरे पुर को तोड़ें तब ही तेरी मुक्ति हो जावेगी, इसमें विचार करने की जरूरत नहीं और जो कुछ तू चाहेगा, वह सब मेरी कृपा से होगा। इस प्रकार उसको वर देकर श्री गणेशजी अंतर्ध्यान होगये। उनके वियोग से त्रिपुरासुर को दुःख हुआ और यथेप्सित वर पाकर वड़ा प्रसन्न हुआ, फिर अपने वल से तीनों लोकों को जीतने के लिये रवाना हुआ ॥ ४६ ॥

---

# ❀ उनतालीसवाँ अध्याय ❀

## इन्द्र का पराजय।

व्यासजी ने पूछा–कि हे ब्रह्माजी! मुझे यह जानने की इच्छा है, कि वर पाकर अभिमान करके त्रिपुरासुर ने क्या किया, आप यह सारा कौतुक मुझे कहें तो ब्रह्माजी ने कहा, कि काश्मीर के पाषाण की श्री गणेश जी की मूर्ति बनवाकर मंत्र शास्त्रियों से विधि पूर्वक प्रतिष्ठा कराई और बड़े बड़े सुवर्ण रत्नादि से विभूषित करके गणेशपुर में बड़ा सुन्दर मन्दिर बनवाया, षोडशोपचार से श्रीगणेशजी का पूजन करके असंख्यात नमस्कार और स्तुति, प्रार्थना करके श्रीगणेश जी से क्षमा मांगकर उनकी आज्ञा लेकर बाहर निकला, यथा योग्य ब्राह्मणों को अनेक दान दिये। उस समय त्रिपुरासुर का स्थान बंगाल में था, वहीं सब को सब सिद्धि देने वाला गणेशपुर है, उसके बाद श्री गणेशजी के दिये हुए वर से उद्धत होकर प्रजा का पालन करता था और देवताओं पर आक्रमण करना उसने आरम्भ किया। उसकी बड़ी बलवान फौज रिसाले, हाथी, रथ, पैदल उसकी सेवा के लिये दशों दिशाओं से गये थे वह जब राजा की तरफ से लड़ते थे तो कई राजा लोग उसके अनुकूल होकर सेवक होगये और जो उसके प्रतिकूल होकर युद्ध करते थे, वे मारे गये इस प्रकार पृथ्वी का आक्रमण करके जब वह अमरावती पर चढ़ कर गया तो इन्द्र अनेक युद्ध करने वाले देवताओं को लेकर ऐरावत

हाथी पर चढ़कर युद्ध करने को निकला, तब त्रिपुरासुर ने अपनी चतुरंगिनी सेना के तीन हिस्से किये थे, बड़ा दैत्य भीमकाय जो वज्र के समान कठोर डाढ़ वाला था, धनुर्विद्या जानता था, गदायुद्ध और शास्त्र युद्ध में निपुण था और अस्त्रयुद्ध और मल्लयुद्ध में चतुर था, उसको मनुष्य लोक का मालिक बनाया, दूसरे भाग पर वज्रदंष्ट कालकूट को अफसर करके बोला, कि तुम इस सवारियों के हिस्से पर रह कर पाताल को जावो खास खास नागों को मेरे हुक्म से बश करो मैं तीसरा हिस्सा लेकर सब देवताओं पर आक्रमण करता हूँ, जब बमूजिब हुक्म भीमकाय और वज्रदंष्ट रवाना होगये तो स्वयं चतुरङ्ग फौज लेकर नंदन बन पर आया वहां के दिव्य वृक्ष उखाड़े और वहां जो फौज थी उसको मार भगाई, वहां ठहर कर इन्द्र के पास दूत भेजे और हुक्म दिया, कि फौरन इन्द्र को यहां लाकर हाजिर करो, वरन। यह कहदो, कि तुम मृत्युलोक को चलो, हम तुम्हारा पालन करेंगे और राजी से हमको अमरावती दे दो और तुम्हारी लड़ने की इच्छा है तो फौरन यहां चले आओ, उन लोगों ने जाकर त्रिपुरासुर का हुकम इन्द्र को सुनाया तो वह ऐसा होगया जैसे पर्वत पर वज्र गिर गया हो जैसे हवा के झोके से दरख्त हिल जांय, चिंता से व्याकुल होकर सोचनेलगा, कि यह क्या आफत आई, क्रोधाग्नि से जलकर सारे नेत्र लाल हो आये, मानों लोकों को भस्म ही कर डालेगा, समुद्रों को सुखा डालेगा और अपने दूतों को हुक्म सुनाया, कि फौरन लड़ने चलो, मैं भी ऐरावत पर सवार होकर आता हूँ और अब जो आकर गर्जना की तो तीनों लोक कांप उठे, उसके वाक्य सुनकर दूत जैसे आये थे वैसे ही चले गये, देवता भी तैयार हो होकर नाना शस्त्र तलवारें ले लेकर कइयों ने भिंडपाल लिये, कइयों ने शक्ति, लकड़ी, मुग्दर, असि, धनुषबाण, गदा, खेट, डंडे लिए, इस तरह देवताओं की फौज लेकर इन्द्र जी अब बाहर निकले, ब्राह्मण स्वस्त्ययन पाठ करते जाते थे और बाजे बजते जाते थे, जब त्रिपुरासुर को मालूम हुआ, कि इन्द्र लड़ने को आ रहा है तो उसने अपनी उत्साहयुक्त सेना को तैयार की, अनगिनत आदमी साथ लेकर, आप घोड़े पर सवार होकर सामने आया. दोनों वीर सेना मुक़ाबले पर खड़ी हुईं, उनके हाथी घोड़ों की चीख चिल्लाब से बड़ा

शोर हुआ, रथों की दौड़ और वाजों से हल्ला हुआ, तव त्रिपुरासुर ने वीरों को ललकारा और उसके वीरों और देवताओं में ऐसा घमासान युद्ध हुआ, कि अपने और पराये का ज्ञान नहीं रहा और इस युद्ध में दानव वहुत से मारे गये और दैत्यों के शस्त्रों के मारे हुए देवता भी गिर गये, कटे हुये सिपाही वहाँ ऐसे शोभायमान होते थे जैसे फले हुए के सूले के फूल वहुत से बिना सेज के ही जा सोये, वहुतों के पैर कट गये (क्रमेल) ऊंट और हाथियों के सवार, रथ, घोड़े के सवार और पैदल भाग छूटे, दैत्य चारों दिशा में गये जैसे सिंह को देखकर हिरण जान लेकर भागते हैं, फिर फौज को चीरता हुआ देव शत्रु स्वयं क्रुद्ध होकर मेघ की सी गर्जना करता हुआ इन्द्र के पास पहुंचा, मानों पृथ्वी आकाश को ही खा जावेगा और एक हाथ जोर से तलवार का इन्द्र पर मारा तो इन्द्र के हाथ से वज्र गिर पड़ा। फिर एक प्रहार ऐरावत पर किया, कि वह भाग छूटा, इन्द्र ने उसके मुक्के मारे, वह क्षण भर के लिये गिर पड़ा, फिर जल्दी से उठ कर इन्द्र के मुक्के मारे और उसे ज़मीन पर गिरा दिया, फिर उठकर इन्द्र ने गुस्से में आकर कहा, कि हे राक्षसेश्वर,मल्लयुद्ध के लिये तैयार हो जाओ तो उसने ताज्जुब में आकर उस घमण्डी से कहा, कि हे इन्द्र ! तू अपने प्राणों पर क्यों नहीं दया करता, कीड़े पतंगादि को भी प्राण प्यारे लगते हैं, तुम पृथ्वी पर जावो, मैं तुमको वहां जगह बतलाता हूँ।

उसके ऐसे वचन सुनकर इन्द्र ने कहा, कि जो मैं तुझे न मार डालूंगा, तो पृथ्वी पर जाऊंगा और तेरे हुक्म की तामील करूंगा, तू आज शिर कटवाकर जमीन पर जावेगा, जव इन्द्र ऐसा कह रहा था तो राक्षसों के स्वामी ने उसकी छाती में एक मुक्का मारा और उनमें ऐसा युद्ध छिड़ गया जैसा चाणूर और कृष्ण में छिड़ा था, एक दूसरे पर विजय प्राप्त करना चाहता था, छाती से छाती, हाथ से हाथ, पैरों से पैर, उर से उर, माथे से माथा, कलाई से कलाई, कूर्पर से कूर्पर, पीठ से पीठ, जाँघ से जांघ लड़ रहे थे, यकायक पैर पकड़ जो इन्द्र को राक्षस ने घुमाया, तो वह ऐसा दूर जाकर पड़ा कि न जाने कहां गया, फौरन उसके चार दांत वाले हाथी पर सवार होगया, फिर तो सारे देवता हिमालय की गुफाओं में दैत्य के डर के मारे

इन्द्र को ढूँढ़ते फिरे, इन्द्र कहां जाकर पड़ा, अब उसे कहाँ देखें, ऐसा सोचते सोचते ढूँढ़ते ढूँढ़ते देखते हैं, कि नीचा शिर किये इन्द्र आरहा है, देवताओं ने उसे नमस्कार किया और कइयों ने आलिङ्गन किया, बहुतसों ने पूजा की, कुछ दवा करने लगे, बहुत से भक्ति दिखाने को पैर दाबने लगे, सब देवता छिपकर वहां ही रहने लगे, दैत्य ऐरावत पर सवार होकर अमरावती में गया, देवताओं के ओहदे राक्षसों को दिये और इन्द्रासन पर जाकर बैठा देवताओं के काम राक्षसों को बांट दिये, दिव्य बाजे बजने लगे और गंधर्वों का गाना सुनने लगा, किन्नर सेवा में रहने लगे और अप्सराओं के साथ रमण करने लगा।

---

## चालीसवां अध्याय

### ॥ स्तोत्र बताया जाना ॥

देवताओं के स्थानों को दबाने के बाद दैत्य ब्रह्माजी के स्थान को गया और देवताओं से दैत्य के पराक्रम का हाल ब्रह्माजी ने सुना तो नाभि कमल में चले गये और विष्णु क्षीर सागर में चले गये, दैत्य ने अपने दोनों लड़के चंड और प्रचंड में से प्रचंड को तो ब्रह्मलोक का चंड को, बैकुण्ठ का अफसर बनाया और आप कैलाश पहुँचा, उसको पकड़ कर भुजाओं से हिला दिया, पार्वती जी डर कर शिवजी के लिपट गईं, फिर आप लड़ने के इरादे से कैलाश गया, उसका पुरुषार्थ देखकर अपने भक्तों को सुख देने वाले शिवजी प्रसन्न होकर झट बाहर निकल के वर देने को तैयार होगये, त्रिपुरासुर से कहा, कि वर मांग उसने वर मांगा, कि यदि आप प्रसन्न हैं, तो मुझे कैलाश दे दो। मंदराचल के शिखर पर चले जाओ, थोड़ी देर के लिए शिवजी ने भी उसे दे डाला और आप अपने गणों को लेकर मंदराचल चले गये, कैलाश के शिखिर पर जाकर त्रिपुरासुर बड़ा राजी हुआ। इस प्रकार देवों को वश करके फिर पाताल को गया, उधर पृथ्वी मण्डल पर बलवान भीम काय ने जबरदस्ती से राजाओं को वश करके सब ऋषियों को बांध लिया, सब अग्नि कुण्ड जिनसे देवता तृप्त होते हैं, उनको आश्रमों

को और तीर्थों को खास कर जल्दी जल्दी तोड़े, तपस्वियों को जेल में बन्द कर करके दुःख दिये, स्वाहा स्वधा वषट्कार की आवाज़ें बन्द होगईं, लोगों ने वेद का पढ़ना छोड़ दिया, दैत्य गर्व करके सब सदाचारियों को सताने लगे, उधर वज्रदंष्ट्र ने सातों पातालों को वश कर लिया, शेष वासुकि, तक्षक और सर्पों के विष निकाल लिये और जहरीले विना जहरीले सब को अपने वश कर लिया, वज्रदंष्ट्र ने सब रत्नों को भोगे और नागांगनाओं से विहार किया। इस तरह भोग भोगता रहा और नाना प्रकार के रत्न ला लाकर त्रिपुरासुर को देता रहा, पाताल को वश कर लिया है, ऐसा कहने पर पहिले से भी ज्यादा मान हुआ, बढ़िया बढ़िया कपड़े और बहुत से गांव अपने नौकरों को बांटे इस तरह तीनों लोकों को वश करके दैत्य बड़ा प्रसन्न हुआ, उधर सब देवता गुफाओं में पड़े सोचने लगे, कि इसका वध कब होगा, और कैसे होगा, न जाने इसने किससे वर पाया है, इस तरह जब सब देवता व्याकुल होगये,तो वहां तीनों लोकों में भ्रमण करने वाले अपनी इच्छा से नारद जी आ निकले, देवताओं को दुखी देखकर आकाश मार्ग से उतरे, सब नारदजी को देखते ही उनका आदर करने को उठ खड़े हुए, उनको नमस्कार किया और उनसे मिले और एक एक करके उनकी पूजा करने लगे, जब उन्होंने विश्राम कर लिया, तो उनसे त्रिपुरासुर के वर पाने आदि की बात पूछी। देवताओं ने पूछा, कि सचराचर तीनों लोकों को त्रिपुरासुर ने जीत लिया है, हमारे ओहदे छीन लिये और हमको निकाल दिये, अब हम किसकी शरण लें और यह कैसे मारा जावे, आप हमको यह बतलाइये, कि किसने उसको वर दिया है।

नारदजीने कहा, कि मैं तुमको संक्षेपपूर्वक दैत्य की सारी कार्रवाई बतलाता हूँ, उसने एक हज़ार दिव्य वर्ष तक तप किया है,उसने देवोंके स्वामी भगवान् श्री विनायक जी को प्रसन्न किया है, उन्होंने उसे सब को भय उपजाने वाले वर दिये हैं, वह देव ऋषि पितृश्वर भूत, यक्ष, रक्ष, पिशाच, नाग सब से अभय रहेगा, केवल शिवजी से डरेगा। देवों के स्वामी श्री गणेशजी को आदर से प्रसन्न करना चाहिये, सर्व सिद्धि के देने वाले श्री गणेशजी की आराधना करो। देवताओं ने फिर पूछा, कि देवों के देव बुद्धिमान श्री गणेशजी को कैसे मनावें, कृपा करके हे श्रेष्ठ मुनि! आप बताइये।

नारदजी ने कहा, कि मैं आप सब को एकाक्षर मंत्र देता हूँ, आप सब स्थिर मन करके उसका अनुष्ठान करो, जब तक देव गणनायक आप को प्रत्यक्ष न हो जावें, वे ही आप सबको उसके मारने का उपाय बतावेंगे, मुझे और कोई उपाय नहीं दीखता, मेरा कहना मानो ।

ब्रह्माजी ने कहा, कि सबको यह कह करके और उस मन्त्र का उपदेश करके बीणा बजाते, गाते नारद जी चले गये और सब देवता श्री गणेश जी के ध्यान में लगे, कई एक पांव से खड़े रहे, कई पद्मासन बैठे, कई बीरा-सन बैठे, कई आंख मींच कर ही बैठ गये, निराहार स्वास रोककर मुनि के बतलाये हुये मंत्र का जाप करने लगे, बहुत काल व्यतीत होजाने पर करुणा सागर श्री गणेश जी उन देवताओं के बहुत दिनों के अनुष्ठान को देखकर उनके सामने वर देने को प्रगट होगये, स्वर्ण मुकुट चमक रहा है और सुहा-वने कुंडल शोभा दे रहे हैं, दांत के ऊपर सूँड़ शोभा दे रही है, करोड़ों सूर्य की सी कांति है इस प्रकार रोग रहित श्री गणेश जी को देखकर उनके तेज से डर गये और झटपट नमस्कार की । हर्ष से गद्गद् होकर उनका पूजन करने लगे, अपने संकट के नाश कराने को प्रसन्नता से सुन्दर है, मुख ज़िन का संकटों के हरने वाले सर्व व्यापक श्री गणेश जी की स्तुती करने लगे ।

नमो नमस्ते परमार्थरूप नमो नमस्ते खिल कारणाय ॥
नमो नमस्ते खिलकारकाय सर्वेंद्रियाणामधि वासिनेपि ॥ १ ॥
नमो नमो भूतमयाय तेस्क्त नमो नमो भूतकृते सुरेश ॥
नमो नमः सर्वधियां प्रबोध नमो नमो विश्वलयोद्भवाय ॥ २ ॥
नमो गमो विश्वभृते खिलेश नमोनमः कारण कारणाय ॥
नमो नमो वेद विदा मदृश्य नमो नमः सर्व वरप्रदाय ॥ ३ ॥
नमो नमो वागिविचारभूत नमो नमो विघ्न निवारणाय ॥
नमो नमोऽभक्त मनोरथघ्ने नमो नमो भक्त मनोरथज्ञ ॥ ४ ॥
नमो नमो भक्तमनोरथेश नमो नमो विश्व विधान दक्ष ॥
नमो नमो दैत्य विनाश हेतो नमो नमः संकट नाशनाय ॥ ५ ॥
नमो नमः कारुणि कोत्तमाय नमो नमो ज्ञानमयाय तेश्क्त ॥
नमो नमो ज्ञान विनाशनाय नमो नमो भक्तविभूतिदाय ॥ ६ ॥

नमो नमोऽभक्त विभूति हंत्रे नमो नमो भक्त विमोचनाय ॥
नमो नमो भक्त विबंधनाय नमो नमस्ते प्रविभक्त मूर्त्ते ॥ ७ ॥
नमो नमस्तत्व विबोधकाय नमो नमस्तत्वविदुत्तमाय ॥
नमो नमस्ते खिलकर्म साक्षिणे नमो नमस्ते गुण नायकाय ॥ ८ ॥

अर्थात्-हे परम अर्थरूप! सबके कारक सब इन्द्रियों में बसने वाले भूत-मय प्राणियों के कारण देवताओं के स्वामी सब बुद्धियों के ज्ञान, संसार के नाश और उत्पत्ति के करने वाले, संसार के पालन करने वाले, सब के स्वामी कारणों के कारण वेद जानने वालों को भी निगाह में नहीं आने वाले, सब वर देने वाले, वाणी के विचार में नहीं आने वाले, विघ्नों के हटाने वाले, भक्ति नहीं रखने वालों के मनोरथों को नष्ट करने वाले, भक्तों के मनोरथों को जानने वाले, उनके स्वामी संसार के बनाने में चतुर, दैत्यों के नाश के कारण संकटों के नाश करने वाले, उत्तम करुणा करने वाले, ज्ञानमय और अज्ञान के नाश करने वाले, भक्तों को विभूती देने वाले, अभक्तों के वैभव को नष्ट करने वाले, भक्तों को छुड़ाने वाले, अभक्तों को बन्धन में डालने वाले, पृथक् पृथक् मूर्तिरूप तत्व बताने वाले, तत्व जानने वालों में श्रेष्ठ सब कामों के साक्षी और गुणों के स्वामी आपको नमस्कार है ॥ ८ ॥ ४९ ॥

ब्रह्माजी ने कहा–कि जब इस प्रकार सर्व शक्तिमान श्री गणेश जी की देवताओं ने स्तुति की तो परम प्रसन्न होकर सब देवताओं को प्रसन्न करते हुए श्री गणेशजी बोले, कि हे देवताओ! मैं तुम्हारी स्तुति से और तपस्या से प्रसन्न हुआ, मैं तुम्हारी सब अभिलाषाएं पूरी करूंगा, तुम वर मांगो।

देवताओं ने कहा–कि हे देवों के स्वामी, यदि आप प्रसन्न हैं तो त्रिपुरासुर को मारैं, जिसने हमारे सब के अधिकार छीन लिये हैं, सब देवताओं से आपने ही इसको अभयदान दिया है, इससे हम संकट में पड़े हुए हैं, हमको संकट से छुड़ाओ, हम आपकी शरण में आये हैं, यह ही हमारा वर है।

श्री गणेश जी ने कहा–कि अत्यन्त क्रूर इससे मैं आप लोगों को बचाऊंगा, आपका बनाया हुआ यह स्तोत्र मुझे बड़ा प्यारा लगा, यह स्तोत्र संकष्ट नाशन कहलावेगा, पढ़ने वालों और सुनने वालों की सब कामनाओं को देने वाला होगा, जो कोई इसे तीनों संध्या के समय पढ़ैगा, तो वह कभी संकट में नहीं पड़ेगा।

ब्रह्माजी बोले-कि जगदीश्वर श्री गणेशजी इस प्रकार देवताओं को वर देकर मुनियों और देवताओं के देखते २ अन्तर्ध्यान होगये ॥५०॥

---

# ❀ इकतालीसवाँ अध्याय ❀

## नारदजी का पधारना।

व्यासजी ने पूछा-कि हे ब्रह्माजी! सबको करने वाले स्वामी, वर के देने वाले श्री गणेशजी ने फिर क्या किया, सो कहिये। ब्रह्माजी ने उत्तर दिया, कि फिर श्री गणेशजी ब्राह्मण का रूप धारण करके त्रिपुरासुर के पास पहुँचे तो इसको बड़े बढ़िया आसन पर बैठे देखा, इसने उठ कर नमस्कार किया और अपने आसन पर इनको बिठलाया, इनकी पूजा करके पूछा, कि कहिये महाराज कहां से आये, आपका नाम क्या है, आपकी विद्या क्या है, आने का क्या प्रयोजन है, हमसे बन पड़े तो करें। ब्राह्मण ने कहा, कि हे दैत्य! हम सांयकाल में कहीं भी ठहर जाते हैं, सर्वज्ञ हैं, सब जानने वाले हैं। लोक में अपनी इच्छा से विहार करते हैं, मनुष्यों के हित के लिये घूमते रहते हैं। कलाधर नाम है, हम तुम्हारा वैभव देखने तुम्हारे घर आये हैं, तुम्हारी सारी संपदा देखकर हम बड़े प्रसन्न हुए, ऐसी संपदा न कैलाश में है, न वैकुण्ठ में न ब्रह्मलोक में, न इन्द्र के है, जैसी तेरे यहां दिखाई पड़ती है।

दैत्य ने कहा, कि हे ब्राह्मण! तू तो नाम मात्र से कलाधार है, तू कैलाश वैकुण्ठादि की संपदा को क्या जानता है, जिनके मुकाबले में इसे सराहता है और जो जानता है तो उनमें से सबसे उत्कट याने बढ़िया जो हो, उसे मुझे बतला, जो तू दिखा देगा तो जो कुछ तू चाहेगा वह ही मैं तुझे दूंगा। प्यारे प्राणों को भी दे दूंगा। हे मुनि! मैं हंसी मजाक में भी झूंठ नहीं बोलता हूं।

कलाधर ने कहा-कि दूसरों की संपदा देखकर तुमको क्या मिल जावेगा मैं तुम्हारे विनय से प्रसन्न हुआ, अपनी कला ही से तुमको सुवर्ण का, चांदी का और लोहे का, तीन नगर देता हूं, जो बाणों पर टिके हुए हैं, बहुत दिनों तक उनमें सुख से रह। देव, गंधर्व, मनुष्य और नाग उनको कोई भी नहीं तोड़

सकेंगे, जो कुछ तू विचारेगा सो उनमें तुझे मिलेगा, जी चाहे जहां जा और जी चाहे सो ले, परन्तु कभी काल के आने पर एक ही बाण से शिवजी इनको तोड़ डालें तो तेरा नाश हो जावेगा।

ब्रह्माजी ने कहा–कि ऐसा कह कर धनुष लेकर जो प्रत्यंचा चढ़ाई तो तीन लोकों के समान तीन नगर बन गये, उनमें नाना प्रकार के रमणीक महल, बाग बावड़ी थी, नाना प्रकार के पक्षी इनमें बोल रहे थे, सब कामनाओं के देने वाले भी पक्षी थे, इसकी इस माया से मोहित होकर दैत्य बड़ा खुश हुआ और ऐसे ज़ोर से गरजा, कि तीनों लोक कांप उठे, वह इस ही घमण्ड में भरा हुआ था, कि मुझसे बढ़कर कोई है ही नहीं, तीनों लोकों को क्षुब्ध करता हुआ, मानो इस ब्राह्मण से बोला, कि जो कोई चीज़ दुर्लभ हो, वह मांग मैं वही तुझे दूंगा। उसके ऐसा कहने पर निस्पृह भी उस ब्राह्मण ने कहा, कि मैं एक बार कैलाश को गया था, वहां मैंने एक उत्तम श्रीगणेश जी की मूर्ति देखी. वह मूर्ति चिंतित कामों की देने वाली है और शिवजी ने इसकी पूजा की है, जो तेरी ताकत है तो वह लाकर दे। मैं तीनों लोकों में विचरता हूं, मैंने ऐसी मूर्ति नहीं देखी, इस लिये मेरा मन इस पर आशक्त होगया है इसको पाकर मैं कृत-कृत्य हो जाऊंगा और तीनों लोकों में तेरी कीर्ति फैलाऊंगा, कि कोई त्रिपुरासुर के बराबर दानी नहीं है जो मुंह मांगी चीज़ देता है।

दैत्य ने कहा–कि शिवजी को तो मैं नौकर समझता हूँ और देवताओं को कुछ गिनता ही नहीं। हे ब्राह्मण! वह मूर्ति मैं तुझे लाकर दे दूंगा, इस प्रकार कह कर आदर पूर्वक इसने कलाधर की पूजा की और इसको दस गांव, गौ, वस्त्र और आभूषण दिये, बहुत से बढ़िया २ मोती व और भी अमूल्य चीजें दीं, बहुत से रत्न मूंगे, मृगछाला के बिछौने, सैकड़ों नौकर चाकर, आभूषणों समेत इसे दिये। अच्छे अच्छे घोड़े सजे हुए हाथी, सुनहरी काम के चांदी के रथ इत्यादि जब दी हुई चीजों को लेकर ब्राह्मण देवता चल दिये और अपने आश्रम में जाकर अपनी स्त्री और आश्रम के लोगों को प्रसन्न किया। यह सारा हाल नारदजी ने देवताओं से कहा, वे भी समय का इन्तज़ार करने लगे और दिन बिताने लगे॥ २६॥

# ब्यालीसवां अध्याय ।

## युद्ध का वर्णन ।

कलाधर के चले जाने पर उस दैत्य ने क्या किया, श्री चिन्तामणि की शुभ मूर्त्ति कैसे उसे लाकर दी । हे ब्रह्माजी ! यह सब विस्तार पूर्वक मुझसे कहिये, मैं श्री गजानन जी की लीलाऐं संक्षेप से सुनकर तृप्त नहीं होता । व्यासजी के इस प्रकार पूछने पर ब्रह्माजी कहते हैं, कि उसके चले जाने के बाद उस दैत्य ने जो जो किया, वह सब मैं तुमको कहता हूँ, ध्यान देकर सुनो, शिवजी मन्दराचल पर्वत पर विराजमान थे, उनके पास उसने दूत भेजे और उनको जाते समय यह कहा, कि तुम आदर पूर्वक मेरी तरफ से शिवजी से यह कहना, कि आपके यहां सब कामनाओं को देने वाली शुभ मूर्त्ति श्री चिन्तामणि जी की है। हे गिरिजापति ! आप राजी राजी उसे दैत्य राजा को देदो । पाताल, स्वर्ग अथवा मृत्युलोक में जो कुछ अद्भुत वस्तु है, वह सब दैत्यराज अपने बल से अपने घर में लालाकर रख रहा है । हे महाराज ! जल्दी दीजिये, हमको उस बली दैत्य के पास जाना है, जो आप राजी से नहीं देवेंगे तो वह पराक्रमी दैत्य आपके पास से जबरदस्ती छीन ले जावेगा । फिर आपको दुःख होगा । दैत्य के ऐसे वचन सुनकर वे दोनों शिवजी के पास गये और जैसा उसने सिखाया था, वैसा जाकर कहा । दूतों की बात सुनते ही शिवजी क्रोध के मारे मूर्छित होगये और उन दूतों से कहा, कि तुमतो भाई दूत हो, ज्यादा मत कहो, दूत होने से तुमको तो माफ करता हूं, नहीं तो तुमको अभी कामदेव की तरह भस्म कर दूं । इसमें कोई सन्देह नहीं और उस तिनके के समान दैत्य की क्या बात है । वह आना चाहे तो मेरे पास मरने को आजावे, वह सौ जन्म में भी मुझसे मूर्ति नहीं ले सकता, क्या प्रलयाग्नि पतंग से शांति पा सकता है, क्या चूहा मेरु पर्वत को अपने बल से मिटा सकता है. असंख्य जल निकलने लग जावे तो भी क्या समुद्र सूख जावे । शिवजी की बातें सुनकर वे दैत्य जैसे आये वैसे ही चले गये, उन दैत्यों ने अपने स्वामी से जो कुछ शिवजी ने कहा, वह सब जा कहा । यह सुनकर वाक्यों के अर्थ को जानने वाला दैत्य बड़ा क्रोध हुआ, मानों तीनों

लोकों को अभी जलाए डालता है और अपनी चतुरंगिणी सेना को युद्ध के लिये तैयार होने का हुक्म दिया। फौज निकल कर मंदराचल के सामने जाकर खड़ी हुई, पृथ्वी को ऐसा छा लिया जैसे समुद्र ने मर्यादा को तोड़कर पृथ्वी को ढक दिया हो, म्यान से निकले हुए शस्त्र जो चमकते थे, तो जान पड़ता था कि अनेक सूर्य निकल आये हैं। मृत्यु के मन को भी कंपा देने वाली मेघ की तरह गर्जना करती हुई मानो वेग के समान और विमान के सदृश बड़े भारी त्रिपुर में बैठ कर त्रिपुरासुर उनके पीछे पीछे शिवजी को मारने चला, रत्न जड़ित कवच कुण्डल और बाजूबन्द पहिने था, मोतियों की माला, अंगूठियां और सोने की कणगती अमूल्य और चमकते हुए जड़ाऊ मुकुट को धारण करता हुआ वह जाकर जो चीखा तो शिवजी का मन कांप उठा, दैत्य ने धनुष बाण, ढाल, तलवार, शक्ति, सब ले रक्खी थीं। गन्धर्व और अप्सरा नांचते, गाते जा रहे थे, वन्दीजन और चारण जिसके आगे आगे खुशी से बोलते चालते थे, शिवजी को जब दूतों के कहने पर दैत्य के आने के समाचार मिले और यह भी ज्ञात हुआ, कि काल के सताये असंख्य फौज सिपाही लड़ने को आये हैं, तो शूलपाणी ने भी श्रीद्विरदानन की पूजा की और परिक्रमा करके अपनी फौज को आगे लेकर क्रोध से जिनके नेत्र लाल हो रहे हैं, अपने स्थान से रण-भूमि में आगये, वे वीर जयध्वनि से आकाश को गुञ्जार रहे थे, प्रहार करने के लिये एक दूसरे को मारने के इरादे से आगे बढ़े जा रहे थे, जिस समय दोनों फौजें भिड़ी हैं, तो धूल उड़ कर अंधेरा होगया, अपने पराये का ज्ञान जाता रहा, बड़े ज़ोर का युद्ध हुआ, किसी को किसी की खबर नहीं, हाथी, घोड़े, रथ, वीर जो मारे गये, उनके लोहू से धूल दबी, वीर वीरों से अलग अलग लड़ रहे थे, कोई प्रासों से, कोई तलवारों से, कोई बाणों से और कोई पथ्थर की शिलाओं से ही लड़ते थे, कोई धक्का मुक्की कर रहे थे, कोई परशे और तोमर से लड़ते थे, वीर और हाथी, घोड़े जो जो मारे गये थे, उन उनके लोहू की नदी वह चली, बाल सिवाल की तरह वह रहे थे, खेट ( ढालें ) तो उसमें कछुए हैं, तलवारें मछलियां, शिर जो हैं कमल की तरह शोभित होते हैं, छत्र हैं सो मानो भंवर पड़ते जा रहे हैं, कवन्ध जो हैं सो वृक्ष हैं, जिन्हें नदी उखाड़े लिये

जा रही है, वीरों को इससे संतोष होता है, गीध और गोमायु उसे देख खुश-होते हैं इस नदी को देखकर शिवजी दैत्य के पास पहुँचे दैत्य भी त्रिपुरपर सवार हो उनके आगे आगे पहुँचा, दोनों सेनापतियों को आपस में द्वंदयुद्ध करते देखकर राक्षस और शिवजी के गणोंने भी जी तोड़कर युद्ध किया, दिव्य शस्त्र, अस्त्र और वृक्षों से तरह तरह के प्रहार किये, उनके युद्ध और नाम संक्षेपसे फिर कहूंगा ॥ ३५ ॥

# तेतालीसवां अध्याय ।

श्री शिवजी और राक्षसों के स्वामी ने द्वन्द्वयुद्ध किया स्वामकार्त्तिक जी से प्रचंडनें, नंदी से चंडनें, पराक्रमी पुष्पदंत से, भीमकायनें विष के समान प्राणहारी, कालकूटनें भृशुंडी से, वज्रदंष्ट्र से वीरभद्र नें, दैत्यों के अमात्य के साथ, इन्द्रनें दैत्य के पुत्रके साथ,जयंतने शुक्र के साथ,अस्त्रविद्या में निपुण सुराचार्य वृहस्पति ने इस प्रकार देवता और दैत्यों में तरह तरह का द्वन्द्व-युद्ध हुआ, जिसका वर्णन मैं सेंकड़ों वर्षों से भी नहीं कर सकता, रथी रथि-यों के साथ, हाथी सवार हाथी सवारों से लड़े, घोड़े सवार घोड़े सवारों से और पैदल पैदलों से लड़े, नाना प्रकार के बाजे बजते जा रहेथे और घोर संग्राम हुआ, घोड़ों के हींसने की आवाजें मारकट, चीख, चिल्लाव, चक्रकी आवाज़ और हाहा कार सुनाई पड़ते थे, वहुत से नाना प्रकार के मल्लयुद्ध कररहे थे, शस्त्र छोड़कर अंगों से अंगों को लड़ाते थे, शिला के समान कठोर नौ बांण कानतक प्रत्यंचा खैंचकर प्रचंड ने स्वामिकार्त्तिक पर चलाए, स्वामि कार्तिक ने खैंच कर ऐसे बाण चलाये कि जिनसे वह कटगये मानों चलाएही नहीं गये थे और पांच बाण ऐसे मारे जिनसे प्रचंड घबराकर ज़मीन पर पड़ गया, पांच तीखे बाण मारकर नंदी ने भी चंड को गिरा लिया, ज़मीन पर पड़ते ही मूर्छित होगया, भीमकाय ने पुष्पदन्त को दश बाणों से छेद डाला, उसने भी अपने तीखे बाणों से उनको काटडाल, और फिर तीन बाण ऐसे चलाए जिनसे उसे ज़मीन पर गिरा लिया, ।कालकूट को भृशुंडी ने पांच बाणों से गिरा लिया, गुस्से में होकर वीरभद्रने चार बाण वज्र दंष्ट्रके मारे,

जिनको हटाकर उसने उस पर तीन बाण फैंके, उनके पड़ते ही फौरन वीरभद्र ने तीन बाण ऐसे चलाये, जिनसे उसे गिरा लिया। इन्द्र ने भी वज्र को देकर दैत्यों के मुसाहिब को गिरा लिया, तीक्ष्ण तलवार निकाल कर दैत्य पुत्र आगया। बहुत से वीर तो पड़ ही चुके थे, उसके मन में थी, कि जयन्त को मार लूं, उसको इस तरह आता देखकर जयन्त ने बाण से तलवार के टुकड़े कर डाले और दैत्य पुत्र के तीन बाण ऐसे मारे, कि उसे लोहू की कै होने लगी और वह मूर्छित होगया, जब जगह जगह सेना कटगई और देवताओं के मारे हुए दैत्य भागने लगे और पीछे देवता जो जीते हुए थे दैत्यों का पीछा कर रहे थे, उनको देखकर और देवताओं को जय-युक्त और अपनी फौज को भागती देखकर खुद शिवजी के पास त्रिपुरासुर आया और पहले शस्त्र युद्ध करने लगा और फिर दोनों अस्त्र चलाने लगे, दैत्य ने वारुणास्त्र चलाया, जिससे घोर वृष्टि हुई, बड़ा कुहरा छागया, कुछ नहीं दिखाई देता था; कभी कभी बिजली की चमक से अपने पराये का ज्ञान होता था, बड़ा घोर संग्राम हुआ, जो नहीं देखा जासका, जब शिवजी ने यह देखा, कि सारी फौज अपनी वर्षा और हवा से दुःखी है और ओले जो पड़ रहे हैं, उनसे दशों दिशाओं में भागी जा रही है, तो उन्होंने तुरन्त वायव्य अस्त्र छोड़ा, उसने महावात से मेघों को आकाश में ही तोड़ दिया, हवा से तंग की हुई दैत्यों की सेना इधर उधर भगने लगी और वीरों की पगड़ियां सब तरफ हवा के फटकारों से पक्षियों की पूछों में लिपट गई थीं, कई घोड़े, हाथी और पैदल रथ गिर-गिर कर टूट गये थे, उखाड़े हुए वृक्ष और बेलों ने सिपाहियों को ढक लिया था, दैत्य ने पन्नगास्त्र चलाकर उस हवा को रोका, भाथे से बाण निकाल कर धनुष को कान तक खैंचकर, मन्त्र पढ़कर जो अग्नि बाण मारा तो वह शिवजी की फौज में आकर पड़ा, उससे अंगारे वर्षने लगे, जिससे सब लोग जलने लगे, ज्वालाओं से दुःख पाकर सब ने समझा, कि प्रलय आगई, जब ज्वालाएं खूब प्रज्वलित हो रही थीं, तो उनमें से एक बड़ा डरावना पुरुष दिखाई दिया, उसका शरीर बड़ा था, आकाश तक शिर जा रहा था, बड़ी बड़ी डाढे जिनसे चेहरा डरावना मालूम होता था, बड़ा शोर करता हुआ और खाऊं खाऊं करता जाता है, सौ योजन

लम्बी जीभ को घुमा रहा है । दोनों नाकों से श्वास निकलता है, उससे रण के हाथी घबड़ा रहे थे, जिस तरह गरुड़ सांपों को खाता है, वह सेना को खाने लगा, उस पुरुष से दुःखी हो शिवजी की सेना भाग छूटी । शिवजी के पीछे जाकर कहा, बचावो,बचावो । शिवजी ने उनसे कहा, कि डरो मती । उनको अभयदान देकर जो उन्होंने पर्जन्यास्त्र से आग्नेयास्त्र को तो हटा दिया और उसी समय शिवजी ने एक बाण चलाया, जिससे वह घोर पुरुष गिर पड़ा फिर वह उठकर शिवजी की सेना को खाने लगा, प्रथम वगैरहा शिवजी के गण डर कर भागने लगे, गिरते, पड़ते, हांपते, कांपते जा रहे थे, शिवजी भी सहायहीन होकर गुफा में जा छिपे, षडानन आदि वीर भी उनके पीछे पीछे चल दिये, पार्वतीजी को पर्वत पर अकेली देखकर रणभूमि छोड़कर पकड़ने की इच्छा से कैलास में चला गया, दूर से उसे आता देखकर पार्वती जी काँपने लगीं, वहाँ जाकर अपने पिता हिमालय से बोली, कि यह दैत्य मुझे कहीं ले न जावे, यह सुनकर हिमालय ने उन्हें बड़ी दुर्ग गुफा में जहाँ अपना पराया कोई न जान सके, लेजाकर रखदी । यहाँ किसी का भय नहीं था, वह दैत्य जो हिमालय पर पार्वतीजी को पकड़ ने की इच्छा से आया था,पार्वतीजी तो मिली नहीं । घूमते घूमते श्री चिंतामणि की शुभमूर्ति उसे दिखाई दी, हज़ार सूर्य के समान अनेक आभूषणों से सुशोभित त्रिलोकी में एक ही सुन्दर थी, फ़ौरन उसे लेकर वह अपने घर को लौटा । तरह २ के बाजे बज रहे हैं और बन्दीजन स्तोत्र पढ़ रहे हैं, फिर सब जगह जीतकर जब वह बली पाताल जा रहा था, तो उसके जाते जाते के हाथ से वह श्री चिंतामणि विनायक जी की मूर्ति अन्तर्ध्यान होगई, इसको अशकुन समझ कर फिर वह अपने ही घर लौट आया और बड़ी फिकर में पड़ा ॥ ४७ ॥

---

# चवांलीसवां अध्याय ।

## तपस्या का वर्णन ।

फिर त्रिपुरासुर से हारकर शिवजी ने क्या किया । उस जयशाली त्रिपुरासुर को कैसे जीता, इस प्रकार व्यास जी के पूछने पर ब्रह्माजी ने कहा, कि फिर

शिवजी को मन में बड़ी चिंता हुई, कि स्वाहा स्वधा-विहीन पृथ्वी होगई, कब देवताओं का दुःख दूर होगा और वे अपने अपने स्थान पर आकर वास करेंगे इस दुर्जय की हार कैसे होगी, जब शिवजी ऐसी चिंता में निमग्न थे, तो नारदजी शिवजी से और देवताओं से मिलने चले आये, उनको देखकर शिवजी बड़े प्रसन्न हुए, जैसे मनुष्य अमृत मिल जाने पर प्रसन्न होता है, उनकी पूजा की और आसन पर बिठाया, उनका आलिंगन करके चिंता से व्याकुल देवताओं का भला चाहते हुए उस दैत्य के बध को चाहते हुये शिवजी ने कहा, कि दैत्य ने अपने पराक्रम से देवताओं का नाश कर डाला, उसके साथ संग्राम करके अपने अपने संकल्प छोडकर सारे देवता भाग गये, हे ब्रह्माजी ! दशों दिशाओं में भाग गये, मुझे नहीं मालूम कौन कहां है, मेरे भी अनेक अस्त्र उसने अपने अस्त्रों से काट डाले।

ब्रह्माजी ने कहा, कि शिवजी के ऐसे वचन सुनकर नारदजी त्रिलोकी के स्वामी शिवजी की हार सुनकर बड़ा आश्चर्य करने लगे और कहा, कि हे महाराज ! आप सर्वज्ञ हैं, सब विद्याओं के ईश हैं, सब के स्वामी हैं, सब कुछ करने वाले हैं, सब की रक्षा करने वाले हैं, सब के नाश करने में समर्थ हैं, सब के नियन्ता हैं, सब कुछ करने की, नहीं करने की, उलटे करने की आप में शक्ति है, आप अणिमा आदि गुणों से युक्त हैं, छःऐश्वर्य आप में विलास करते हैं, आप सब से बढ़कर बोलने वाले भी हैं, मैं आपके सामने क्या कहूँ, गाने में लगा हुआ और रात दिन त्रिलोकी में घूमता हूं, मुनि मैं क्या कहूं, आपके फरमाने से मैं विचार कर कहूँगा, यह कहकर थोड़ी देर ध्यान करके शिवजी से नारदजी ने कहा, कि जब आप युद्ध में जा रहे थे, तो आपने श्री गणेशजी का पूजन नहीं किया। हे वह्निनेत्र ! पिनाक को धारण करने वाले, शिवजी इस लिए आप हार गये, अब विघ्नों के स्वामी विघ्नों के हटाने वाले श्री गणेशजी का पूजन करो, उनको प्रसन्न करके उनसे वर लेकर ठाठ से लड़ने को जावो, तो उस दैत्य को हरा दोगे, इसमें क्या विचारना है।

ब्रह्माजी ने कहा, कि उस दैत्य ने पहले बड़ी तपस्या करके श्रीगणेशजी को मना लिया था, इस लिये जो सारे विघ्नों के हरने वाले श्री गणेशजी हैं, उन्होंने उसे वर दिया था, कि शिवजी के बिना तेरी मृत्यु किसी से न होगी।

इस लिये हे शिवजी ! इन तीनों पुरों के समूह को जो इच्छा से बन गया है, एक ही बाण से जलाओ, यह ही जय का उपाय मैं बतलाता हूं । नारदजी से अपनी जय का उपाय सुनकर शिवजी बड़े प्रसन्न हुए और इससे पहले जो श्री गणेशजी ने कहा था, उसको भी याद करके मुनि से कहने लगे, कि हे ब्रह्मन् ! तुमने सच कहा, तुम्हारे कहने से मुझे याद आगया, उन्होंने पहले ही षडक्षर और एकाक्षर मन्त्र जो संकट के नाश करने वाले हैं, मुझे उनका उन्होंने पहिले ही उपदेश दिया था, मेरा चित्त युद्ध में लग रहा था, न तो मैंने उनका जप किया न उनको याद किया और न सब विघ्नों के हरने वाले श्री गणेशजी को याद किया । जो ( श्री विनायकजी )सब कारणों के कर्त्ता हैं, रक्षा करने वाले और संहार करने वाले हैं ।

मुनि ने कहा,कि हे श्री महादेवजी ! आप उन ही अपने पुत्र श्रीगणेशजी को प्रसन्न करो ।

ब्रह्माजी बोले–कि नारदजी को विदा करके शिवजी दंडक वन में तपस्या करने गये, पद्मासन बैठकर जप किया, इन्द्रियों को रोककर ध्यान में लगे, सौ वर्ष तक शिवजी ने घोर तप किया, तो उनके मुख से एक श्रेष्ठ पुरुष निकला, जिसके पांच मुख हैं, दश हाथ हैं, ललाट में चन्द्रमा चमक रहा है, मुंडों की माला पहिने है, सर्पों के गहने हैं, मुकुट और बाजूबन्द हैं, अग्नि, सूर्य, चन्द्रमा को अपनी आभा से परास्त करता है, दश हथियार हाथों में हैं, उसकी कान्ति से शिवजी डर गये और अपने सामने उनको देखा । वह श्री पंचमुख विनायक जी थे, मानों दूसरे पंचमुखी शिवजी हों, उनको देखकर शिवजी विचारने लगे, क्या मैं ही दो रूप होगया अथवा कहीं त्रिपुरासुर ही मेरा रूप धरकर तो नहीं आगया, तेतीस करोड देवताओं में ऐसा पांच मुख वाला और कौन है, अथवा मैंने यह कोई बड़ा स्वप्न देखा है, अथवा मुझे वर देने को सब विघ्नों के नाश करने वाले जिनका मैं दिन रात ध्यान करता हूं, वह ( श्री गणेशजी ) श्री गजानन ही तो यह न आगये हैं ।

ब्रह्माजी ने कहा–कि उनके ऐसे वाक्य सुनकर श्रीगणेशजी बोले, कि जिनका आप मनमें विचार करते हैं, वह ही मैं विघ्नों के नाश करने वाला ।

हूं । देवता, ऋषि और ब्रह्माजी मेरा रूप नहीं जानते वेद उपनिषद् भी नहीं पहचान सकते, तो छः शास्त्रों को जानने वाले तो कैसे जान सकते हैं, मैं अनेक लोकों का करने वाला, रक्षा करने वाला और नाश करने वाला हूँ । ब्रह्मा को आदि लेकर स्थावर और चरों का और तीनों गुणों का मैं स्वामी हूं, इस तपस्या से मैं प्रसन्न हुआ और वर देने को यहाँ आया हूं । हे महादेवजी ! जितने चाहो मुझसे वर मांगो ॥ ३५ ॥

---

# पैंतालीसवां अध्याय ।

## शिवजी को वरदान ।

मुनि बोले—कि देवता और विघ्नों के स्वामी तथा विघ्नों को हरने वाले श्रीगणेशजी केप्रसन्न होने पर और शिवजी को वर देने की इच्छा प्रगट करने पर सदा शिवने क्या क्या वर मांगे ।

ब्रह्माने कहा—कि श्री गणेशजी के वाक्य सुनकर शिवजी नें अपना स्वरूप भूल वर देने वाले श्री गणेशजी का स्मरण करके कहा ।

दशापि नेत्राणि ममाद्यधन्यान्यथो भुजाः पूजनतः स्तवाद्य ।
तवानतेः पंचशिरांसि धन्यान्यथस्तुतेः पंचमुखानि देव ॥ १ ॥
पृथ्वी जलं वायुरथोदिशश्च तेजश्च कालः कलनात्मकोपि ।
नभो रसोरूप मथापि गंधः स्पर्शश्च शब्दो मम इन्द्रियाणि ॥ २ ॥
गंधर्व यक्षाः पितरो मनुष्या देवर्षयो देवगणाश्च सर्वे ।
ब्रह्मेंद्ररुद्रा वसवोथ साध्या स्त्वत्तः प्रसूताः सचराचरश्च ॥ ३ ॥
सृजस्यदो विश्व मनन्यबुद्धे रजोगुणा त्पासि समस्त मेतत् ।
तमोगुणा त्संहरसे गुणेश नित्यो निरीहा खिलकर्मसाक्षी ॥ ४ ॥

हे देव ! आज आपके पूजन करने से मेरे दशों नेत्र और दशों भुजायें धन्य हैं, आपको नमस्कार करने से मेरे पांच सिर और आपकी स्तुति करने से मेरे पाँच मुख भी धन्य हैं, पृथ्वी, जल, वायु, दिशायें, तेज कलनात्मक काल आकाश, रसरूप, गंध, स्पर्श, शब्द, मन, इन्द्रियें, गंधर्व, यक्ष, पितृश्वर,

मनुष्य, देवर्षि और सब देवगण, ब्रह्मा, रुद्र, इंद्र, वसु और साध्य सचराचर जो आपसे पैदा हुए हैं वे सब धन्य हैं। आप अनन्यबुद्धि होकर रजोगुण से इस संसार को पैदा करते हैं और इस सब की रक्षा करते हैं, हे गुणों के स्वामी! तमोगुण द्वारा उनका संहार करते हैं, आप नित्य हैं, निरीह हैं और सब कर्मों के देखने वाले हैं।

ब्रह्माजी ने कहा कि फिर मैंने शिवजी के कहने से श्री गणेशजी से जो कहा और जो उनका नाम रक्खा। हे महामति! उसे सुनो। वेदों का मूल भूत ॐकार रूप आपका नाम मातृकाओं में पहला बीज है और आप गणों के स्वामी हो, इसलिये आपका नाम गणेश होगा। श्री गणनायकजी ने ॐ कहा ( ठीक है, ऐसा कहा तो ) शिवजी प्रसन्न हुए और उन्होंने वर दिये, जो कोई सब कामों के आदि में आपको याद करै, विनाविघ्न वह उन कामों को पूरा करता है। कृमि और कीट कभी बिना आपको याद किये काम करैं तो उनको वांछित सिद्धि नहीं हो सकती चाहें कोई सैव हो, गाणेश हो, वैष्णव हो, शक्ति हो अथवा सौर हो ( सूर्य का उपासक हो ) सब कामों में चाहें वे शुभ हों या अशुभ हों, वैदिक हों वा लौकिक हों पहले आपका पूजन यत्न पूर्वक करना चाहिये जो मङ्गल सब जनों में है वह ही यक्ष विद्याधर और मर्पों में भी हैं, आप उनके स्वामी हैं इसलिये आप मङ्गलमूर्ति होगये, क्यों कि अपने भक्तों के आप मङ्गल करने वाले हैं। हे स्वामी! पहले मैंने आपकी पूजा नहीं की और आपको याद किये बिना ही दैत्य के युद्ध में लग गया। आपका पूजन नहीं करने से मेरी हार हुई। इसलिये अब आपके चरणों में गिरता हूँ, हे सर्वशक्तिमान्! मेरे अपराधों को क्षमा करो अब सब युद्ध समय में मेरी जय करो। हे देव! जो सब तरह आप को नहीं भजते वे लोग मूर्ख और दरिद्री होंगे और जो मनुष्य भक्तिपूर्वक आपका भजन करैंगे वे कामों के देने वाली सिद्धि को प्राप्त होवेंगे। इस प्रकार सब बचनों के सार के जानने वाले श्रीगणेशजी ने सब कुछ सुनकर शिवजी से कहा, कि जब २ मेरा स्मरण किया जावेगा तो काम सम्पूर्ण होगा और मैं उसही समय आपके पास आऊंगा, मेरे नाम के बीजमंत्र का उच्चारण करके पुर त्रयपर एकबाण चलावो तो वह दैत्य जल जावेगा फिर अपना सहस्रनाम श्रीगणेशजी ने भक्ति

से प्रसन्न होकर जो जय का देने वाला और काम करने वाला है, नमस्कार करते हुए शिवजी को सुनाया और उनको यह कहा, कि यह युद्ध का समय है, इसका पाठ करो, दैत्यों का जल्दी नाश होगा । तीनों संध्याओं के समय इसके पाठ करने से मनुष्यों की सारी इच्छाऐं पूरी होती हैं और सारी कामनायें सिद्ध होती हैं । श्रीगणेशजी के वाक्य सुनकर उनकी पूजा करके शिवजी बड़े प्रसन्न हुये, बड़ा ऊंचा दृढ मंदिर बनाकर वहां उन्हें स्थापित किया । देवता, मुनि सिद्ध को तृप्त करके ब्राह्मणों को दान देकर फिर वरद श्रीगणेशजी को पूजकर नमस्कार करके सबसे कहा, कि यह श्रीगणेशजी मणिपुर कहलावेंगे, जब इस प्रकार सब देवादि स्तुति कर रहे थे, तब श्री गणेशजी आदि अंतर्ध्यान होगये । जब श्री गणेशजी, मुनि और देवता चले गये तो शिवजी भी अपने गणों को लेकर अपने घर गये। गंधर्व, यक्ष. अमरांगनाऐं यह सब चारों ओर जिनके बैठे थे, उन श्रीपार्वतीजी को जाकर अपना वृतान्त शिवजी ने सुनाया, ऐसी अमृत वाणी सुनकर सब देवी देवता समेत प्रसन्न हुये, योगी भी शिवजी की कृपा से त्रिपुरासुर का नाश कराके अपने २ घरों को प्रसन्न होते हुये गये ॥ २३ ॥

---

# छयालीसवाँ अध्याय ।

## शिवजी और गणेशजी का संवाद ।

### ॥ श्रीगणेश सहस्रनाम ॥

व्यासजी ने पूछा–कि ब्रह्माजी आप संसार पर कृपा किया करते हो, शिवजी को कैसे श्रीगणेशजी ने अपने सहस्रनाम का उपदेश किया, कृपा करके मुझे कहो तो ।

ब्रह्माजी ने कहा–कि पहिले त्रिपुरासुर को जीतने के उद्यम में श्रीगणेश जी की पूजा नहीं करने से बड़ विघ्न हुए, फिर मनमें उन विघ्नों का कारण विचार कर श्री महागणपति की विधि पूर्वक पूजा करके विघ्नों की शान्ति का उपाय पूछा, तो शिवजी की पूजा से श्रीगणेशजी प्रसन्न हुए और फिर

नहीं हारे । श्रीगणेशजी सब विघ्नों के एक मात्र हरने वाले हैं, सब कामों के फल के देने वाले हैं उन्होंने अपने सहस्रनाम इस प्रकार बतलाये हैं ।

अस्य श्री महागणपति सहस्रनाम स्तोत्र माला मंत्रस्य गणेश ऋषिः महागणपतिर्देवता ॥ नानाविधानि च्छंदांसि ॥ गमिति बीजम् ॥ तुंडमिति शक्तिः ॥ स्वाहा कीलकम् ॥ सकल विघ्न नाशनद्वारा ॥ महागणपति प्रीत्यर्थं जपे विनियोगः ॥ महागणपति रुवाच॥ॐगणेश्वरो गणक्रीडो गणनाथो गणाधिपः एकदंष्ट्रो वक्रतुंडो गजवक्रो महोदरः १

लंबोदरो धूम्रवर्णो विकटो विघ्ननायकः
सुमुखो दुर्मुखो बुद्धो विघ्नराजो घनाशनः ॥ २ ॥
भीमः प्रमोद आमोदः सुरानंदो महोत्कटः ॥
हेरंबः शंकरः शंभु लंबकर्णो महाबलः ॥ ३ ॥
नंदनो लंपटो भीरु मेघनादो गणंजयः ॥
( नंदनः श्रीप्रदो भीमो मेघनादो गणंजयः ) पाठांतर
विनायको विरूपाक्षो धीरः शूरोः वरप्रदः ॥ ४ ॥
महागणपति र्बुद्धिप्रियः क्षिप्रप्रसादनः ॥
रुद्रप्रियो गणाध्यक्ष उमापुत्रो घनाशनः ॥ ५ ॥
कुमारगुरु रीशान पुत्रो मूषक वाहनः ॥
सिद्धिप्रियः सिद्धिपतिः सिद्धः सिद्धिविनायकः ॥ ६ ॥
अविघ्न स्तुंबरुः सिंहवाहनो मोहिनीप्रियः ॥
कटंकटो राजपुत्रः शालकः संमितो मितः ॥ ७ ॥
कूष्मांडसामसंभूति दुर्जयो धूर्जयो जयः॥

६५ ६६ ६७ ६८
भूपति र्भुवनपति र्भूतानांपति रव्ययः ॥ ८ ॥
६९ ७० ७१ ७२
विश्वकर्त्ता विश्वमुखो विश्वरूपो निधिर्घृणिः ।
७३ ७४ ७५ ७६
कविः कवीनामृषभो ब्रह्मण्यो ब्रह्मणस्पतिः ॥ ९ ॥
७७ ७८ ७९
ज्येष्ठराजो निधिपति र्निधिप्रियपतिप्रियः ।
८० ८१
हिरण्मयपुरांतस्थ सूर्यमंडलमध्यगः ॥१०॥
८२ ८३
कराहतिध्वस्तसिंध सलिलः पूषदंतभित् ।
८४ ८५ ८६
उमांककेलिकुतुकी मुक्तिदः कुलपालतः ॥११॥
८७ ८८ ८९ ९० ९१
किरीटी कुंडली हारी वनमाली मनोमयः ।
९२ ९३
वैमुख्यहतदैत्यश्रीः पादाहतिजितक्षितिः ॥१२॥
९४ ९५ ९६
सद्योजातः स्वर्णमुंजमेखली दुर्निमित्तहृत् ।
९७ ९८ ९९
दुःस्वप्नहृत् प्रसहनो गुणीनादप्रतिष्ठितः ॥१३॥
१०० १०१ १०२
सुरूपः सर्वनेत्राधिवासो वीरासनाश्रयः ।
१०३ १०४ १०५
(विभ्राजनूपुरः) पीताम्बरः खंडरदः खंडेन्दुकृतशेखरः ॥१४॥
१०६ १०७ १०८
चित्रांकः श्यामदशनो भालचंद्र श्चतुर्भुजः ।
१०९ ११० १११ ११२
योगाधिप स्तारकस्थः पुरुषो गजकर्णकः ॥१५॥
११३ ११४ ११५ ११६
गणाधिराजो विजयस्थिरो गजपति र्ध्वजी ।
११७ ११८ ११९ १२०
देवदेवस्मरो प्राणो दीपको वायुकीलकः ॥१६॥
१२१ १२२ १२३ १२४
विपश्चिद्वरदो नादो स्नादभिन्नो बलाहकः॥ ( नादभिन्नो महांबरः )

१२५ १२६ १२७
वराहरदनो मृत्युंजयो व्याघ्राजिनाम्बरः ॥१७॥
१२८ १२९ १३०
इच्छाशक्तिधरो देवत्राता दैत्यविमर्दनः ।
१३१ १३२ १३३
शंभुवक्त्रोद्भवः शंभुकोपहा शंभुहास्यभूः ॥१८॥
१३४ १३५ १३६
शंभुतेजाः शिवाशोकहारी गौरीसुखावहः ।
१३७ १३८ १३९
उमांगमलजो गौरीतेजोभूः स्वधुर्निभवः ॥१९॥
१४० १४१ १४२ १४३
यज्ञकायो महानादो गिरिवर्ष्मा शुभाननः ।
१४४ १४५ १४६ १४७
सर्वात्मा सर्वदेवात्मा ब्रह्ममूर्द्धा ककुप्श्रुतिः ॥२०॥
१४८ १४९ १५०
ब्रह्मांडकुंभश्चि द्व्योमभालः सत्यशिरोरुहः ।
१५१ १५२
जगज्जन्मलयोन्मेषः निमेषोग्न्यर्कसोमदृक् ॥२१॥
१५३ १५४ १५५ १५६
गिरींद्रैकरदो धर्मो धर्मिष्ठः सामबृंहितः ।
१५७ १५८ १५९
ग्रहर्क्ष दशनो वाणी जिह्वो वासवनासिकः ॥२२॥
१६० १६१
भ्रूमध्यसंस्थितकरो ब्रह्मविद्यामदोत्कटः ।
१६२ १६३ १६४
कुलाचलांसः सोमार्कः घंटो रुद्रशिरोधरः ॥२३॥
१६५ १६६ १६७
नदीनंदभुजः सर्पांगुलीक स्तारकानखः ।
१६८ १६९ १७० १७१
व्योमनाभिः श्रीहृदयो मेरुपृष्ठोर्णवोदरः ॥२४॥
१७२
कुक्षिस्थयक्ष गंधर्व रक्षः किन्नर मानुषः ।
१७३ १७४ १७५
पृथ्वीकटिः सृष्टिलिंगः शैलोरुर्दस्र जानुकः ॥२५॥
१७६ १७७ १७८ १७९
पाताल जंघोमुनिपात् कालांगुष्ठ स्त्रयीतनुः ।
१८० १८१
ज्योतिर्मंडल लांगूलो हृदयालाननिश्चलः ॥२६॥
१८२ १८३
हृत्पद्म कर्णिका शालि वियत्केलिसरोवरः ।

१८४ १८५
सद्भक्तध्यान निगडः पूजावारि निवारितः ॥२७॥
१८६ १८७ १८८ १८९ १९०
प्रतापी कश्यपसुतो गणपो विटपी वली।
१९१ १९२ १९३ १९४ १९५
यशस्वी धार्मिक खोजाः प्रथमः प्रथमेश्वरः॥ २८ ॥
१९६ १९७
चिंतामणिद्वीपपतिः कल्पद्रुमवनालयः।
१९८ १९९
रत्नमंडपमध्यस्थो रत्नसिंहासनोश्रय ॥ २९ ॥
२०० २०१
तीव्राशिरोधृतपदो ज्वालिनीमौलिलालितः।
२०२
नंदानंदितपीठश्री र्भोगदाभूपितासन ॥३०॥
२०३ २०४
सकामदायिनीः पीठः स्फुरदुग्रासनाश्रयः।
२०५ २०६
तेजोवतीशिरोरत्नं सत्यानित्यावतंसितः ॥३१॥
२०७ २०८
सविघ्ननाशिनीपीठः सर्वशक्त्यंबुजाश्रयः।
२०९ २१०
लिपिपद्मासनाधारो वह्निधामत्रयाश्रयः ॥३२॥
२११ २१२ २१३
उन्नतप्रपदो गूढगुल्फः संवृत पार्ष्णिकः।
२१४ २१५ २१६ २१७
पीनजंघ श्लिष्टजानुः स्थूलोरुः प्रोन्नमत्कटिः ॥३३॥
२१८ २१९ २२० २२१
निम्ननाभिः स्थूलकुक्षिः पीनवक्षा बृहद्भुजः।
२२२ २२३ २२४ २२५
पीनस्कंधः कंबुकंठो लंबोष्टो लंबनासिकः ॥३४॥
२२६ २२७ २२८
भग्नवामरदस्तुंग मदनदंतो महाहनुः।
२२९ २३० २३१
ह्रस्वनेत्रत्रयः शूर्पकर्णो निविडमस्तकः ॥३५॥
२३२ २३३ २३४
स्तवकाकारकुंभाग्रो रत्नमौलि निरंकुशः।
२३५ २३६
सर्पहारकटीसूत्रः सर्पयज्ञोपवीतवान् ३६॥
२३७ २३८
सप्तकोटीरकटकः सर्पग्रैवेयकांगदः।

सर्पकक्षो दंशावंधः[239] सर्पराजोत्तरीयकः[240] ॥ ३७ ॥

रक्तो[241] रक्तांवरधरो[242] रक्तमाल्यविभूषणः[243] ।

रक्तेक्षणो[244] रक्तकरो[245] रक्तताल्वोष्ठपल्लवः[246] ॥ ३८ ॥

श्वेतः[247] श्वेतांवरधरः[248] श्वेतमाल्य विभूषणः[249] ।

श्वेतातपत्ररुचिरः[250] श्वेतचामरवीजित·[251] ॥ ३९ ॥

सर्वावयवसम्पूर्णः[252] सर्वलक्षणलक्षितः[253] ।

सर्वाभरणशोभाढ्यः[254] सर्वशोभासमन्वित[255] ॥ ४० ॥

सर्वमङ्गलमाङ्गल्यः[256] सर्वकारणकारणम्[257] ।

सर्वदैककरः[258] शार्ङ्गी[259] बीजपूरी[260] गदाधरः[261] ॥ ४१ ॥

शुक्लांगो[262] लोकसुखदः[263] सुतन्तु[264] स्तंतुवर्द्धनः[265] ।

किरीटी[266] कुंडली[267] हारी[268] वनमाली[269]शुभांगदः[270] ॥ ४२ ।

इक्षुचापधरः[271] शूली[272] चक्रपाणिः[273] सरोजभृत्[274] ।

पाशी[275] धृतोत्पलः[276] शाली[277] मञ्जरीभृ[278] त्स्वदन्तभृत्[279] ॥ ४३ ॥

कल्पवल्लीधरो[280] विश्वाभयदै[281] ककरो[282] वशी[283] ।

अक्षमालाधरो[284] ज्ञानमुद्रावान्[285] मुद्गरायुधः[286] ॥ ४४ ।

पूर्णपात्री[287] कंबुधरो[288] विधृतालिसमूहकः[289] ।

मातुलिंगधर[290] श्चूतकलिलाभृत्[291] कुठारवान्[292] । ४५ ॥

पुष्करस्थ[293] स्वर्णघटी[294] पूर्णरत्नाभिवर्षकः[295] ।

भारतीसुन्दरीनाथो[296] विनायकरतिप्रियः[297] ॥ ४६ ॥

महालक्ष्मीप्रियतमः[298] सिद्धलक्ष्मीमनोरमः[299] ।

३०० ३०१
रमा रमेश पूर्वांगो दक्षिणोमामहेश्वरः ॥ ४७ ॥
३०२ ३०३
महीवराहवामांगो रतिकंदर्प पश्चिमः ॥
३०४ ३०५
आमोदमोद जननः सप्रमोद प्रमोदनः ॥ ४८ ॥
३०६ ३०७
समेधितसमृद्धिश्री ऋद्धिसिद्ध प्रवर्त्तकः ॥
३०८ ३०९
दत्तसौमुख्य सुमुखः कान्तिकंदलिताश्रयः ॥ ४६ ॥
३१० ३११
मदनावत्याश्रितांघ्रिः कृतदौर्मुख्य दुर्मुखः ॥
३१२ ३१३
विघ्नसंपल्लवोपघ्नः सेवोन्निद्र महद्रवः ॥ ५० ॥
३१४ ३१५
विघ्नकृन्निघ्नचरणो द्राविणी शक्ति सत्कृतः ॥
३१६
तीव्रा प्रसन्ननयनो ज्वालिनीपालितैकदृक् ॥ ५१ ॥
३१९
मोहिनीमोहनो भोगदायिनी कान्तिमंडितः ॥
३२० ३२१
कामिनीकांतवक्रश्री रधिष्ठित वसुंधरः ॥ ५२ ॥
३२२ ३२३
वसुंधरामदोन्नद्धः महाशंख निधि प्रभुः ॥
३२४ ३२५
नम द्वसुमतीमौली महापद्मनिधिप्रभुः ॥ ५३ ॥
३२६ ३२७
सर्वसद्गुरुसंसेव्यः शोचिष्केशहृदाश्रयः ॥
३२८ ३२९ ३३०
ईशानमूर्धा देवेन्द्रः शिखःपवननंदनः ॥ ५४ ॥
३३१
अग्रप्रत्यग्रनयनो दिव्यास्त्राणांप्रयोगवित् ॥
३३३
ऐरावतादिसर्वाशा वारणा वारणप्रियः ॥ ५५ ॥
३३४ ३३५
वज्राद्यस्त्रपरीवारो गणचंडसमाश्रयः ॥

३३६ ३३७

जयाजयपरीवारो विजयाविजयोवहः ॥ ५६ ॥

३३८ ३३९

अजिताजितपादाब्जो नित्यानित्यावतंसितः ॥

३४० ३४१ ३४२

विलासिनीकृतोल्लासःशौंडी सौन्दर्य मंडितः ॥ ५७ ॥

३४३ ३४४

अनंतानंतसुखदः सुमंगल सुमंगलः ॥

३४५

इच्छाशक्तिज्ञानशक्ति क्रियाशक्ति निषेवितः ॥ ५८ ॥

३४६ ३४७

सुभगासंश्रितपदो ललिता ललिताश्रयः ॥

३४८ ३४९

कामिनीकामनः काममालिनी केलिलालितः ॥ ५९ ॥

३५० ३५१ ३५२

सरस्वत्याश्रयो गौरीनंदनः श्रीनिकेतनः ॥

३५३ ३५४ ३५५

गुरुगुप्तपदो वाचासिद्धो वागीश्वरीपतिः ॥ ६० ॥

३५६ ३५७ ३५८

नलिनीकामुको वामारामो ज्येष्ठामनोरमः ॥

३५९ ३६०

रौद्रीमुद्रितपादाब्जो हुंबीज स्तुंगशक्तिकः ॥ ६१ ॥

३६१ ३६२

विश्वादिजननत्राणः स्वाहाशक्तिः सकीलकः ॥

३६३ ३६४

अमृताब्धिकृतावासो मदघूर्णितलोचनः ॥ ६२ ॥

३६५ ३६६ ३६७

उच्छिष्टगण उच्छिष्टगणेशो गणनायकः ॥

३६८ ३६९ ३७०

सार्वकालिकसंसिद्धि र्नित्यशैवो दिगंबरः ॥ ६३ ॥

३७१ ३७२ ३७३

अनपायोनंतदृष्टि रप्रमेयो जरामरः ॥

३७४ ३७५. ३७६ ३७७

अनाविलोप्रतिरथो ह्यच्युतो मृत मक्षरम् ॥ ६४ ॥

३७८ ३७९ ३८० ३८१ ३८२ ३८३

अप्रतर्क्यो क्षयो जय्यो नाधारो नामयोमलः ॥

३८४ ३८५ ३८६
अमोघसिद्धिरद्वैत मघोरो प्रमितान्ननः ॥६५॥
३८७ ३८८ ३८९
अनाकारोब्धि भूम्यग्नि बलघ्नो व्यक्तलक्षणः ।
३९० ३९१
आधारपीठ आधार आधाराधेयवर्जितः ॥६६॥
३९२ ३९३ ३९४
आखुकेतन आशापूरक आखुमहारथः ।
३९५ ३९६
इक्षुसागरमध्यस्थः इक्षुभक्षणलालसः ॥६७॥
३९७ ३९८
इक्षुचापातिरेकश्री रिक्षुचापनिषेवितः ।
३९९ ४००
इन्द्रगोप समानश्री रिन्द्रनील समद्युतिः ॥६८॥
४०१ ४०२
इंदीवरदलश्याम इंदुमंडलनिर्मलः ॥६९॥
४०३ ४०४ ४०५ ४०६
इध्मप्रिय इडाभाग इडाधामेंदिराप्रियः ।
४०७ ४०८
इक्ष्वाकुविघ्नविध्वंसी इतिकर्तव्यतेप्सितः ॥७०॥
४०९ ४१० ४११ ४१२
ईशानमौलि रीशान ईशानसुत ईतिहा ।
४१३ ४१४
ईषणात्रयकल्पांत ईहामात्र विवर्जितः ॥७१॥
४१५ ४१६ ४१७
उपेंद्र उडुभृन्मौलि रुंडेरक बलिप्रियः ।
४१८ ४१९ ४२० ४२१
उन्नतानन उत्तुंग उदार त्रिदशाग्रणीः ॥७२॥
४२२ ४२३ ४२४
ऊर्जस्वनूष्मलमद ऊहापोहदुरासदः ।
४२५ ४२६
ऋग्यजुः सामसंभूति ऋद्धिसिद्धि प्रवर्तकः ॥७३॥
४२७ ४२८
ऋजुचित्तैकसुलभ ऋणत्रय विमोचकः ।
४२९ ४३०
लुप्तविघ्नस्वभक्तानां लुप्तशक्तिः सुरद्विषाम् ॥७४॥

४३१ ४३२
लुप्तश्रीर्विमुखार्चानां लूताविस्फोटनाशनः ।
४३३ ४३४
एकारपीठमध्यस्थ एकपादकृतासनः ॥७५॥
४३५ ४३६
एजिताखिलदैत्यश्री रेजिताखिलसंश्रयः ।
४३७ ४३८ ४३९
ऐश्वर्यनिधि रैश्वर्य मैहिकामुष्मिकप्रदः ॥७६॥
४४० ४४१
ऐरंमदसमोन्मेष ऐरावतनिभाननः ।
४४२ ४४३ ४४४
ॐकारवाच्य ओंकार ओजस्वानौषधीपतिः ॥७७॥
४४५ ४४६ ४४७
औदार्यनिधि रौद्धत्यधुर्य औन्नत्यनिःस्वनः ।
४४८ ४४९
अंकुशःसुरनागानां अंकुशःसुरविद्विपाम् ॥७८॥
४५०
अःसमस्तविसर्गाणां पदेषुपरिकीर्त्तितः ।
४५१ ४५२ ४५३ ४५४
कमंडलुधरः कल्पः कपर्दी कलभाननः ॥७९॥
४५५ ४५६ ४५७
कर्मसाक्षी कर्मकर्त्ता कर्माकर्मफलप्रदः ।
४५८ ४५९
कदम्बगोलकाकारः कुष्मांड गणनायकः ॥८०॥
४६० ४६१ ४६२ ४६३
करुण्यदेहः कपिलः कथकः कटिसूत्रभृत् ।
४६४ ४६५ ४६६ ४६७ ४६८
खर्वः खड्गप्रिय खड्गः खातान्तस्थः खनिर्मलः ।८
४६९ ४७० ४७१
खल्वाटश्रृंगनिलयः खट्वांगी खदुरासदः ।
४७२ ४७३ ४७४ ४७५
गुणाढ्यो गहनो गस्थो गद्यपद्य सुधार्णवः ॥८२॥
४७६ ४७७ ४७८
गद्य गानप्रियोगर्जो गीतगीर्वाणपूर्वजः ।
४७९ ४८० ४८१
गुह्याचाररतो गुह्यो गुह्यागमनिरूपितः ॥८३॥

४८२ ४८३ ४८४ ४८५
गुहाशयो गुहाब्धिस्थो गुरुगम्यो गुरोर्गुरुः ।
४८६ ४८७ ४८८
घंटाघर्घरिकामाली घटकुंभो घटोदरः ॥८४॥
४८९ ४९० ४९१
ङकारवाच्यो ङकारो ङकाराकार शुंडभृत् ।
४९२ ४९३ ४९४ ४९५
चंडश्चंडेश्वर सुहृच्चंडेश श्चंडविक्रमः ॥ ८५ ॥
४९६ ४९७
चराचरपति श्चिंतामणिश्चर्वणलालसः ।
४९८ ४९९ ५००
छंदश्छंदो वपुश्छंदो दुर्लक्ष्यश्छंदविग्रहः ॥८६॥
५०१ ५०२ ५०३ ५०४
जगद्योनिर्जगत्साक्षी जगदीशो जगन्मयः ।
५०५ ५०६ ५०७ ५०८
जपो जपपरो जप्यो जिह्वासिंहासनप्रभुः ॥ ८७ ॥
५०९ ५१०
झलझ्झल्लोल्ल सद्दान झंकारिभ्रमराकुलः ।
५११ ५१२
टंकारस्फारसंराव ष्टंकारिमणिनूपुरः ॥८८॥
५१३ ५१४
ठद्वयीपल्लवांतस्थः सर्वमंत्रैकसिद्धिदः ।
५१५ ५१६ ५१७ ५१८
डिंडमुंडो डाकिनीशो डामरो डिंडिमप्रियः ॥८९॥
५१९ ५२० ५२१
ढक्कानिनादमुदितो ढौंको ढुंढिविनायकः ॥९०॥
५२२ ५२३
तत्वानापरमंतत्वं तत्वंपदनिरूपितः ।
५२४ ४२५ ५२६
तारकांतरसंस्थान स्तारक स्तारकांतकः ॥९१॥
५२७ ५२८ ५२९ ५३०
स्थाणुः स्थाणुप्रियः स्थाता स्थावरंजंगमंजगत् ।
५३१ ५३२ ५३३
दक्षयज्ञोप्रमथनो दातादानवमोहनः ॥९२॥
५३४ ५८५ ५३६ ५३७
दयावान् दिव्यविभव दंडभृद्दंडनायकः ।

५३८ ५३९

दंतप्रभिन्नाभ्रमालो दैत्यवारणदारणः ॥६३॥

५४० ५४१

दंष्ट्रालग्नद्विपघटो देवार्थनृगजाकृतिः ।

५४२ ५४३ ५४४ ५४५ ५४६

धनं धनपतिर्धन्यो धनदो धरणीधरः ॥६४॥

५४७ ५४८ ५४९ ५५०

ध्यानैकप्रकटोध्येयो ध्यानं ध्यानपरायणः ॥६५॥

५५१ ५५२ ५५३ ५५४

नंद्यो नंदिप्रियो नादो नादमध्येप्रतिष्ठितः ।

५५५ ५५६ ५५७ ५५८ ५५९

निष्कलो निर्मलो नित्यो नित्यानित्यो निरामयः ॥६६ ।

५६० ५६१ ५६२ ५६३

परंव्योम परंधाम परमात्मा परपदम् ।

५३४ ५६५ ५६६

परात्परः पशुपतिः पशुपाश विमोचकः ॥६७॥

५६७ ५६८ ५६९ ५७०

पूर्णानंदः परानंदः पुराण पुरुषोत्तमः ।

५७१ ५७२

पद्मप्रसन्ननयनः प्रणताज्ञानमोचनः ॥६८॥

५७३ ५७४ ५७५

प्रमाणः प्रत्ययातीतः प्रणतार्तिनिवारणः ।

५७६ ५७७ ५७८ ५७९

फलहस्तः फणपतिः फेत्कारः फाणितप्रियः ॥६९॥

५८० ५८१

बाणार्चितांघ्रियुगलो बालकेलिकुतूहली ।

५८२ ५८३ ५८४ ५८५

ब्रह्म ब्रह्मार्चितपदो ब्रह्मचारी बृहस्पतिः ॥१००॥

५८६ ५८७ ५८८ ५८९

बृहत्तमो ब्रह्मपरो ब्रह्मण्यो ब्रह्मवित्प्रियः ।

५९० ५९१

बृहन्नादाग्र्य चीत्कारो ब्रह्मांडावलिमेखलः ॥१०१॥

५९२ ५९३ ५९४ ५९५

भ्रूक्षेपदत्तलक्ष्मीको भर्गो भद्रो भयापहः ।

५९६ ५९७ ५९८ ५९९

भगवान् भक्तिसुलभो भूतिदो भूतिभूषणः ॥१०२॥

६०० ६०१ ६०२ ६०३
भव्यो भूतालयो भोगदाता भ्रूमध्यगोचरः ।
६०४ ६०५ ६०६ ६०७ ६०८
मंत्रो मंत्रपति मंत्री मदमत्त मनोरमः ॥ १०३ ॥
६०९ ६१० ६११ ६१२
मेखलावान् मंदगति र्मतिमत् कमलेक्षणः ।
६१३ ६१४ ६१५ ६१६
महाबलो महावीर्यो महाप्राणो महामनाः ॥ १६४ ॥
६१७ ६१८ ६१९ ६२०
यज्ञो यज्ञपति र्यज्ञगोप्ता यज्ञफलप्रदः ।
६२१ ६२२ ६२३ ६२४
यशस्करो योगगम्यो याज्ञिको याजकप्रियः ॥ १०५ ॥
६२५ ६२६ ६२७ ६२८ ६२९
रसो रसप्रियो रस्यो रंजको रावणार्चितः ।
६३० ६३१ ६३२ ६३३
रक्षो रक्षाकरो रत्नगर्भो राज्यसुखप्रदः ॥ १०६ ॥
६३४ ६३५ ६३६ ६३७ ६३८
लक्ष्य लक्षप्रदो लक्ष्यो लयस्थो लड्डुकप्रियः ।
६३९ ६४० ६४१ ६४२
लानप्रियो लास्यपरो लाभकृ ल्लोकविश्रुतः ॥ १०७ ॥
६४३ ६४४ ६४५ ६४६
वरेण्यो वह्निवदनो वंद्यो वेदांतगोचरः ।
६४७ ६४८ ६४९ ६५०
विकर्ता विश्वतश्चक्षु विधाता विश्वतोमुखः ॥ १०८ ॥
६५१ ६५२ ६५३
वामदेवो विश्वनेता वज्रिवज्रनिवारणः ।
६५४ ६५५ ६५६ ६५७
विश्वबंधन विष्कंभाधारो विश्वेश्वरः प्रभुः ॥ १०९ ॥
६५८ ६५९
शब्दब्रह्म शमप्राप्यः शंभुशक्तिगणेश्वरः ।
६६० ६६१ ६६२ ६६३
शास्ता शिखाग्रनिलयः शरण्यः शिखरीश्वरः ॥ ११० ॥
६६४ ६६५ ६६६
षड्ऋतु कुसुमस्रग्वी षडाधारः षडक्षरः ।
६६७ ६६८ ६६९
संसारवैद्यः सर्वज्ञः सर्वभेषज भेषजम् ॥ १११ ॥

६७० ६७१
सृष्टि स्थितिं लयक्रीडः सुरकुंजरभेदनः ।

६७२ ६७३
सिंदूरितमहाकुंभः सदसद्व्यक्तिदायकः ॥ ११२ ॥

६७४ ६७५ ६७६ ६७७
साक्षी समुद्रमथनः स्वसंवेद्यः स्वदक्षिणः ।

६७८ ६७९ ६८० ६८१
स्वतंत्रः सत्यसंकल्पः सामगानरतः सुखी ॥ ११३ ॥

६८२ ६८३ ६८४ ६८५
हंसो हस्तिपिशाचीशो हवनं हव्यकव्यभुक् ।

६८६ ६८७ ६८८ ६८९
हव्यं हुतप्रियो हर्षो हृल्लेखामन्त्रमध्यगः ॥ ११४ ॥

६९० ६९१ ६९२
क्षेत्राधिपः क्षमाभर्त्ता क्षमापरपरायणम् ।

६९३ ६९४ ६९५
क्षिप्रक्षेमकरः क्षेमानंदः क्षोणीसुरद्रुमः ॥ ११५ ॥

६९६ ६९७ ६९८ ६९९
धर्म प्रदोर्थदः कामदाता सौभाग्यवर्द्धनः ।

७०० ७०१ ७०२
विद्याप्रदो विभवदो भुक्तिमुक्तिप्रदायकः ॥ ११६ ॥

७०३ ७०४ ७०५
आभिरूप्यकरो वीरश्रीप्रदो विजयप्रदः ।

७०६ ७०७ ७०८
सर्ववश्य करोगर्भ दोषहापुत्रपौत्रदः ॥ ११७ ॥

७०९ ७१० ७११ ७१२
मेधादः कीर्त्तिदः शोकहारी दौर्भाग्यनाशनः ।

७१३ ७१४ ७१५
श्रीशोकहारी दौर्भाग्यनाशनः सर्वशक्तिभृत् ॥ ११८ ॥

७१६ ७१७ ७१८
प्रतिवादि मुखस्तंभो रुष्टचित्तप्रसादनः ।

७१९ ७२०
पराभिचारशमनो दुःखभंजनकारकः ॥ ११९ ॥

७२१
लवत्रुटिः कलाकाष्टानिमेषस्तत्परः क्षणः ।

७२२ ७२३ ७२४ ७२५ ७२६ ७२७
घटी मुहूर्त प्रहरो दिवा नक्त महर्निशम् १२० ॥

७२८ ७२९ ७३० ७३१ ७३२ ७३३ ७३४
पक्षो मासो यनं वर्ष युग कल्पो महालयः।
७३५ ७३६ ७३७ ७३८ ७३९ ७४० ७४१
राशि स्तारा तिथि र्योगो वारः करण मंशकम् ॥ १२१ ॥
७४२ ७४३ ७४४ ७४५ ७४६ ७४७
लग्न होरा कालचक्रं मेरुः सप्तर्षयो ध्रुवः।
७४८ ७४९ ७५० ७५१ ७५२ ७५३ ७५४ ७५५
राहुः मंदः कवि र्जीवो बुधो भौम शशि रविः ॥ १२२ ॥
७५६ ७५७ ७५८ ७५९ ७६०
कालः सृष्टि स्थिति र्विश्वं स्थावरं जंगमं चयत्।
७६१ ७६२ ७६३ ७६४ ७६५ ७६६ ७६७ ७६८
भू रापो ग्नि र्मरुद्व्योमा हकृतिः प्रकृतिः पुमान् ॥ १२३ ॥
७६९ ७७० ७७१ ७७२ ७७३ ७७४ ७७५
ब्रह्मा विष्णुः शिवो रुद्रः ईशः शक्ति सदशिवः।
७७६ ७७७ ७७८ ७७९ ७८० ७८१
त्रिदशाः पितरः सिद्धा यक्षा रक्षांसि किन्नराः ॥ १२४ ॥
७८२ ७८३ ७८४ ७८५ ७८६ ७८७
साध्या विद्याधरा भूता मनुष्याः पशवः खगाः।
७८८ ७८९ ७९० ७९१ ७९२ ७९३ ७९४
समुद्राः सरितः शैला भूतं भव्य भवोद्भवः ॥ १२५ ॥
७९५ ७९६ ७९७ ७९८ ७९९ ८००
सांख्यं पातंजलं योगः पुराणानि श्रुति स्मृतिः।
८०१ ८०२ ८०३ ८०४
वेदांगानि सदाचारो मीमांसा न्यायविस्तरः ॥ १२६ ॥
८०५ ८०६ ८०७ ८०८ ८०९
आयुर्वेदो धनुर्वेदो गांधर्वं काव्य नाटकम्।
८१० ८११ ८१२ ८१३
वैखानसं भागवतं सात्वतं पांचरात्रकम् ॥ १२७ ॥
८१४ ८१५ ८१६ ८१७
शैवं पाशुपतं कालमुखं भैरव शासनम्।
८१८ ८१९ ८२० ८२१ ८२२
शाक्तं वैनायकं सौरं जैन मार्हत संहिता ॥ १२८ ॥
८२३ ८२४ ८२५ ८२६
सद सद्व्यक्त मव्यक्तं सचेतन मचेतनम्।
८२७ ८२८ ८२९ ८३० ८३१ ८३२ ८३३ ८३४
बंधो मोक्षः सुखं भोगो योगः सत्य मणुर्महान् ॥ १२९ ॥

स्वस्ति हुंफट् स्वधा स्वाहा श्रौषड् वौषड् वषणनमः ।
ज्ञानं विज्ञान मानंदो बोधः संविच्छमोयमः ॥ १३० ॥
एक एकाक्षराधार एकाक्षर परायणः ।
एकाग्रधीरेकवीरः एकानेक स्वरूपधृक् ॥ १३१ ॥
द्विरूपो द्विभुजो द्व्यक्षो द्विरदो द्वीपरक्षकः ।
द्वैमातुरो द्विवदनो द्वंद्वातीतो द्वयातिगः ॥ १३२ ॥
त्रिधामा स्त्रिकर स्त्रेता त्रिवर्गफलदायकः ।
त्रिगुणात्मा त्रिलोकादि स्त्रिशक्तिशस्त्रिलोचनः ॥ १३३ ॥
चतुर्बाहु श्चतुर्दंत श्चतुरात्मा चतुर्मुखः ।
चतुर्विधोपायमय श्चतुर्वर्णा श्रमाश्रयः ॥ १३४ ॥
चतुर्विधवचोवृत्ति परिवर्त प्रवर्त्तकः ॥
चतुर्थीपूजनप्रीत श्चतुर्थीतिथिसंभवः ॥ १३५ ॥
पंचाक्षरात्मा पंचात्मा पंचास्यः पंचकृत्यकृत् ।
पंचाधारः पंचवर्णः पंचाक्षरपरायणः ॥ १३६ ॥
पंचतालः पंचकरः पंचप्रणवभावितः ।
पंचब्रह्ममयस्फूर्तिः पंचवारणवारितः ॥ १३७ ॥
पंचभक्ष्य प्रियःपंचबाणः पंचशिवात्मकः ।
षट्कोणपीठः षट्चक्र धामाषड्ग्रंथिभेदकः ॥ १३८ ॥

१०० १०१
षडध्वध्वांत विध्वंसी षडंगुल महाह्रदः ।
१०२ १०३ १०४
षण्मुखः षण्मुखभ्राता षट्शक्तिपरिवारितः ॥ १३६ ॥
१०५ १०६
षड्वैर वर्ग विध्वंसी षडूर्मि भय भंजनः ॥
१०७ १०८ १०९
षट्तर्कदूरः षट्कर्म निरतः षड्रसाश्रयः ॥ १४० ॥
११० १११
सप्तपातालचरणः सप्तद्वीपोरुमण्डलः ।
११२ ११३
सप्त स्वर्लोकमुकुटः सप्तसप्तिवरप्रदः ॥ १४१ ॥
११४ ११५
सप्तांगराज्यसुखदः सप्तर्षिगणमण्डितः ।
११६ ११७ ११८
सप्तछंदो निधिः सप्त होतासप्तस्वराश्रयः ॥ १४२ ॥
११९ १२०
सप्ताब्धि केलिकासारो सप्तमातृनिषेवितः ।
१२१ १२२
सप्तच्छन्दो मोदमदः सप्तछन्दोमखप्रभुः ॥ १४३ ॥
१२३ १२४
अष्टमूर्तिर्ध्येयमूर्ति रष्टप्रकृति कारणम् ।
१२५ १२६
अष्टांगयोगफलभू रष्टपत्रांबुजासनः ॥ १४४ ॥
१२७ १२८
अष्टशक्ति समृद्धश्री रष्टैश्वर्य प्रदायकः ।
१२९ १३०
अष्टपीठोपपीठश्री रष्टमातृ समावृतः ॥ १४५ ॥
१३१ १३२ १३३
अष्टभैरवसेव्योष्टवसुवंद्यष्टमूर्त्तिभृत् ।
१३४ १३५
अष्टचक्रस्फूरन्मूर्त्ति रष्टद्रव्यहविः प्रियः ॥ १४६ ॥
१३६ १३७
नवनागासनांध्यासी नवनिध्यनुशासिता ।
१३८ १३९
नवद्वारपुराधारो नवद्वारनिकेतनः ॥ १४७ ॥

१४० १४१
नवनारायणस्तुत्यो नवदुर्गानिषेवितः ।
१४२ १४३
नवनाथ महानाथो नवनागविभूषणः ॥ १४८ ॥
१४४ १४५
नवरत्न विचित्रांगो नवशक्ति शिरोधृतः ।
१४६ १४७ १४८
दशात्मको दशभुजो दशदिक्पतिवंदितः ॥ १४९ ॥
१४९ १५० १५१
दशाध्यायो दशप्राणो दशेन्द्रिय नियामकः ।
१५२ १५३
दशाक्षरमहामन्त्रो दशाशाव्यापि विग्रहः ॥ १५० ॥
१५४ १५५
एकादशमहारुद्रै स्स्तुतएकादशाक्षरः ।
१५६ १५७
द्वादशोद्दंडदोर्दंडो द्वादशांत निकेतनः १५१ ॥
१५८
त्रयोदशभिदाभिन्नो विश्वेदेवाधि दैवतम् ।
१५९ १६०
चतुर्दशेन्द्रवरद श्चतुर्दशमनुप्रभुः ॥ १५२ ॥
१ १६२
चतुर्दशादि विद्याढय श्चतुर्दश जगत्प्रभुः ।
१६३ १६४
सामपंचदशः पंचदशी शीतांशु निर्मलः ॥ १५३ ॥
१६५ १६६
षोडशाधारनिलयः षोडशस्वरमातृकः ।
१६७ १६८
षोडशांतपदावासः षोडषेन्दुकलात्मकः ॥ १४५ ॥
१६९ १७०
कला सप्तदशी सप्तदशः सप्तदशाक्षरः ।
१७१ १७२
अष्टादशद्वीपपति रष्टादशपुराणकृत् ॥ १५५ ॥
१७३ १७४
अष्टादशौषधिसृष्टि रष्टादशविधिस्मृतः ।
१७५ १७६
अष्टादशलिपिव्यष्टि समष्टि ज्ञानकोविदः ॥ १५६ ॥

१७७ १७८
एकविंशः पुमानेक विंशत्यंगुलिपल्लवः।
१७९ १८०
चतुर्विंशतितत्त्वात्मा पंचविंशाख्यपूरुषः॥ १५७॥
१८१ १८२
सप्तविंशतितारेशः सप्तविंशति योगकृत्।
१८३ १८४
द्वात्रिंशद्भैरवाधीश श्चतुस्त्रिंशन्महाहूदः॥ १५८॥
१८५ १८६
षट्त्रिंशत्तत्वसंभूति रष्टत्रिंशत्कलातनुः।
१८७ १८८
नमदेकोनपंचाश न्मरुद्वर्गोनिरर्गलः॥ १५९॥
१८९ १९०
पंचाशदक्षरश्रेणी पंचाशद्रुद्रविग्रहः।
१९१ १९२
पंचाशद्विष्णुशक्तीशः पंचाशन्मातृकालयः॥ १६०॥
१९३ १९४
द्विपंचाशद्वपुः श्रेणी त्रिषष्ट्यक्षरसंश्रयः।
१९५ १९६
चतुष्पष्ट्यर्ण निर्णेता चतुःषष्टि कलानिधिः॥ १६१॥
१९७
चतुःषष्टि महासिद्ध योगिनीवृन्दवन्दितः।
१९८
अष्टषष्टिमहातीर्थ क्षेत्र भैरव भावनः॥ १६२॥
९९९ १०००
चतुर्नवतिमन्त्रात्मा षण्णवत्यधिकःप्रभुः।
१००१ १००२ १००३
शतानन्दः शतधृतिः शतपत्रायतेक्षणः॥ १६३॥
१००४ १००५ १००६
शतानीकः शतमखः शतधार वरायुधः।
१००७ १००८
सहस्रपत्रनिलयः सहस्रफणभूषणः॥ १६४॥
१००९ १०१० १०११
सहस्रशीर्षापुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्।
१०१२ १०१३
सहस्रनामसंस्तुत्यः सहस्राक्षवलापहः॥ १६५॥

१०१४
दशसाहस्रफणिभृत् फणिराजकृतासनः ॥
१०१५
अष्टाशीतिसहस्रौघ-महर्षिस्तोत्रयंत्रितः । १६६ ॥
१०१६ १०१७
लक्षाधीशप्रियाधारो लक्षाधीशमनोमयः ॥
१०१८ १०१९
चतुर्लक्षजपप्रीत श्चतुर्लक्षप्रकाशितः ॥ १६७ ॥
१०२०
चतुराशीति लक्षाणां जीवानां देहसंस्थितः ॥
१०२१ १०२२
कोटिसूर्यप्रतीकाशः कोटिचन्द्रांशुनिर्मलः १६८ ॥
१०२३
शिवाभवाध्युष्टकोटि विनायकधुरंधरः ॥
१०२४
सप्तकोटिमहामन्त्र मंत्रितावयवद्युतिः ॥ १६९ ॥
१०२५
त्रयत्रिंशत् कोटि सुर श्रेणीप्रणतपादुकः ॥
१०२६ १०२७
अनंतदेवतासेव्यो ह्यनंतमुनिसंस्तुतः ॥ १७० ॥
१०२८ १०२९ १०३० १०३१
अनंतनामानतश्री रनंतानंत सौख्यदः ॥
ॐ इति वैनायक नाम्नां सहस्रमिमीरितम् ॥ १७१ ॥

इस स्तोत्र का जो कोई ब्राह्म मुहूर्त्त में नित्य पाठ करे, उसके हाथ में इस लोक और परलोक का सब सुख रहता है और आयु आरोग्यता ऐश्वर्य धर्म, शूरवीरता, बल, यश, मेधा, बुद्धि, धीरज, कान्ति, सौभाग्य रूप, सत्य, दया, क्षमा, शान्ति, चतुरता, धर्मात्मापना, जगत् का वश करना, संसार के साथ बात-चीत, वाक्, चातुर्य्य, सभा में पण्डिताई, उदारता, गंभीरता, ब्रह्मवर्चस, उन्नतपना, सत्कुल, शील, प्रताप, वीर्य आर्यता ( सज्जनता ) ज्ञान, विज्ञान, आस्तिकता. धैर्य संसार में अतिशय धन धान्य की वृद्धि, इसके एक बार के जप करने से होते हैं और इसके जप से चार प्रकार के मनुष्य वश होते हैं। राजा, रानी राज पुत्र और मन्त्री जिसके वश करने को इसका जप किया जावे, वह जप करने वाले का दास हो जाता है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष आसानी से सिद्ध होते हैं। शाकिनी, डाकिनी, राक्षस, सर्पादि के भय को हटाने वाला है, साम्राज्य

का सुख देने वाला और सब शत्रुओं का नाश करने वाला है, सब लड़ाइयों का नाश करने वाला, जला हुआ बीज भी उगने लगता है ( इसके जप से उसके उगने के आसार दिखाई देने लगते हैं ) बुरे स्वप्नों को दबाने वाला और नाराज़ मालिक के मन को प्रसन्न करने वाला है। छः कर्म, आठ सिद्धि और तीन काल के ज्ञान का साधन है दूसरा कोई अपने खिलाफ़ कोशिश कर रहा हो जो अर्थात् मूठ वगैरह पर कृत्य हों, उनको शमन करता है, दुश्मन के कुचक्रों का नाश करता है, संग्राम में सबके लिये एक यह ही जय दिलाने वाला है, बंध्यादि सब दोषों का नाश करता है, गर्भ की रक्षा का एक कारण है जहां इस श्री गणेशजी स्तोत्र का नित्य पाठ होता हो वहाँ न तो कभी अकाल पड़ता है न ईतियां न विघ्न आते हैं, जिस घर में इसका जप होता है, वहां लक्ष्मी कभी नष्ट नहीं होती, क्षय रोग को प्रमेह, बवासीर, भगन्दर विशूचिका,फोड़े,फुन्सी. चक्करदार दाद,पथरी,अतिसार, महोदर,कास-श्वास, उदावर्त्त, शूल,शोक,शिर का दर्द,उलटी,हिचकी,गंडमाल, भोजन नहीं रुचना, वात पित्त,कफ, इनमें से दो दो के बिगड़ने से अथवा त्रिदोष से बना हुआ बुखार, आगंतुक, जहर,सर्दी,गर्मी इत्यादि कहे हुए और बिना कहे हुए जो रोग दोष हों वह एक बार के पाठ करने से शमन होते हैं, स्त्री और शूद्र एक बार के पाठ से सिद्धि पाते हैं, शुभ की इच्छा से इस सहस्नाम मन्त्र का जप करना चाहिये जो कोई कामना रखता हो, उसे चाहिये, कि इस श्री महागणपति स्तोत्र का पाठ करे, अपनी इच्छानुसार इस पृथ्वी पर होने वाले सब भोगों को भोगेगा और मनोरथों का दिव्य फल भोगता हुआ स्वर्गीय सुन्दर विमानों में बैठकर चन्द्रलोक,इन्द्रलोक, सूर्यलोक ब्रह्मलोक,शिवलोक में घूमेगा, अपने अभीष्ट फल अपने मित्रों और बन्धुओं के साथ भोगता हुआ श्रीगणेशजी का सेवक बनकर श्री महागणपति का प्रिय होकर नंदीश्वरादि सब गणों के साथ खुशी मनावेगा, पार्वती और शिवजी की कृपा से पुत्र के सदा लाड़ चाव में शिव भक्त भी गणेशजी के वरदान से पूर्ण काम होगा, जाति में बड़ा माना जावेगा, धर्म में श्रेष्ठ माना जावेगा और सब भूमि का स्वामी होगा, जो कोई श्री गणेशजी की भक्ति सहित बिना कामना के नित्य जप करेगा, वह परमयोग सिद्धि को प्राप्त करके ज्ञान और वैराग्य में होता

हुआ सदानन्द रूप परम आनन्द ज्ञान के होने पर इस संसार से उत्तीर्ण होकर फिर वापिस नहीं आवेगा। श्रीगणेश लोक में लीन होकर रमण करेगा, सदा निवृत रहेगा, जो मनुष्य इन नामों से हवन करेगा, अर्चन पूजन करेगा, उसके राजा वश होंगे और शत्रु दास हो जावेंगे, सब मन्त्र सिद्ध होंगे और सब सिद्धियां उसको सुलभ होंगी। श्रीगणेश जी का कथन है, कि यह स्तोत्र मुझे मूल मंत्र से भी अधिक प्रिय है, भादों के महिने में सुदी चौथ को जिस दिन मेरा जन्म है दूर्वा से इन नामों से विधिवत् पूजन करै और तर्पण करे, खास कर आठ द्रव्यों से भक्ति समेत हवन करे तो उसके सब ईप्सित फल सिद्ध होते हैं, इसमें संदेह नहीं। इस स्तोत्र का पाठ करे, इसे पढ़े,पढ़ावे। सुने, सुनावे। इससे पूजन करने से तथा ध्यान करने से नहीं मिलने वाली चीज भी मिल जाती है। इस लोक में और परलोक में सब ऐश्वर्यों का देने वाला है जो लोग स्वच्छ रहना चाहें, इस स्तोत्र को धारण करें उनकी रक्षा शिवजी के गण करते हैं, पुस्तक में लिखे हुए स्तोत्र की पूजा मन्त्र की तरह करे तो उसके पास सदा सर्वोत्तमा लक्ष्मी ठहरती है। किसी दान, व्रत, तीर्थ, यज्ञ से वह फल प्राप्त नहीं होता जो जल्दी से श्री गणेश सहस्र नाम के एक वार पाठ करने से होता है। प्रातः काल सूर्योदय के समय सांयकाल मध्याह्न में अथवा त्रिकाल सदा इस सहस्रनाम का जो कोई पाठ करता है वह अवश्य ऐश्वर्य पाता है, वाक् पटु होता है वडी कीर्ति पाता है संसार के विघ्न को नष्ट करता है, संसार को वश करता है, बहुत काल तक उसके सन्तान बढ़ती है जो कोई दरिद्र हो वह भी एक चित्त होकर नियम से रह कर और प्रमाण से भोजन करता हुआ चार मास तक श्री गणेश जी के पूजन में तत्पर रहकर जप करे तो सात जन्म के दरिद्र को दूर करके बड़ी लक्ष्मी पाता है यह ही परमेश्वर की आज्ञा है, आयुष्य रोग से निवृत्ति बहुत निर्मल कुल आर्त्त दान संपत्ति सदा रहने वाली कीर्ति, नई कांति जो बिना बनावट श्रेष्ठ है श्रेष्ठ और गुणवान् पुत्र होंगे, गुणवान् और आज्ञाकारी स्त्री होती है जो इस गणपति के स्तोत्र का नित्य पाठ करता है उसके हाथ में सब कुछ होता है।

ॐ गणंजयो गणपति र्हेरंबो धरणी धरः॥
महा गणपति लक्ष्म प्रदः क्षिप्रप्रशादनः॥१॥

अमोघ सिद्धि रमितो मंत्र श्चिंतामणिर्निधिः।
सुमङ्गलो बीजमाशा पूरको वरदः शिवः॥ २॥
काश्यपोनंदनो वाचा सिद्धो ढुंढिविनायकः॥
मोदकैरेभि रत्रैक विंशत्या नामभिः पुमान्॥ ३॥

जो कोई ऊपर लिखे हुए इक्कीस नामों से भक्तिपूर्वक उपायनदे उस पर श्रीगणेशजी प्रसन्न होते हैं अपनी इष्ट-सिद्धि के लिये वर्ष भर श्रीगणेशजी में मन लगाकर उनका पूजन करता है और उनकी स्तुति करता है, सहस्र नाम से स्तुति करता है, उससे भी श्रीगणेशजी अवश्य प्रसन्न होते हैं।

नमोनमः सुरवर पूजितांघ्रये नमो नमो निरूपम मंगलात्मने।
नमो नमो विपुलकरैकसिद्धये नमो नमः करिकलभाननायते॥ १
गणपाजेश[1] हेरंब[2] द्वैमातुर[3] गजानन[4]।
भालेंदो[5] धूमकृतिनो[6] लम्बोदर[7] विनायक[8]॥ २॥
ब्रह्मैकदंत[9] विघ्नेश[10] विघ्नो[11] कपिल[12] निर्गुण[13]।
कालाद्य[15] सिद्धिदानंत त्राहिमां भवसागरात्। ३॥
किंकिणीगणरणित स्तवचरणः प्रगटित गुरुमिति चारित्रगणः।
मदजल लहरी करित कपोलः शमयतु दुरितं गणपति नृपनामा। ४॥

श्रेष्ठ देवों ने जिन की पूजा की है, जिनकी उपमा नहीं दी जा सकती, जो मंगलात्मा हैं, जिनकी एक बड़ी सूंड़ सिद्धि देने वाली है, छोटे सुन्दर हाथी के बच्चे का सा जिनका चहरा है, उन श्रीगणेशजी को बारम्बार नमस्कार है। उपरोक्त १५ नाम जिनके हैं ऐसे श्रीगणेशजी मुझे भवसागर से बचाओ। आपके चरण बजते हुए घूँघरों से सुशोभित हैं तथा आपका चरित्र सच्चरित्रों का उपदेश दे रहा है और आपके कपोलों पर मद जल की लहरैं बह रही हैं, ऐसे नृपनामा गणपति मेरे पापों को शमन करैं॥ २२३॥

* इति समाप्तम् *

श्रीगणेशायनमः ।

# श्री गणेशपुराण भाषानुवाद का

# शुद्धाशुद्ध पत्र

| पृष्ठ संख्या | लकीर संख्या | अशुद्ध | शुद्ध | नोट |
|---|---|---|---|---|
| भूमिका | ६ | सादृश् | सादृश्य | |
| | १२ | कराना | करना | |
| | २० | आया। अतएव | आया अतएव | इस पर ध्यान देवें कि। विश्राम चिन्ह जहाँ वाक्य पूरा न हो कैसे दिए गए हैं। |
| | २२ | गया है। आशा है | गया है आशा है | |
| | २४ | खंड को आठ | पुराण को पांच | जो काम आप खुद पांच भागों में कर रहे हैं उसके विषय में ही अशुद्धि हैं। |
| ,, (ख) | १३ | खारहा हूँ। कल्याण | खारहा हूँ कल्याण | |
| सूची ख | ७ | अहिल्या | अहल्या | यह अशुद्धि सब जगह है |
| | १७ | स्तात्र | स्तोत्र | |
| | २३ | ११६—१० | ११६—१४१ | |
| १ | ५ | सोमकीर्तकांत | सोमकांत | प्रथम अध्याय का ही शीर्षक लापरवाही से छापा है |
| ४ | १६ | का | को | |
| ५ | २१ | करैं | करे | |
| ७ | १४ | मुग्रर्वी | मुग्र | |
| ६ | २० | करें, किन्तु ऋतु | करें ऋतु | किन्तु अनावश्यक है |
| १० | ३ | सुख | मुख | |
| | ४ | राखें | रहें | |
| | २१ | प्रिया | प्रिय | |
| ११ | ३ | शत्रुओंको नष्ट करने वालेको राज्याभिपेक के लिये विधि पूर्वक श्रीगणेशजी का | राज्याभिपेक के लिये शत्रुओं को नष्ट करने वाले श्रीगणेशजी का विधि पूर्वक | |
| ५८ | ७ | बोला | से कहा | |
| ५९ | ६ | मुसाहिबों, ऐसा | मुसाहिबो, ऐसी | |
| १०१ | २९ | इति श्रीगणेश पुराणे उपासना खंडे आचा- | ( कुछ नहीं ) ॥ ५० ॥ ३ ॥ | मैंने यह नियम रखा है कि मूल के श्लोकों की संख्या |
| ११२ | २ | | | |

| पृष्ठ संख्या | लकीर संख्या | अशुद्ध | शुद्ध | नोट |
|---|---|---|---|---|
| | | रादिनिरूपण नाम तृतीयोध्याय: | | देकर प्रत्येक अध्याय का नंबर प्रत्येक अध्याय के अखीर में लिख दिया इस प्रकार दूसरे अध्यायके अखीर में ३१॥२॥ और तीसरे के में ॥५०॥३॥ होना चाहिये इतिश्रीआदिनहीं होनाचाहिये |
| | १६ | के | में | |
| १२ | ८ | रखना वे आप | रखना आप | |
| | २१ | हाल राजा | हाल कहने वाले राजा | |
| १४ | ५ | इतिश्री आदि नहीं | ॥३८॥४॥ | |
| | १४ | मैं आप, उसकी | मैं और आप, उनकी | |
| १५ | २१ | बोवसिरी | मौलसिरी | |
| १७ | १५ | | ॥ ४६ ॥ ५ ॥ | अध्याय के अखीर में |
| २० | ३ | कथा की | कथा को | |
| | ८ | ऊगने | उगने | |
| | १८ | ढापे, इकलौता | बुढ़ापे, इकलौते | |
| २१ | ८ | कट्ठे | इकट्ठे | |
| | १४ | न सहा | नहीं सहा | |
| | १६ | महाजनों को देखकर तुम | तुमको देखकर महाजन | |
| | २० | लगते | लगे | |
| २१ | २२ | पाटागोहल्ली | पाटागोह | |
| | २८ | पहुँचादी | पहुंचा दिये | |
| | २६ | ,, ( कामा ) | नहीं चाहिये | |
| २२ | १८ | | ॥ ३४ ॥ ६ ॥ | अध्याय के अखीर में |
| २५ | १४ | ॥ ६ ॥ ४१ ॥ | ॥ ४१ ॥ ६ ॥ | |
| २६ | १ | ( बालक ) | बालक | ब्रैकेट अनावश्यक है |
| | १४ | ( एक वृक्ष की तरफ इशारा करके) | एक वृक्ष की तरफ इशारा करके | ,, |
| | १५ | खोकले | खोखले | |
| २७ | १३ | मको | तुमको | |
| | २३ | सकता | सकते | |
| २८ | ६ | ॥ ६ ॥ ३६ ॥ | ॥ ३६ ॥ ६ ॥ | |
| २६ | ६ | इत्यादकों | इत्यादि को | |
| | २१ | स्वाम–कार्तिक | स्वामिकार्तिक | नाम के बीच ... वश्यक है। |

| पृष्ठ संख्या | लकीर संख्या | अशुद्ध | शुद्ध | नोट |
|---|---|---|---|---|
| ३० | १ | मैं विष्णु | विष्णु | |
| ३१ | ५ | भक्त | भक्ति | |
| | १६ | अच्छी बुद्धि वाला | बुद्धिवाला | (अच्छी) दो बार आया है |
| | २७ | आते | आए | |
| ३२ | १४ | निन्दा करने | निन्दा नहीं करने | |
| | १६ | . | ॥ २८ ॥ ११ ॥ | अध्याय के अखीर में |
| ३४ | १६ | स्वामी में | स्वामी ने | |
| ३५ | २७ | की स्तुति | की हम स्तुति | |
| ३८ | १६ | जगत्के | जगत के | |
| ३८ | १६ | नाना प्रकार सृष्टि | नाना प्रकार की सृष्टि | |
| | २४ | स्वास | श्वास | |
| ३६ | १ | राक्षस की जावे, | राक्षस, की जावे | इन स्थानों पर , का उपयोग ग़लत किया है |
| | २ | वाले अंड होनेवाले | वाले, अंड होने वाले, | |
| | ५ | उसको अंत में | उसके अंत की में | |
| | ८ | वंदे देवं देव देवं | वंदेदेवंदेवदेवं | प्रायः संस्कृत में इस तरह अलहदा अलहदा शब्द लिखना अशुद्ध माना जाता है क्योंकि समासादि द्वारा कई शब्द मिले होतेहैं |
| ४२ | ६ | जंगल | जंगम | |
| ४३ | १७ | हस्थि | हस्ति | |
| ४७ | ८ | पांच जन्य | पांचजन्य | पांचजन्य एक नाम है पांच और जन्य दूर २ नहीं होने चाहिए। |
| | २१ | रखकर | रखदिये | |
| ५८ | १४ | ५६ | ॥ ५६ ॥ २० ॥ | |
| ५६ | २ | स ीप | समीप | |
| | १२ | ॥ ११६ ॥ | × | |
| | २ | थी । इस | थी, इस | विश्राम अनावश्यक है |
| | | है । वह | है वह | ,, ,, |
| | ४ | प्रसिद्ध, कि | प्रसिद्ध है कि | |
| | | सूर्य, प्रकाश को चन्द्र- | सूर्य प्रकाश को, चन्द्र- | , का दुरुपयोग है |
| | १ | मा, अमृत को | मा अमृत को, | |
| | | र्लभ हो वह | दुर्लभ हो मैं वह | |
| | | स्थिति | उपस्थित | |

| पृष्ठ संख्या | लकीर संख्या | अशुद्ध | शुद्ध | नोट |
|---|---|---|---|---|
| ६५ | ७ | ॥ ५७ ॥ | ॥ ५७ ॥ २२ ॥ | अध्याय के अन्त में |
| ६७ | २९ | ॥ ४५ ॥ | ॥४५॥२३ | अध्याय के अन्त में अध्याय का नम्बर होना चाहिये । |
| ६९ | ५ | ॥ १७ ॥ | ॥१७॥२४॥ | ” |
| ७१ | ४ | ॥ ३३ ॥ | ॥३३॥२५॥ | ” |
| | १८ | पढ़ने | बढ़ने | ” |
| ७३ | १० | ॥ ३१ ॥ | ॥३१॥२६॥ | ” |
| ७५ | १० | ॥ २९ ॥ | ॥२९॥२७॥ | ” |
| ७६ | २ | जाता है। स्वयं | जाता है। मुकुन्दा ने कहा स्वयं | दोनों वाक्यों के बीच में मुकुन्दा ने कहा ऐसा होना आवश्यक है वरना अभिप्रायः उलटा होता है । |
| ७७ | ३ | | ॥२७॥२८॥ | अध्याय के अन्त में । |
| ७८ | २२ | ॥ २९ ॥ | ॥२६॥२९॥ | |
| ७८ ७९ | २४,४ १८ २७ | अहिल्या | अहल्या | यह दोनों शब्द जहाँ जहाँ आए हैं अशुद्ध हैं । |
| ७९ | २,१४, १७ | गौत्तम | गौतम | |
| | १८ | निंद्य | निंद्य | |
| ८० | १ | सुश्रुषा | सुश्रूषा | |
| | ४ | नीवी,विस्र' सनादि | नीवी विस्र'सनादि | यह दोनों शब्द पास पास होने चाहिये और बीच में कामा नहीं होना चाहिये । |
| | २१ | ॥ ३२ ॥ | ॥३२॥३०॥ | |
| ८१ | | | | इस सारे पृष्ठ में, कामा की कैसी भरमार है गिनाना कठिन होगया । |
| | ११ | आपको ही जानकर मैंने वैसे ही | आपको जान कर वैसे ही | (ही) और (मैंने) दोनों शब्द नहीं होने चाहिये । |
| ८४ | १८ | बहुतों | बड़ों | |
| ८६ | २८ | | ॥३५॥३२॥ | ,। बे मौके लगाये |
| | २० | ॥ २४ ॥ | ॥२४॥३३॥ | |
| | २२ | तीर्थ वर्णन | तीर्थ का वर्णन | |
| | २४ | षड मंत्र | षडक्षर मन्त्र | |
| ८७ | ९ | बवूंगा | बचूँगा | |

| पृष्ठ संख्या | लकीर संख्या | अशुद्ध | शुद्ध | नोट |
|---|---|---|---|---|
| | १० | पीतल | पीपल | |
| ८६ | १३ | ॥ ४३ ॥ | ॥४३॥३४॥ | |
| ६० | ५ | स्वेच्छाचारिणी | स्वेच्छा चारिणी | |
| ६१ | ३ | मुन | मन | इस पृष्ठ में भी विश्रामों की भरमार है। |
| | १५ | मुण्य | पुण्य | |
| ६२ | १५ | संगति को पाता है ॥४७॥ | सङ्गति को पाता है ॥४७॥३५॥ | |
| ६३ | २१ | गणानात्वादि | गणानांन्त्वादि | अनुस्वार ना के ऊपर आवश्यक है। |
| ६४ | १७ | होऊंगा; शाप | होऊँगा शाप | |
| | २६ | आशक्त | आसक्त | |
| ६५ | २ | " | " | |
| | ११ | इन से | इन्द्र से | |
| | १३ | " | ॥४५॥३६॥ | |
| | १५ | श्रीगणेशजी नाम वर देने वाला होन की कथा | श्रीगणेशजी का नाम वर देने वाले होने की कथा | |
| ६८ | ६ | सिद्धि स्थान | सिद्ध स्थान | |
| | १३ | ॥ ४६ ॥ | ॥४०॥३७॥ | |
| | १८ | गृत्सामद | गृत्समद | |
| १०१ | ७ | ॥ ४६ ॥ | ॥४६॥३८॥ | |
| १०३ | ५ | फले हुए के | फूले हुए के सूले | |
| | ७-८ | सूले दिशा में | दिशाओं में ऐसे | |
| १०४ | ८ | | ॥५७॥३६॥ | |
| १०७ | १६२३ | ॥५६॥ से | × को | पंक्ति १६ में ४६॥अनावश्यक है। |
| १०८ | २ | | ॥५७॥४०॥ | |
| | १५ | आशक्त | आसक्त | |
| | २८ | ॥ २६ ॥ | ॥२६॥४१॥ | |
| १०१ | १८ | गुञ्जार | गूँजा | |
| ११२ | ६ | ॥ ३५ ॥ | ॥३५॥४२॥ | |
| | ६ | से भीम कायनें विप | से भीमकायने, विप | इत्यादि अनेक स्थानों पर, काम का दुरुपयोग है। |
| | ११ | प्राणहारी काल कूटनें | प्राणहारी काल कूटने | |

| पृष्ठ संख्या | लकीर संख्या | अशुद्ध | शुद्ध | नोट |
|---|---|---|---|---|
| | १२ | , से | मैं | |
| | १६ | मारकट | मारकाट | |
| | २४ | काट डाल | काट डाला | |
| | २६ | न | ने | |
| ११३ | २७ | डाटे | डाढें | |
| ११४ | ७ | मथम वगैरहा | प्रथम वगैरह | |
| | ११ | कैलास | कैलाश | |
| | १६ | मिली नहीं । घूमते | मिलीं नहीं घूमते | विश्राम अनावश्य |
| | २२ | ॥ ४७ ॥ | ॥४७॥४३॥ | |
| ११५ | १६ | हुआ और रात | हुआ रात | और अनावश्यक |
| | २० | मुनि मैं | मैं | मुनि ” |
| | २३,२६ | वाले,शिवजी जावो, तो दोगे, इसमें | वाले शिवजी जावो तो दोगे इसमें | बीच के, कामो अनावश्यक |
| ११७ | ६ | ॥ ३५ ॥ | ॥३५॥४४॥ | |
| १२१ | ६ | कराहति ध्वस्तासिंध | कराहति ध्वस्तसिंधु | |
| १२२ | ५ | स्वधुर्निभव | स्वधुंनी भुवः | |
| १२३ | १६ | मदन दंतो | सव्यदंतो | |
| १२५ | ७ | मह द्रवः | महद्रवः | |
| १२६ | ६ | झलइझल्लोल्ल | झलजइल्लोल्ल | |
| | १२ | डिंडमुंडो | डिंडिमुंडो | |
| १३३ | ३ | लग्न | लग्नं | |
| १३३ | ४ | भौमशशि | भौमः शशी | |
| | ६ | ह कृतिः | हं कृतिः | |
| | ७ | शक्तिसदशिवः | शक्तिः सदाशिवः | |
| १३४ | ८ | त्रिशक्तिश | त्रि शक्तीश | |
| १३७ | ४ | द्वात्रिंशद्भैरवां-धीश | द्वात्रिंशद्भैरवा धीश | |
| १४० | १२ | स्वच्छ | स्वच्छंद | |
| | २८ | चिप्र प्रशादनः | चिप्रप्रसादनः | |
| १४१ | ३ | ढुँढि विनायकः | ढुँढिर्विनायकः | |
| | २३ | ॥ २२३ ॥४ | ॥२२३॥४६॥ | |